आप V.I.P. है

मंगल आशीर्वाद
समाधिस्थ परम पूज्य आचार्य 108 श्री विद्याभूषण
सन्मति सागर जी महाराज

एवं

समाधिस्थ परम पूज्य सराकोद्धारक षष्टम पट्टाचार्य
108 श्री ज्ञान सागर जी मुनिराज

रचयित्री
परम विदुषी लेखिका, भारत गौरव,
गणिनी आर्यिका रत्न 105 श्री स्वस्ति भूषण माताजी

-: प्रकाशक :-
श्री स्वस्ति कल्याण समिति (रजि॰)
Website : www.jainswastisandesh.com
Link to Facebook : swastibhushanmataji

परम विदुषी लेखिका, भारत गौरव, गणिनी आर्यिका रत्न 105
श्री स्वस्ति भूषण माता जी संसघ का 27 वाँ पावन वर्षायोग 2022 अतिशय क्षेत्र
पद्मपुरा (बाड़ा) के अन्तर्गत श्रावक संस्कार शिविर के पावन प्रसंग पर प्रकाशित

कृति : आप V.I.P. है
प्रथम संस्करण : 2100 प्रतियाँ
प्रकाशन वर्ष : 2022
न्यौछावर राशि : 50.00 मात्र (साहित्य सृजन हेतु)
प्रकाशक : श्री स्वस्ति कल्याण समिति (रजि.)

पुण्यार्जक परिवार :
स्व. श्री मैना देवी ठोलिया की पुण्य स्मृति में
श्री कैलाश चंद जैन ठोलिया
श्री माणक चंद मीनाक्षी जैन ठोलिया
श्री रमेश चंद दिशा जैन ठोलिया
यश, कुशाग्र, वैभव, रविश एवं समस्त ठोलिया परिवार
मॉडल टाउन, मालवीय नगर, जयपुर

प्राप्ति स्थान :

1. **स्वराज कुमार जैन, अध्यक्ष श्री स्वस्ति कल्याण समिति (रजि.)**
   दूरभाष : 0129-4144329, 9868345768
2. **राहुल जैन, सचिव श्री स्वस्ति कल्याण समिति (रजि.)**
   दूरभाष : 07906062500, 09212515167
3. **श्री जैन साहित्य सदन, लाल मन्दिर, चाँदनी चौक दिल्ली**
   दूरभाष : 09311168299, 011-23253638
4. **श्री आदिनाथ सेवा संस्थान**
   श्री सोनागिर सिद्ध तीर्थ क्षेत्र, दतिया (मध्य-प्रदेश)
5. **श्री 1008 मुनिसुव्रत नाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र स्वस्तिधाम**
   शाहपुरा रोड़, जहाजपुर, जिला भीलवाड़ा, राजस्थान
   दूरभाष : 9784853787

मुद्रक : दिपिशा एंटरप्राइज (दिल्ली)
मो. 9210488047

प्रशांत मूर्ति आचार्य शांतिसागर 'छाणी' और उनकी आचार्य परम्परा

बाल ब्रह्मचारी, प्रशान्तमूर्ति आचार्य 108 श्री शांतिसागर जी महाराज 'छाणी' (उत्तर)

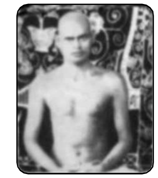

जन्म तिथि – कार्तिक वदी एकादशी, वि.सं. 1945 (31.10.1888)
जन्म स्थान – ग्राम - छाणी, जिला - उदयपुर (राजस्थान)
जन्म नाम – श्री केवलदास जैन
पिता का नाम – श्री भागचन्द जैन
माता का नाम – श्रीमति माणिक बाई जैन
क्षुल्लक दीक्षा – सन् 1922 (वि.सं. 1979), ग्राम गढ़ी, बाँसवाड़ा (राजस्थान)
मुनि दीक्षा – भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी वि.सं. 1980 (23.09.1923), सागवाड़ा जिला-डूंगरपुर (राज.)
आचार्य पद – सन् 1926 (वि.सं. 1983), गिरिडीह (झारखंड)
समाधिमरण – ज्येष्ठवदी दशमी (वि.सं. 2001) 17 मई, 1944, सागवाड़ा डूंगरपुर (राज.)

परम पूज्य प्रथम पट्टाचार्य 108 श्री सूर्यसागर जी महाराज

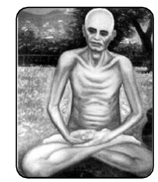

जन्म तिथि – कार्तिक शुक्ल नवमी, वि.सं. 1940 (09.11.1883)
जन्म स्थान – प्रेमसर, जिला - ग्वालियर (म.प्र.)
जन्म नाम – श्री हजारीमल पारेवाल जैन
पिता का नाम – श्री हीरालाल जैन
माता का नाम – श्रीमती गेदा बाई जैन
ऐलक दीक्षा – आसोज शुक्ल छठ वि.सं. 1981 (04.10.1924, इन्दौर (म. प्र.)
मुनि दीक्षा – मार्गशीर्ष वदी ग्यारस वि.सं. 1981 (23.11.1924), हॉटपिपल्या जिला-देवास (म.प्र.)
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री शांतिसागर 'छाणी' महाराज से
आचार्य पद – कार्तिक शुक्ल दशमी वि.सं. 1985 (22.11.1928), कोडरमा (झारखंड)
समाधिमरण – श्रावण कृष्ण अष्टमी वि.सं. 2009 (14.07.1952), डालमिया नगर (झारखंड)

परम पूज्य द्वितीय पट्टाचार्य श्री 108 विजयसागर जी महाराज (वचन सिद्धि आचार्य)

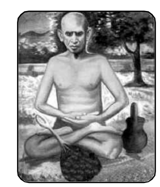

जन्म तिथि – माघ सुदी अष्टमी, वि.सं. 1938 (26.01.1882)
जन्म स्थान – सिरौली, जिला - ग्वालियर (मध्य प्रदेश)
जन्म नाम – श्री चोखेलाल जैन
पिता का नाम – श्री मानिक चन्द जैन
माता का नाम – श्रीमती लक्ष्मी बाई जैन
क्षुल्लक दीक्षा – इटावा (उत्तर प्रदेश)
ऐलक दीक्षा – मथुरा (उत्तर प्रदेश)
मुनि दीक्षा – वि.सं. 2000 (सन् 1943) मारोठ जिला-नागौर (राज.)
दीक्षा गुरु – प्रथमपट्टाचार्य श्री 108 सूर्यसागर जी महाराज
आचार्य पद – लश्कर, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
समाधिमरण – पौष वदी नवमी वि.स. 2019 (20.12.1962) मुरार, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

परम पूज्य तृतीय पट्टाचार्य श्री 108 विमल सागर जी महाराज (भिण्ड वाले)

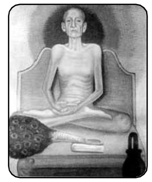

जन्म तिथि – पौष शुक्ल द्वितीया, वि.सं. 1948 (01.01.1892)
जन्म का नाम – श्री किशोरी लाल जैन
जन्म स्थान – ग्राम-मोहना, जिला-ग्वालियर (मध्य प्रदेश)
पिता का नाम – श्री भीकमचन्द जैन
माता का नाम – श्रीमति मथुरा देवी जैन
क्षुल्लक दीक्षा – वि.सं. 1997 (सन् 1941)
ऐलक दीक्षा – कापरेन नगर जिला कोटा (राज.)
मुनि दीक्षा – अगहन वदी पंचमी वि.सं. 2000 (17.11.1943) कोटा (राज.) में
दीक्षा गुरु – द्वितीय पट्टाचार्य श्री विजयसागर जी महाराज द्वारा पाटन, झालावाड़ (राज.)
आचार्य पद – वि.सं. 2030 (सन् 1973), हाड़ौती (राज.) में
समाधिमरण – बैशाख कृष्ण अष्टमी, वि.सं. 2030 (26.04.1973), दिन गुरुवार, सांगोद जिला कोटा (राज.)

मासोपवासी, समाधि सम्राट परम पूज्य चतुर्थ पट्टाचार्य 108 श्री सुमतिसागर जी महाराज

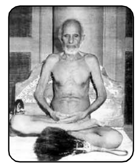

जन्म तिथि – आसोज शुक्ल चतुर्थी, वि.सं. 1974 (20.10.1917)
जन्म स्थान – ग्राम - श्यामपुर, जिला - मुरैना (मध्य प्रदेश)
जन्म नाम – श्री नत्थीलाल जैन
पिता का नाम – श्री छिद्दूलाल जैन
माता का नाम – श्रीमति चिरौंजी देवी जैन
ऐलक दीक्षा – चैत शुक्ल त्रियोदशी वि.सं. 2025 (11.04.1968), रिवाड़ी (हरियाणा) में
ऐलक नाम – श्री वीरसागर जी महाराज
दीक्षा गुरू – तृतीय पट्टाचार्य श्री 108 विमलसागर जी महाराज
मुनि दीक्षा – अगहन वदी द्वादशी वि.सं. 2025 (17.11.1968), गाजियाबाद (उ.प्र.)
आचार्य पद – ज्येष्ठ सुदी पंचमी वि.सं. 2030 (05.06.1973), मुरैना (म.प्र.) (तृतीय पट्टाचार्य श्री विमलसागर जी 'भिंड' महाराज से)
समाधिमरण – क्वार वदी त्रियोदशी वि.सं. 2051(03.10.1994), सोनागिरि जी सिद्धक्षेत्र जिला-दतिया (म.प्र.)

परम पूज्य पंचम पट्टाचार्य श्री 108 विद्याभूषण सन्मति सागर जी महाराज

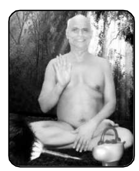

जन्म तिथि – अगहन वदी चतुर्थी, वि.सं. 2006 (10.11.1949)
जन्म स्थान – बरवाई, जिला - मुरैना (म.प्र.)
जन्म नाम – श्री सुरेश चन्द जैन
पिता का नाम – श्रीमंत सेठ श्री बाबूलाल जैन
माता का नाम – श्रीमती सरोज देवी जैन
क्षुल्लक दीक्षा – फाल्गुन शुक्ल तृतिया वि.सं. 2028 (17.02.1972) श्री सम्मेदशिखर जी (झारखंड)
मुनि दीक्षा – चैत्र सुदी त्रियोदशी वि.सं. 2045 (31.03.1988), सोनागिरी जी सिद्धक्षेत्र जिला-दतिया (म.प्र.)
दीक्षा गुरू – चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज
आचार्य पद – चैत्र सुदी पंचमी वि.सं. 2046, (10.04.1989) नरवर जिला- शिवपुरी (म.प्र.) पंचकल्याणक महोत्सव के उत्सव पर
समाधिमरण – फाल्गुन सुदी तृतीया वि.सं. 2069 (14.03.2013)

परम पूज्य राष्ट्रसंत, सराकोद्धारक, वात्सल्यमूर्ति षष्टपट्टाचार्य श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज

जन्म तिथि – वैशाख सुदी द्वितीया, वि.सं. 2014 (01.05.1957)
जन्म स्थान – मुरैना (मध्य प्रदेश)
जन्म नाम – श्री उमेश कुमार जैन
पिता का नाम – श्री शांतिलाल जैन
माता का नाम – श्रीमती अशर्फी देवी जैन
ब्रह्मचर्य व्रत – वि.सं. 2031 (सन् 1974)
क्षुल्लक दीक्षा – कार्तिक सुदी चतुर्दशी वि.सं. 2033 (05.11.1976) सोनागिरि सिद्धक्षेत्र में
क्षु. दीक्षा गुरू – चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुमति सागर जी महाराज
क्षु. दीक्षोपरान्त नाम – क्षुल्लक 105 श्री गुणसागर जी महाराज
मुनि दीक्षा – चैत्र सुदी त्रियोदशी वि.सं. 2045 (31.03.1988), सोनागिरि जी सिद्धक्षेत्र जिला-दतिया (म.प्र.)
मुनि दीक्षोपरान्त नाम – मुनि श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज
दीक्षा गुरू – चतुर्थ पट्टाचार्य श्रीसुमतिसागर जी महाराज
उपाध्याय पद – माघ वदी अष्टमी वि.सं. 2045 (30.01.1989), सरधना (मेरठ)
आचार्य एवं षष्ठपट्टाचार्य पद – ज्येष्ठ वदी तृतीया वि.सं. 2070 (27.05.2013) तीर्थ क्षेत्र बड़ागाँव जिला-बागपत (उ.प्र.)
समाधि – कार्तिक कृष्ण अमावस्या वि.सं. 2077, भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव, 15.11.2020, दिन रविवार, बारां (राज.)

गणिनी आर्यिका रत्न श्री 105 स्वस्तिभूषण माता जी

जन्म तिथि – 1-11-1969 कार्तिक कृष्ण सप्तमी दिन, शनिवार (वि.सं. 2026)
जन्म स्थान – छिंदवाडा (मध्य प्रदेश) बचपन सिवनी
जन्म नाम – संगीता जैन (गुड़िया)
पिता का नाम – श्री मोती लाल जैन (निवासी सिवनी) वर्तमान में (क्षु. श्री 105 परिणामसागर जी महाराज)
माता का नाम – श्रीमती पुष्पा देवी जैन वर्तमान में (क्षु. श्री 105 अर्हत मती माताजी)
प्रथम ब्रह्मचर्य व्रत – परम पूज्य संत शिरोमणि आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज
लौकिक शिक्षा – एम. ए. (संस्कृत)
आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत
दीक्षा गुरू – प्रशान्तमूर्ति आचार्य 108 श्री शान्ति सागर जी (छाणी) महाराज (उत्तर) के पंचम पट्टाचार्य सिंहरथ प्रवर्तक त्रिलोकतीर्थ प्रणेता आचार्य श्री 108 विद्याभूषण सन्मति सागर जी महाराज
दीक्षा तिथि व स्थान – 24 जनवरी 1996 माघ शुक्ल पंचमी, दिन बुधवार, (वि.सं. 2052) इटावा (उ.प्र.)
वर्तमान पट्टगुरु व गणिनी पद प्रदाता – परम पूज्य सराकोद्धारक तीर्थोद्धारक षष्ठम पट्टाचार्य श्री 108 ज्ञान सागर जी महाराज
तिथि एवं स्थान – 13 फरवरी 2020 फाल्गुन कृष्ण पंचमी, दिन बृहस्पतिवार (वि.सं. 2076), तीर्थ क्षेत्र स्वस्ति धाम, जहाजपुर (राजस्थान)

नई दिशा, नई प्रेरणा देने वाली गुरुमाँ

आज कि इस भौतिकता की चकाचोंध में हर व्यक्ति अंधा सा प्रतीत होता जा रहा है, वह अपने बचपन, जवानी और बुढ़ापे को सार्थक नहीं कर पा रहा, उसने जैसे अपने जीवन जीने की कला को ही नष्ट सा कर दिया है। जीवन जीने का एक बहुत अच्छा उदाहरण हर व्यक्ति के जीवन में अवश्य होना चाहिए। ऐसे ही बहुत से उदाहरण पूज्य माता जी ने आपके हाथों में इस पुस्तक मे दिये है। पूज्य माता जी ने कहा है कि सूर्य उगता है, चढ़ता है, ढल जाता है। फूल कली बनती है, खिलती है, मुरझती है और गिर जाती है। ठीक मनुष्य इसी तरह जन्म लेता है, जवान होता है, बूढ़ा होता है और मर जाता है। ये प्रकृति का नियम है, इस पर चिंतन और मनन करना चाहिए। जी हां पूज्या माता जी ने ठीक ही तो कहा है, अगर हम इस कृति में दिये सभी ही नहीं बल्कि कुछ उदाहरण को भी अपनायेंगे, तो निश्चित ही हम अपने इस क्षण भंगुर जीवन को बहतर बना पायेगे। पूज्य माता जी द्वारा लिखी गई एक-एक लाइन हमें एक नई सीख, एक नई प्रेरणा को एक नई दिशा प्रदान करती है।

माता श्री ने अपने मन मे उत्पन्न होने वाले अच्छे-अच्छे भावों को इस कृति में संजोया है। जैसे प्रकृति ने सबको एक सा नहीं बनाया, मृत्यु नहीं होती तो क्या होता, मन की कीमत, सांसारिक सुख में दुखः साथ है, आत्मा पावर हाऊस है, परिवार ने क्या नहीं दिया आपको, पाप पुण्य बन जाता है और पुण्य पाप आदि ऐसे बहुत से प्रवचन जो की बहुचर्चित बने हुए हैं, आप भी उन प्रवचन को पढ़कर अपने जीवन में एक नया आयाम स्थापित कर सकेंगे, जब आप इस पुस्तक को एक बार पढ़ेगे तो मैं कहती हूँ निश्चित

ही आप उसे अपने जीवन की यथार्थता समझेगे, ऐसा महसूस करेगे मानों यह मेरे स्वयं के जीवन की ही घटना हो। पूज्य माता जी द्वारा लिखित 85 कृतियों में से एक यह कृति जो आपको अवश्य ही पढ़कर अपने जीवन में उतारनी चाहिए।

सूरज के दर्शन से जलज खिलता है।
पारस के स्पर्श से लोहा सोना बन जाता है।।
स्मरण गुरू का बड़ा आलौकिक है।
बिना प्रयत्न सब मिलता है।।

ऐसी भावना भाते हुए पूज्या गुरू मां को त्रयबार वंदामि, वंदामि, वंदामि।

शालू दीदी
(संघस्थ)

प्रस्तावना

संसार में न्याय और नीति के पथ पर चलने के लिये साहित्य का अध्ययन अत्यावश्यक है। उन साहित्यों में भी वे साहित्य, जो पाठक को सीधे प्रभावित करते हैं, उनकी उपयोगिता समाज में अधिक होती है। ऐसे साहित्य की श्रेणी में कथा साहित्य पाठकों को अतिप्रिय रहा है। कथा साहित्य के माध्यम से पाठकगण सिद्धान्तों को सरलता से अवगाहित कर लेते है तथा जब-जब वह कथा स्मरण में आती है, तब-तब कथा से प्रतिपादित सिद्धान्त भी स्मरण आता रहता है।

पाठकों की दृष्टि से तीन प्रकार के पाठक समाज में विद्यमान है, जिनमें मंदबुद्धि मध्यमबुद्धि तीव्रबुद्धि इन तीनों प्रकार के पाठकों के लिये कथा साहित्य आधार है। कथा के आधार पर सिद्धान्त तक पहुँच सकते हैं सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने के लिये तीर्थंकरों से लेकर वर्तमान प्रवचनकार भी कथा के माध्यम से अपने प्रवचनों की प्रस्तुति करते हैं। ऐसी ही रोचक कथाएँ प्रवचनों में प्रभाव डालती हैं, उन प्रवचनों से प्रभावित होकर श्रोतागणों का जीवन भी प्रभावित होता है। वे प्रवचनों से शिक्षा ग्रहण करके अपने जीवन में उन शिक्षाओं को चरितार्थ करते हैं। प्राचीन समय के ऐसे कई उदाहरण हैं, जिनमें गुरुओं के प्रवचन से प्रभावित होकर लाखों लोगों ने अपना कल्याण किया। आचार्य लोहाचार्य महाराज अपने प्रवचनों के माध्यम से प्रतिदिन 1000 लोगों को जिनमार्ग में लगाते थे। इसी परम्परा से वर्तमान तक हजारों-लाखों साधुओं ने लाखों लोगों को आत्मकल्याण के मार्ग में अग्रेषित किया है। वर्तमान में आचार्य शान्ति सागर जी महाराज की छाणी परम्परा में लाखों लोगों ने आत्मकल्याण किया। यह आत्मकल्याण का मार्ग गुरुओं का प्रवचन और चारित्र रहा है।

इसी श्रृंखला में आचार्य सन्मति सागर जी महाराज एवं आचार्य ज्ञान सागर जी महाराज की सुयोग्य शिष्या गणिनी आर्यिका स्वस्तिभूषण माता जी के प्रवचनों से लाखों लोग जैनधर्म की प्रभावना में आग बढ़ रहे हैं। लाखों

लोगों के समक्ष पूज्य माता जी के प्रवचन सदैव रहें, इसके लिये माता जी के प्रवचनों को लिपिबद्ध करके पुस्तकाकार रूप दिया जा रहा है, जो प्रशंसनीय एवं श्लांघनीय है।

प्रस्तुत पुस्तक के आद्योपान्त अध्ययन से मन आह्लादित हुआ कि यह प्रवचनांश भक्तों के जीवन को पथप्रदर्शित करने के लिये अत्यन्त लाभदायक हैं। इस कृति की विषय वस्तु उन सभी लोगों के लिये लाभदायक है, जो इस प्रकार से विचार करते हैं कि मनुष्य जीवन प्राप्त करने के पश्चात् क्या करें अथवा क्या न करें? कैसे जीवन जिये की हिंसा कम हो और पुण्य अधिक प्राप्त हो? मनुष्य की यह सोच स्वाभाविक है, क्योंकि मन सुबह से रात्रि तक केवल पाप की क्रियाएँ करता है, उसके लिये पुण्य के अवसर कैसे प्राप्त हो सकते हैं? अथवा जो क्रियाएँ वह करता है, क्या उसे पुण्य में भी परिवर्तित किया जा सकता है? रसोई के भोजन का भी पुण्य की क्रिया में परिवर्तित करना संभव है? इस प्रकार की क्रियाओं के लिये पूज्य माता जी के प्रवचन अत्यन्त उपयोगी हैं, उन्होंने इसके उत्तर के लिये " रसोई में शुद्धि कैसे? " शीर्षक से पाठकों के मन को परिवर्तित किया है इसी प्रकार के अन्य विषय जो मानसिक, वाचनिक, कायिक शांति प्रदान कर सकते हैं। भौतिक संसाधनों से सुख-दुःख कैसे प्राप्त होता है? मन की स्थिति परिवर्तित करने से परिस्थितियाँ परिवर्तित कैसे की जा सकती है। इसे समझाने के लिये "परिस्थिति नहीं मनःस्थिति बदलो" विषय से प्रस्तुत किया है। इस प्रकार से पाठकों के मनःस्थिति पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा है जिन कारणों से व्यक्ति का मन सदा व्यथित रहता था, वहीं कारण मन को कैसे प्रसन्न कर सकते है। यह यदि व्यक्ति सीख गया, तो उसका जीवन सदैव के लिये धार्मिक हो जाएगा।

मनुष्य के जीवन में ऐसे कई कारण उत्पन्न होते हैं, जिनके कारण वह क्रोध ा, मान, माया, लोभ स्वभाविक रूप से कर लेता है, यदि ऐसी परिस्थिति में थोडा धार्मिक रूप से विचार किया जाए, तो जल्द ही उस परिस्थिति से बाहर निकल सकते हैं और संभावित पाप से बचाव भी हो सकता है इस कृति को पढ़ने के पश्चात् पाठकों के जीवन में परिवर्तन, तो होगा ही, साथ ही चारित्र के प्रति उनका लगाव तथा देव-शास्त्र-गुरु के प्रति श्रद्धाभाव में वृद्धि होगी, ऐसी आशा करता हूँ।

डॉ. सतेन्द्र कुमार जैन, जयपुर

अनुक्रम

आप V.I.P. हैं	12
बीमारी क्यों होती है?	17
आलस छोड़ने के लिये किसकी तरफ देखें?	31
आज के लिये बहुत काम है	33
कल पर न टालें	34
सहयोग के बिना जी नहीं सकते	36
मनुष्य ही ज्ञान, संस्कार, सुख में वृद्धि कर सकता है	38
पढ़ाई करने, क्या करें?	40
कब तक सीखते रहेंगे अ आ इ ई	42
अक्षरीय ज्ञान की आवश्यकता क्यों?	44
भाव का ही प्रभाव है	48
धर्म में किस द्वार से प्रवेश करें?	51
राम भरोसे जे रहे, तो पर्वत पे हरयाये	56
थोड़ा सुख मिला?	59
नजर को बदलिये, नजारे बदल जायेंगे	62
सारी प्रकृति तप रही है आप क्यों डरते हैं?	65
प्रभु महावीर को छूने वाली हवा दवा बन जाती है	71
मुझसे मेरा मिलन करा दो	73
अपना खून न पियें	76
रसोई में शुद्धि क्यों?	77

सारा संसार शिक्षा का केन्द्र है	81
भगवान महावीर की दृष्टि में संक्रमण	83
ज्यादा खुशी ज्यादा गम दोनों में रहना सम	86
परिग्रह का उपयोग दवाई के समान करें	89
समुद्‌घात आत्मा किस तरह बाहर जाती है	94
हंसना अच्छा है लेकिन...	99
मौन प्रकृति को समझने के लिये मौन लेना आवश्यक है	102
प्रभु भक्ति की छतरी लगाये	105
किरणों का खेल है दुनिया में	107
दीवाली का संदेश मिलकर रहिये, बांटकर खाइये	110
कौन कहता है आप गरीब हैं	113
एकत्व, एकांत और अकेलेपन में अंतर	117
सावन में पावन नहीं बने, भादों में भद्र नहीं बने, तो क्वार में कोरे रह जाओगे	120
भजन क्यों और कैसे पढ़ें	122
अध्यात्मिक भजन क्यों पढ़ें	124
मरकर ही रूप बदलता है	126
नारी पैसा क्यों कमाने लगी	128
मान का भोजन, प्रशंसा	131
मन का भोजन मान	134
क्रोध के लिये क्रोध नहीं करते	137
भगवान की 'डिजीटल' ओंकार ध्वनि	146
जीवतत्व जीवद्रव्य में अंतर	148
स्व अर्थ, अर्थात् स्वार्थ में कुछ करना है	150

आप V.I.P. हैं

हर व्यक्ति को अपनी कीमत पता होनी चाहिये। हर दृष्टिकोण पर उसे जीवन का मूल्य आंकना चाहिये। अपनी कीमत का पता चलने पर वह अपनी कीमत बढ़ाने की सामर्थ्य रखता है। लेकिन इसके लिये उसे ज्ञान को बढ़ाना होगा। सामानतया देखा जाये तो कर्मों ने आपको V.I.P. बनाकर भेजा। आपके गर्भ में आते ही, आपके कारण आपकी मां की व्यवस्था V.I.P. हो जाती है। जब आपका जन्म होता है। सारे घर के आंखों के तारा बन जाते हैं। हर गोदी स्वागत करती है, हर गोदी झूला झुलाती है। पुचकारते हैं, मुस्कराते हैं, कितना गरीब क्यों न हो बचपन में प्यार सबको मिलता है। जन्म के बाद इतना प्यार चारों गति के किसी जीव को नहीं मिलता। पशुओं के बच्चे तो सड़क पर ही बड़े हो जाते हैं। नरक में जन्म के बाद, अन्य नारकी उसे मारकूट करके कष्ट देते हैं। पर आप V.I.P. हैं। आपकी सेवा में आपके माता-पिता ने कोई कसर नहीं छोड़ी।

V.I.P. शरीर

संसार में मनुष्यों के अलावा पशु-पक्षियों की तरफ नजर डालें तो पता चलता है कि उनके पास आंखें हैं पर देखने की समझ उतनी है जितनी मनुष्य के पास है, सुनने की शक्ति है समझने की शक्ति मनुष्य के बराबर नहीं है। पशुओं के पास चार पैर हैं, पर मंजिल नहीं है, मनुष्य के पास दो पैर हैं पर मंजिल पाने की समझ है। पशुओं के परिवार हैं पर रिश्तेदारी निभाने की समझ नहीं, मनुष्य अपनी समझ से अपने रिश्तों को निभाता है। मनुष्य अपना जीवन उत्कृष्ट शैली से जी सकता है पर पशु केवल पेट भर कर, बिना कुछ कार्य किये, जीवन पूरा कर लेता है। हर दृष्टि से देखा जाये तो हमें पशु पक्षियों से श्रेष्ठ शरीर श्रेष्ठ मन मिला है। हमारी हर चीज V.I.P.। जन्म से V.I.P. हैं। V.I.P. हैं तो सही, पर इसका उपयोग सही रूप से करके VV.I.P. बन सकने की योग्यता भी हमारे पास है। और इसका सही

उपयोग नहीं किया तो, वापस जहां से आये हैं वहां जाना पड़ेगा। और पुरुषार्थ किया तो शरीर रहित भी हो सकते हैं।

V.I.P. रहन सहन

संसार में मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो बढ़िया से बढ़िया मकान बनाकर उसमें रहता है। झोंपड़ी हो या मकान रहने के लिये स्थान तो मिला। सर्दी, गर्मी बरसात से अपनी रक्षा करने की शक्ति तो है। वरना पशु-पक्षी हर मौसम की पूरी मार को झेलते हैं। सर्दी में ठंड सहन करते हैं, गर्मी में गर्मी सहन करते हैं और बारिश में भीगते रहते हैं। परन्तु आप V.I.P. हैं। तीनों मौसम में अनुकूलता प्राप्त कर आराम से रहते है। सर्दी में गरम कपड़े पहनता है, गर्मी में A.C. कूलर, पंखे में रहता है और बारिश में छाता लगा लेता है। V.I.P. मनुष्य के रहने को V.I.P. स्थान भी होता है। उसका रहन-सहन भी V.I.P. होता है।

V.I.P. खाना

पशु को जो मिल जाये चुपचाप खा लेता है, पर मनुष्य भोजन बनाता है, पकवान बनाता है, फिर खाता है। पशु गेहूं, चना, दाल सब वैसे ही खा जाता है, हालांकि उसे घास के अलावा कुछ खाने को नहीं मिलता, ये V.I.P. मनुष्य ही भाग्यवान है जो ये सब व्यवस्था करके खाता है। घर में बना के खाता है, होटल में जाके खाता है, ठेले पर खड़े होके खाता है, उसके लिये अनेक स्थान हैं जहां पर खाता है।

V.I.P. स्वास्थ्य

मनुष्य बीमार हो जाये तो डॉक्टर के पास जाकर दवा लेकर खा लेता है। और ज्यादा बीमार हो जाये, अस्पताल में भर्ती हो जाता है। और हो जाये तो ऑपरेशन करा लेता है। परंतु पशु बीमार हो जाये तो उसे तड़पना ही पड़ता है, सहन ही करना पड़ता है और ज्यादा हो जाये तो मरना पड़ता है। हां, मनुष्यों ने पशुओं के अस्पताल खोले हैं, पर हर पशु की किस्मत नहीं कि उसे इलाज मिल जाये। जो पशु-पक्षी मनुष्यों के काम आते हैं, उन्हें ही ये सुविधा उपलब्ध हो पाती है। अतः मनुष्यों के V.I.P. ट्रीटमेंट भी मिलता है।

V.I.P. आनंद

मनुष्य जब अपने आवश्यक कार्य से फ्री होता है तो, मोबाइल से आनंद लेता है,

टी.वी. से आनंद लेता, मूवी थियेटर में जाके आनंद लेता है, संगीत सुनकर आनंद लेता है, नृत्य करके आनंद लेता है। क्लब में जाकर आनंद लेता है। खेल खेलकर आनंद लेता है, पेंटिंग आदि करके आनंद लेता है। वो अपने हर पल हर क्षण का आनंद लेने की सामर्थ्य रखता है। लेकिन पशु-पक्षी यहां से वहां घूमकर ही आनंद ले सकते हैं इसके अलावा वे किसी वस्तु का प्रयोग नहीं कर पाते। मनुष्य का आनंद भी V.I.P. है।

V.I.P. विवाह

रिश्ता, परंपरा, समाज के अनुशासन में बंधा मनुष्य अपनी परंपरा को बढ़ाने के लिये विवाह करता है। और विवाह के समय अपनी खुशी सबके साथ बांटने के लिये बैंड बाजे भोजन और कई तरह से कार्य करता है। जिससे, वह क्षण, उसके जीवन के अविस्मरणीय बन जाते हैं। और एक परिवार बसा के जीवन के सुख-दुख को साथ लेकर जीवन जीता है। जबकि पशुओं में इस तरह की विवाह परंपरा नहीं है। जब जैसा मन किया वैसा कर लिया। बच्चों को जन्म भी दिया पर थोड़े बड़े होते ही सब अपने-अपने तरह से जीने लगे। पशु-पक्षी में न तो माता-पिता न भाई-बहन आदि का रिश्ता निभाते हैं। और न ही कोई परिवार होता हे, और न ही संबंधों की पवित्रता होती है। लेकिन मनुष्य अपने पवित्र संबंधों को बड़ी अच्छी तरह निभाकर पुण्य कार्य कर सकता है।

V.I.P. भाषा

पशु-पक्षियों में वचन तो है पर वे एक तरह का वचन ही है, उसे वह भाषा रूप परिवर्तित नहीं कर सकता। अर्थात् चिड़िया चीं चीं करती है, घोड़ा हिनहिनाता है, हाथी चिंघाड़ता है, गाय रंभाती है, कुत्ता भौंकता है, बिल्ली म्याऊं-म्याऊं करती है, कौआ कांव-कांव करता है, कोयल कूकती है। एक ही तरह का वचन बोल सकती है। पर मनुष्य के पास इस वचन को भाषा रूप में बोलने की शक्ति है। वह अपनी भाषा से भावों को व्यक्त कर सकता है। वह भाषा से इतिहास बना सकता है इतिहास से शिक्षा ग्रहण कर सकता है। वह साहित्य लिख सकता है। वह कवितायें बना सकता है, वह गीत गा सकता है। वह भजन पूजा गा सकता है। वह भाषा से प्रवचन बोल सकता है, सुन सकता है भगवान की वाणी को। शास्त्रों को पढ़कर भगवान बन सकता है। भाषा हमारे जीवन के विकास में बहुत बड़ा कारण है। अतः पशु-पक्षी की अपेक्षा हम बहुत ज्यादा V.I.P. है।

V.I.P. ध्यान

मन वचन काय की एकाग्रता को ध्यान कहते हैं। शुभ अशुभ दो तरह का होता है पशु अशुभ ध्यान अर्थात् आर्त रौद्र करते हैं। विरले पशु शुभ ध्यान कर सकते हैं। शुभ ध्यान धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान ये मनुष्य जीवन में सहजता से संभव है। वह ध्यान के माध्यम से पापों का नाश करे तो भगवान भी बन सकता है। मनुष्य का धर्म पुरुषार्थ उसके जीवन का उत्थान करता है, लेकिन पशु ये चाहे कि वो बैठकर आंख बंद करके परमात्मा का ध्यान करूं, आत्मा का ध्यान करूं तो उसके लिये संभव नहीं है। पशु चाहे कि वो शास्त्र पढ़े, पूजा या उपवास करे तो भी उसके लिये संभव नहीं है। यह तो मनुष्यों का ही सौभाग्य है कि वह ये सारे शुभ कार्य कर सकता है। और इन धर्म कार्यों से अपने जीवन को धन्य बना सकता है। अपनी आत्मा को परमात्मा बना सकता है।

एक देव बनकर जन्म लेता है और देव बनकर मर जाता है, एक नारकी-नारकी बन जन्म लेता है और नारकी बनकर मर जाता है, एक पशु और पक्षी, पशु बनकर जन्म लेते हैं और पशु-पक्षी बनकर ही मर जाते हैं, पर एक मनुष्य, मनुष्य बनकर जन्म लेता है और वह धर्म पुरुषार्थ करे तो वह परमात्मा बनकर निर्वाण को प्राप्त कर सकता है। मनुष्य The V.I.P. मनुष्य शरीर को इसीलिये चिंतामणि रत्न कहा गया है कि इससे जो चाहे प्राप्त कर लो।

इतना सब कुछ मिलने के बाद भी आप कहोगे कि मैं गरीब हूं, मैं दीन-हीन हूं, मैं कुछ नहीं हूं। यदि ऐसा आप कहते हैं तो मैं उनके लिये कहती हूं वे स्वर्ग में रहकर भी नरक का दुख भोग रहे हैं। उन्हें स्वर्ग का ज्ञान ही नहीं है। स्वर्ग के सुख भोगने के लिये स्वर्ग का ज्ञान होना जरूरी है। मनुष्य शरीर को जानना और इसका सही उपयोग करना ये भी पुण्य से होगा। और आप बहुत पुण्यशाली हो। तभी आपको V.I.P. कोटे में रखा है।

V.I.P. बनने के बाद V.V.I.P. बनना ये आपके पुरुषार्थ पर निर्भर करता है। आलस और प्रमाद में अपना जीवन नहीं खोना है। कुछ करने से कुछ होगा। अतः उठो जाग्रत होओ और धर्म पुरुषार्थ करो। V.I.P. तो आपको कर्म ने बनाने दिया। अब V.V.I.P. बनने के लिये मेहनत आपको करनी है। कहीं ऐसा न हो V.I.P. बन गये पर कुछ नहीं किया तो वापस जनरल (सामान्य) बन के, तिर्यंच नरक में पहुंच गये। जैसे किसी ने आपको ट्रेन के V.I.P. डिब्बे में बिठाया, पर आपने ऐसा काम किया कि जनरल डिब्बे में वापस जाना पड़ा। जो बनकर आये हें उससे और अच्छा बनना है।

विचारों में मत का
लिखने में खत का
इंसान की कीमत का
बड़ा ही महत्व है

रिश्तों में नंद का
नहीं होने में छंद का
V.I.P. आनंद का
बड़ा ही महत्व है

लिखने में कॉपी का
राजाओं में प्रतापी का
बनने में V.I.P. का
बड़ा ही महत्व है

जीवन में अभिलाषा का
करने में आशा का
V.I.P. भाषा का
बड़ा ही महत्व है

धनुष में तीर का
भोजन में खीर का
V.I.P. शरीर का
बड़ा ही महत्व है

उड़ने में यान का
चलाने में अभियान का
V.I.P. ध्यान का
बड़ा ही महत्व है

रिश्तों में बहन का
हिमाचल में वाहन का
V.I.P. रहन सहन का
बड़ा ही महत्व है

अर्जुन के पार्थ का
नहीं होने में स्वार्थ का
जीवन में परमार्थ का
बड़ा ही महत्व है

होने में व्यस्त का
सूरज के अस्त का
V.I.P. स्वास्थ्य का
बड़ा ही महत्व है

कर्मों को हनने का
भव से तरने का
V.I.P. बनने का
बड़ा ही महत्व है

बीमारी क्यों होती है?

हर बच्चे बूढ़े जवान की बहुत बड़ी समस्या बन गई है, बीमारी। जिसे देखें वही कोई न कोई रोग से ग्रसित है। किसी को छोटी, तो किसी को बड़ी बीमारी है। किसी को बीमारी नहीं है, तो परिवार में किसी और की बीमारी से परेशान है। बीमारी किसी के शरीर को, तो किसी के मन को परेशान कर रही है। बीमारी के कारण डॉ. अस्पताल और दवाईयों की फैक्ट्री की संख्या बढ़ती जा रही है। हर कोई रोग मुक्त होना चाहता है। हर कोई कष्ट मुक्त होना चाहता है।

इंसान की दृष्टि कार्य पर होती है, कारण पर नहीं। अर्थात् दृष्टि बीमारी पर उसके कारण पर नहीं, कि बीमारी क्यों हुई है। कारण भी खोजेगा तो बाहर। बिना अंतरंग कारण के बहिरंग कारण प्रभाव नहीं डाल सकता। अर्थात् पाप कर्म का उदय बिना बाहर की बीमारी उत्पन्न हो ही नहीं सकती। जीव के किसी भी कार्य में अंतरंग बहिरंग दोनों कारणों के संयोग होने पर कार्य होता है। अंतरंग कारण कर्म, बहिरंग कारण चोट, भोजन, मौसम, कुछ भी हो सकता है। उपघात परघात—नाम कर्म की दो प्रकृतियाँ भी कर्म के फल देने में काम करती हैं। स्वयं के द्वारा स्वयं की शरीर को चोट लगना उसे उपघात कर्म कहते हैं। जब चोट, दूसरों के द्वारा लगे तो उसे परघात कर्म कहते हैं। स्वयं के चोट लगने में दूसरा निमित्त है। अंतरंग कारण एक है, बहिरंग कारण दो हैं। मूल में कर्म एक है, जिससे, कष्ट मिलना है, किसके द्वारा मिला ये बात अलग है।

जीव विपाकी पुद्गल विपाकी (विपाक-कर्मों का फल)

कर्म के भेदों में जिन कर्मों का फल सीधे जीव को प्राप्त हो वह जीव विपाकी कर्म है। जिन कर्मों का फल मिले तो शरीर को, पर दर्द महसूस हो जीव को वह पुद्गल विपाकी कर्म कहलाता है। अर्थात् जैसे क्रोध, मान, माया, लोभ इन कर्मों का फल भावों में जीव को सीधे मिलता है। यह जीव विपाकी कर्म प्रकृतियाँ हैं। जिन कर्मों

का फल शरीर में बीमारी के रूप में आता है, वे पुद्गल विपाकी कर्म प्रकृतियां हैं। अर्थात्—शरीर में बीमारी का एक कारण पुद्गल विपाकी कर्म भी है।

बीमारी अलग-अलग होती है। शरीर में आठ अंग हैं, पाँच इन्द्रियाँ हैं और शरीर के अंदर अनेक तरह की मशीनें हैं। मस्तिष्क, हृदय, पेट, कमर, पीठ आदि-आदि। बीमारी अलग-अलग शरीर में अलग-अलग हिस्सों में होती है। आचार्यों ने कहा है अँगुली के एक पोर में, 99 तरह की बीमारी होने की संभावना है। और संपूर्ण शरीर के लिये कहा—

शरीरं व्याधिमंदिरं।

अर्थात् शरीर रोगों का घर है। एक का इलाज करो, तो दूसरी तैयार खड़ी रहती है। एक बार में अनेक बीमारी भी हो सकती है। सिर, गर्दन, जीभ, गला, हृदय, फेफड़े, पेट, पीठ, कमर, घुटने, पंजे, एड़ी, अँगुली। अनेक स्थान हैं, जो रोग से पीड़ित हो सकते हैं। जिसको जो बीमारी होती है, वह सोचता है कि यह बीमारी सबसे बड़ी बीमारी है। इससे अच्छी तो दूसरी बीमारी है। दूसरी हो जाये तो वही सबसे बड़ी लगने लगती है। अर्थात् बीमारी तो कोई भी हो, अच्छी नहीं है। क्योंकि यह हमारे मन को पीड़ित कर देती है। प्रतिदिन की दिनचर्या में बाधा डालती है। भोजन आदि में बाधा आती है। समय-समय पर दवाई लेने का ध्यान रखना पड़ता है। दवाईयों का साइडइफेक्ट भी होता है। शरीर को पीड़ा से कष्ट भी होता है। अतः बीमारी इंसान के सहजता की जिन्दगी में बाधक बन जाती है। परिवार की मानसिकता पर भी उसका प्रभाव पड़ता है। परिवार तनाव में आ जाता है। बीमारी मंदिर जाने में, पूजा करने में, स्वाध्याय और ध्यान करने में, उपवास, व्रत करने में, प्रवचन सुनने में भी बाधा डाल देती है।

हाथी की चाल से आती है चींटी की चाल से जाती है

अर्थात् बीमारी और दुःख हाथी की चाल से आते हैं अर्थात् हाथी जैसे विशाल रूप में शीघ्र गमन करके, एकदम से आते हैं और जब जाते हैं बहुत धीरे-धीरे जाते हैं। जैसे कोई गिरे और चोट लगे तो एक मिनट भी पूरा नहीं लगता है, ठीक होने में महीनों और सालों लग जाते हैं। कई बार तो पूरा जीवन लग जाता है वह बीमारी ठीक ही नहीं होती।

दृष्टांत

एक व्यक्ति किसी पार्टी से लौट के आया, उसे पेट में दर्द हुआ तो वह डॉक्टर के

पास जाकर पूछता है कि मेरे पेट में दर्द क्यों हो रहा है। डॉक्टर ने कहा कि तुमने भोजन जरूरत से ज्यादा खा लिया है इसलिये हो रहा है। अब तुम दवाई लो ठीक हो जाओगे। फिर वह किसी ज्योतिषी के पास गया। ज्योतिषी से पूछा मेरे पेट में दर्द क्यों हो रहा है? ज्योतिषी ने कहा, तुम्हारी जन्मपत्री में सातवें घर में राहु बैठा है, और राहु की महादशा में अंतर्दशा चल रही है। इसलिए पेट में पीड़ा है। आप राहु ग्रह का उपाय करें, आपका पेट दर्द ठीक हो जायेगा। वही व्यक्ति फिर संत के पास गया। पूछा महाराज मेरे पेट में दर्द क्यों हो रहा है, संत ने कहा, भक्त तेरे असाता वेदनीय कर्म का उदय है इसलिये पेट दर्द हो रहा है। तुम भक्ति जाप ध्यान करो असाता वेदनीय के कम होते ही दर्द ठीक हो जायेगा।

डॉक्टर ने कहा, वह भी ठीक है, ज्योतिषी ने भी ठीक कहा, संत ने भी ठीक कहाँ तीनों की बात सत्य है। पर मूल कारण है कर्म, जब कर्म का उदय आता है तब बाहर के निमित्त भी वैसे मिल जाते हैं और कर्म अपना फल देकर चला जाता है। अंतरंग कारण और बहिरंग कारण दोनों मिलकर ही कर्म फल देता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव जब तक प्राप्त न हो कर्म अपना फल नहीं दे सकता।

अर्थात् कर्म ही मूल कारण है। जैसे वृक्ष के जड़ में पानी दिया जाता है, हर पत्ते को अलग-अलग नहीं। हम एक-एक बीमारी का इलाज करते हैं। सारी जिन्दगी एक-एक बीमारी का इलाज करते निकल जाती है हम बीमारी की जड़ तक पहुँच ही नहीं पाते।

बीमारी की जड़ है पापकर्म, पाप कर्म का इलाज है पुण्य कर्म

संसार में बीमारी के हजारों तरह के इलाज हैं। आयुर्वेद, होम्योपैथी, ऐलोपैथी, एक्युप्रेशर, एक्युपंचर, सुजोक पद्धति, प्राकृतिक चिकित्सा, कलर थेरेपी, फीजियोथेरेपी, ज्योतिषी उपाय, तंत्र-मंत्र-यंत्र, झाड़ना, फटकारना, कलर बोतल का पानी, घरेलू इलाज, ऑपरेशन आदि-आदि। जो मैं जानती उसे बताया। इसके अलावा और भी उपाय होंगे जिन्हें हम नहीं जानते। हर क्षेत्र की बीमारी अलग होती है, अर्थात् ठंडे प्रदेश के लोगों की बीमारी अलग होती है, गरम प्रदेश, बारिश प्रदेश, पहाड़ों पर रहने वाले, पहाड़ों के नीचे रहने वाले, मैदानी इलाका, रेगिस्तान प्रदेश की नदी के किनारे रहने वालों की, समुद्र के किनारे रहने वालों की बीमारियाँ अलग-अलग होती हैं। उस क्षेत्र से संबंधित इलाज भी अलग होते हैं। बीमारी शरीर के ऊपरी भाग में और शरीर के आंतरिक भाग में बीमारियाँ होती हैं। इनका उपचार ऊपर से और दवाई खाकर अंदर से भी किया जाता है और सारी दुनिया ऊपरी इलाज ही करती है।

दवाई का असर कब होता है

जीव के पापकर्म के उदय में बीमारी होती है और पुण्य कर्म के उदय में इलाज मिलता है और ज्यादा पुण्य होने पर दवाई असर करके बीमारी को ठीक करती है। जब तक कर्म का काल पूरा न हो, डॉक्टर को बीमारी ही समझ में नहीं आती। टेस्ट पर टेस्ट होते रहते हैं, कुछ पता नहीं चलता। जब कर्म ढीला पड़ता है, तब दवाई मिलती है और असर करती है। यदि पापकर्म ज्यादा हो तो दवाई भी रियेक्शन कर जाती है। डॉक्टर दवाई देता है ठीक होने के लिये, बीमारी और ज्यादा बढ़ जाती है। दोष हम डॉक्टर को देते हैं कि डॉक्टर की गलती से ऐसा हो गया। हाँ, जिस डॉक्टर के हाथ से ये गलती हुई, उसका भी कोई अशुभ कर्म उदय में आया, तभी उसके हाथ से ऐसा कार्य हुआ। पेशेन्ट के कर्म का उदय आया, वह भी उसी डॉक्टर के पास गया। दोनों का संयोग हुआ और कर्म उदय में आया। अतः बीमारी का इलाज भी पुण्य के उदय में मिलता है।

इंसान के विकास का कारण! ज्ञान

पशु जैसे चतुर्थ काल में होते थे आज भी वैसे हैं और वैसी क्रिया कर रहे हैं। पर इंसान के जीवन में बहुत परिवर्तन है। चतुर्थ काल में आध्यात्मिक विज्ञान, चरम ऊँचाइयों पर था, पंचम काल में भौतिक विज्ञान चरम ऊँचाइयों पर है। इसका मुख्य कारण है ज्ञान। ज्ञान तो समस्त जीवों के पास है पर ज्ञान के विकसित होने की क्षमता मनुष्य के पास है। जब ज्ञान आत्मा की खोज करता है, ध्यान की गहराई में पहुँचता है, तो आत्मा को, परमात्मा बना कर अनंत सुख की प्राप्ति करता है। और जब ज्ञान पुद्‍गल की खोज करता है, पुद्‍गल की शक्ति को प्रगट करता है, तब अणुबम, परमाणु बम, अनेक तरह के हथियार, मोबाइल, टीवी सौ तरह की मशीनों का अविष्कार करता है। पुद्‍गल के अविष्कार से वह बाह्य सुखों को प्राप्त तो कर लेता है, पर वे सुख, पीछे दुःख देकर जाने वाले होते हैं। इस खोज में निर्माण के साथ विनाश छिपा हुआ होता है। मन को बाहर से भटकाने वाले अनेक पदार्थ होने से मन की स्थिरता समाप्त हो जाती है। मन की अस्थिरता अनेक बीमारी का कारण बनती है। वर्तमान में मोबाइल के कारण से बच्चों में मानसिक बीमारियाँ पैदा हो रही हैं। आँखों पर चश्मा चढ़ रहा है। शरीर के मेहनत नहीं करने से अनेक बीमारियाँ होती हैं।

भौतिक विज्ञान के विकास में ज्ञान का उपयोग बहुत हो रहा है, पर अध्यात्मिक ज्ञान से दूर जा रहा है। इसीलिये इंसान कष्ट में है और दुःखी है। अध्यात्मिक ज्ञान

के आते ही, कष्ट होते हुये भी दुःख होते हुये भी वह सुखी हो जाता है। भौतिक साधनों के होते हुये भी वह अध्यात्मिक ज्ञान के अभाव में दुःखी हो जाता है। कोठी बंगले सोना-चांदी, गाड़ी-साड़ी सब कुछ होते हुये भी लोग दुःखी देखे जाते हैं। जंगल में रहने वाले संत के पास कुछ न होते हुये भी सुखी देखे जाते हैं। इसका कारण आत्मिक ज्ञान का विकास है।

आत्मिक ज्ञान से भौतिक बीमारियाँ जड़ से नष्ट होती हैं। कर्मों का सफाया होता है। जिससे बीमारी की जड़ ही नष्ट हो जाती है। भौतिक बीमारी का इलाज जब बाहर की दवाई से करते हैं, तो वह बाह्य उपचार है। अतः मानव ज्ञान की चरम ऊँचाइयों को छू सकता है। अपने का सदुपयोग यदि वह आत्मिक ज्ञान की खोज में करते हैं तो चिर स्थायी सुख की प्राप्ति कर सकता है।

बुद्धि में बीमारी

बीमारी एक ऐसी चीज है, जो कहीं भी कभी भी लग सकती है। मनुष्य भव में ज्ञान को प्रगट करने का माध्यम मन, बुद्धि, दिमाग है। पर उसी में बीमारी हो तो जीवन का विकास वहीं रुक जाता है। बुद्धि का कमजोर होना, बात का समझ में नहीं आना, पागल हो जाना, अक्षरीय ज्ञान का स्मरण न रह पाना, मंदबुद्धि होना, पढ़ कर भूल जाना, ये बीमारी इंसान के सांसारिक जीवन में बाधा डालती है। भौतिक विज्ञान से भौतिक सुख से दूर कर देती है। आवश्यक कार्य पालन पोषण में भी बाधा आ जाती है। सांसारिक लोग इसे बुद्धि की बीमारी कहते हैं। यह बीमारी ज्ञानावरणी कर्म के उदय में होती है।

ज्ञान कम होने का कारण

तत्प्रदोष निह्नवमात्सर्या-तरायासादनोपघाताज्ञानदर्शनावरणयोः

—त.सू.

1. दूसरों के ज्ञान में दोष लगाना।
2. दूसरा मेरे बराबर का न हो जाये इसलिये अपना ज्ञान छुपाना।
3. ज्ञानी व्यक्ति से ईर्ष्या करना।
4. दूसरे के ज्ञान में बाधा डालना

मात्र निन्दा करने से अशुभ कर्म का (पाप) बंध होता

प्रतिक्षण कर्म का आना जारी है। हम कोई भी काम करें। अर्थात् जब किसी की

निन्दा करते हैं, तब ज्ञानावरण कर्म का बंध होता है, उसके गुणों को ढांकने से दर्शनावरण कर्म का बंध होता है, उसकी निन्दा करने के पीछे मन में क्रोध, द्वेष, ईर्ष्या, ग्लानि अवश्य होगी इसलिये मोहनीय कर्म का बंध हुआ, निन्दा करने से असाता वेदनीय का बंध, यदि आयु बंध का समय होगा तो अशुभ आयु का बंध होगा, नाम कर्म की जो अशुभ प्रकृतियाँ हैं उनका ही बंध होगा, किसी की निन्दा करने से और स्वयं की प्रशंसा करने से नीच गोत्र कर्म का बंध होता है। निन्दा करने से अंतराय कर्म का भी बंध होता है। जिसकी निन्दा कर रहे हैं उसका बिगड़े न बिगड़े पर हमारा कर्म तो बिगड़ गया। उसका फल भी हमें भोगना पड़ेगा। निन्दा जिसकी हो रही है, वह बुरा है कि नहीं पता नहीं, पर जो निन्दा कर रहा है, वह जरूर बुरा बन जाता है। उसका वर्तमान और भविष्य दोनों खराब होते हैं। एक बीज गलत बोओगे तो, पेड़ के हजारों फल भी गलत ही आयेंगे। अतः स्वयं की प्रशंसा और दूसरे की निन्दा से बचना चाहिये।

एक अच्छा कार्य करने से सभी शुभ कर्मों का (पुण्य) बंध होता है

जैसे बुरे कार्य से अशुभ कर्म का बंध होता है, मान लीजिये कोई स्वाध्याय कर रहा है, अर्थात् वह शास्त्र पढ़ रहा है, तो उसका मन शुभ भाव बना रहा है, वचन भी शुभ-शुभ निकल रहे हैं, और काया भी कोई अशुभ कार्य नहीं कर रही है। स्वाध्याय करने से ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम होता है, मोहनीय कर्म भी शांत होकर बैठ जाता है, साता वेदनीय का बंध होता है, शुभ आयु, उच्च गोत्र, शुभ नाम कर्म का बंध होता है तथा अंतराय का भी क्षयोपशम होता है। चार घाति कर्म शांत होते हैं, अघाति में अशुभ शांत होकर शुभ का बंध होता है। हमें ये सब पता नहीं चलता, पर यह प्रक्रिया हर पल, हर क्षण निरंतर बिना विश्राम के चालू रहती है। हवाई जहाज चलाते समय पायलट हर क्षण सावधान रहता है, ऐसे ही भावों के प्रति हमें भी सावधान रहना होगा। वरना पाप कर्म कहीं भी अटैक करके हमें दुःखी और परेशान कर देंगे।

डिप्रेशन बुद्धि की बीमारी कैसे ठीक हो

सबसे बड़ा फायदा बुद्धि की सभी तरह की बीमारियाँ, स्वाध्याय, ध्यान, ज्ञान चर्चा, ज्ञान दान, दूसरों की प्रशंसा करने से ठीक होती है। अज्ञान का नाश होता है, ज्ञान का प्रकाश होता है। वर्तमान में डिप्रेशन की बीमारी चरम सीमा पर बढ़ रही है। इसका एकमात्र कारण अध्यात्मिक ज्ञान की कमी है। पहले समय में रात में सारा गाँव मंदिर में इकट्ठा होता था, और स्वाध्याय होता था। इस समय जैसे लाइट का

प्रकाश नहीं था, पर दीपक का प्रकाश ही उन्हें आध्यात्मिक बनाने में सहायक था। और पहले किसी को भी डिप्रेशन की बीमारी नहीं होती थी।

आज 15-20 साल के बच्चों में ये बीमारी शुरू होने लगी है। डिप्रेशन की बीमारी वाला देखने में स्वस्थ दिखता है, पर अंदर से किसी काम का नहीं होता। उसके अंदर हीन भावना पैदा हो जाती है। दिन भर परेशान रहता है और पड़ा रहता है। यदि बचपन से माता-पिता अपने बच्चों को पाठशाला भेजे ध्यान और ज्ञान कराये तो शायद वह बालक ऐसी बीमारियों से बच सकता है। वरना वर्तमान की मशीनीकरण की भौतिकवादी जीवन शैली ने इंसान को बेकार कर दिया है। इस जीवन का यदि लाभ उठा सकते हैं तो केवल अध्यात्मिक ज्ञान से। डिप्रेशन को दूर कर सकते हैं।

डिप्रेशन होने के दो कारण

जैसे रास्ते पर चलने वाली हर गाड़ी की अलग-अलग क्षमता है, वह कितनी तेज चल सकती है, कितने लंबे समय तक काम कर सकती है। वैसे ही शरीर एक गाड़ी है, हर व्यक्ति का शरीर अलग-अलग क्षमता वाला है, हर शरीर की अपनी सीमा है। मस्तिष्क भी एक मशीन है, एक मस्तिष्क कितना तेज है, कितने समय तक काम कर सकता है, उसकी भी सीमा है।

वर्तमान समय में इंसान का शरीर कम काम कर रहा है, मस्तिष्क का काम ज्यादा हो रहा है। मोबाइल को छोड़ा, तो टीवी में बैठ गया, टीवी से उठा तो, कम्प्यूटर में लग गया, कम्प्यूटर छोड़ा, तो अखबार में लग गया। मस्तिष्क को आराम जरा भी नहीं मिल पाता। बाहर की मशीनें चलाते-चलाते मस्तिष्क की मशीन खराब कर लेता है। मस्तिष्क क्षमता से अधिक कार्य करे तो, खराब तो होना ही है।

किसी भी कार्य के दो कारण होते हैं, पहले बता चुके हैं। अंतरंग कारण, बहिरंग। अशुभ कर्म का उदय आया, उस समय में अशुभ भाव बनाये, तो और अशुभ कर्म का बंध। ऐसे ही पाप से पाप बढ़ता रहा और डिप्रेशन तक पहुँच गये।

दिन-रात मनुष्य के ऊपर क्या प्रभाव डालते हैं

संसार में अनंत प्राणी के पास आँखें हैं। जिनमें से कुछ जीव ऐसे हैं, जिन्हें रात में नजर आता है अर्थात् अंधेरे में दिखता है, उजाले में नहीं। कुछ प्राणी ऐसे हैं जिन्हें दिन में दिखता है रात में अर्थात् अंधेरे में नहीं दिखता। कुछ जीव ऐसे हैं जिन्हें दिन में भी दिखता है और रात में भी। अर्थात् अंधेरे में भी दिखता है। उनमें से मनुष्य ऐसा प्राणी है, जिन्हें उजाले में दिखता है अंधेरे में नहीं। प्रकृति में उसी

हिसाब से सूर्य और चांद की व्यवस्था है। दिन इंसान से परिश्रम कराता है, और रात का अंधेरा समस्त पशु-पक्षी और मनुष्य को विश्राम की प्रेरणा करता है।

सूर्य का प्रकाश स्वास्थ्य को, आँखों को सुखदायी है। पास का चश्मा लगाने वाला भी सूर्य के प्रकाश में बिना चश्मे के पढ़ लेता है। सूर्य के प्रकाश में विटामिन आदि भी होता है। अतः सूर्य से मिलने वाला उजाला ही इंसान के लिये उपयोगी है। दिन में काम करने से शरीर और दिमाग दोनों थक जाते हैं। अतः रात्रि में विश्राम करके पुनः ऊर्जा संचित, कर दूसरे दिन के लिये कार्यशील हो जाते हैं; परन्तु वर्तमान में लाइट के प्रकाश में रात को बारह बजे तक काम करेगा तो, शरीर और दिमाग दोनों पर अधिक प्रभाव पड़ता है और शरीर में बीमारी का दिमाग पर दबाव पड़ता है। इंसान के लिये जितना काम जरूरी है उतना ही विश्राम जरूरी है। पर रात का विश्राम ही स्वास्थ्य देता है, दिन का नहीं। अतः प्रकृति के द्वारा बनाये दिन-रात के अनुसार ही यदि जीवन चक्र चले, तो उत्तम विचार, उत्तम शरीर स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।

रात्रि में मोबाइल क्यों नहीं चलाना चाहिए

अंधेरे में बैठने के बाद यदि एकदम उजाले में जायें तो, आँखें अपने आप बंद हो जाती हैं और, प्रकाश का आँखों से टकराना ऐसा लगता है जैसे चोट लगी हो। अर्थात् अंधेरे में आँखों की पुतली सामान्य अवस्था में रहती है, ताकि प्रकाश में जो वस्तुएँ हैं, उन्हें देख सके। मोबाइल का प्रकाश भी आँखों पर जोर डालता है। रात्रि में आँखों को विश्राम न दिया जाये, आँखों की क्षमता से ज्यादा उसका उपयोग किया जाये तो आँखें लंबे समय तक काम करने में समर्थ नहीं होती हैं। आँखों से 60-70-80 साल तक काम लेना है अतः आँखों से काम के साथ अन्याय न करें, रात्रि में मोबाइल चलाकर आँखों की शक्ति को क्षीण न करें। कान खराब हो जाये तो चलेगा, पर आँख खराब हो जाये तो दुनिया अंधेरी हो जायेगी। एक कदम भी चलना मुश्किल हो जायेगा। तब याद आयेगा कि हाय मैंने इतना मोबाइल क्यों चलाया।

साफ्टवेयर का असर हार्डवेयर में दिखता है

आत्मा साफ्टवेयर है दिखती नहीं है, पर है, साफ्टवेयर का उपयोग हार्डवेयर के द्वारा किया जाता है। जैसे हवा में फैली चित्रों की तरंगें और आवाजों को मोबाइल, टीवी, कम्प्यूटर के माध्यम से देखे जाते हैं। ऐसे ही इस आत्मा का अहसास शरीर से किया जाता है। मुँह का बोलना आत्मा के द्वारा होता है, आँखों से आत्मा देखती है, कानों

से आत्मा सुनती है, जिह्वा से आत्मा स्वाद चखती है। स्पर्श से ठंडा-गरम हल्का भारी, रूखा-चिकना, कड़ा नरम का ज्ञान करती है। सारा संसार आत्मा का है पर शरीर के माध्यम से नजर आता है।

शरीर में जो खराबी आती है वह आत्मा के कारण आती है, आत्मा में जो खराबी आती है वह भावों के कारण आती है। भावों में जो खराबी आती है वो इंद्रिय विषय भोगों के कारण मोहमाया, क्रोध, मान-माया, लोभ और हिंसा, झूठ, चोरी परिग्रह के कारण आती है। जब आत्मा में खराबी रहेगी तब तक शरीर में बीमारियाँ तो रहेगी ही रहेगी। आत्मा के शुद्ध होते ही शरीर भी शुद्ध हो जाता है। शरीर को सुधारने के लिये भावों को सुधारना आवश्यक है। भाव के द्वारा किया क्रोध कर्म का फल शरीर पर भी नजर आता है। अर्थात् क्रोध करने वाले के शरीर में बी. पी., शुगर, टेंशन, डिप्रेशन अनेक बीमारियाँ हो जाती हैं। बीमारी को ठीक करने के लिये भावों को ठीक किया जाये तो ज्यादा श्रेष्ठ होगा। वरना देश और विदेश के बड़े-बड़े डॉक्टर भी कुछ नहीं कर पायेंगे।

मैं दवाई खाने से मना नहीं कर रही पर शरीर की दवाई के साथ आत्मा की दवाई भी खायें। बीमारी में आराम शीघ्र मिलेगा।

दुनिया के सबसे बड़े डॉक्टर भगवान महावीर

संसार के प्राणी शरीर की बीमारी को तो बीमारी मानते हैं, पर आत्मा की बीमारी को बीमारी नहीं मानते। जबकि आत्मा के बुरे भाव के कर्मों का फल शरीर में रोग के रूप में नजर आता है। अक्सर देखा गया है कि इंसान जिस अंग से पाप अधिक करता है, बीमारी उसी में होती है, अथवा पेट में बच्चे को मारा हो, उसे पेट की बीमारी होती है। दूसरों का अधिक बुरा सोचने पर बुद्धि की बीमारी होती है। आदि-आदि। या बीमारी पिछले जनम के किये कर्मों के फल के कारण होती है। शरीर की बीमारी भी आत्मा की बीमारी में कारण है।

सिर में दर्द है तो दवाई सिर की खाते हैं, पेट में पेट की दवाई खाते हैं, नाक, कान, मुख, आँख जिसमें बीमारी हो दवाई उसकी खाई जाती है। अतः बीमारी आत्मा में हो तो दवाई आत्मा की खानी पड़ेगी। शरीर पीड़ा, शरीर की दवाई दिखती है तो खा लेते हैं। किन्तु आत्मा की बीमारी भावों में होती है तो दवाई भी भाव से ही खानी पड़ेगी। जैसे शरीर की दवाई उस अंग तक पहुँचानी होती है तभी वह स्वस्थ होता है वैसे ही भाव की दवाई भी भाव के द्वारा आत्मा तक पहुँचानी होगी

तभी भाव की बीमारी ठीक होगी। जैसे शरीर की दवाई पेट तक पहुँचनी आवश्यक है वैसे ही आत्मा की दवाई भाव तक पहुँचनी आवश्यक है। मात्र मुख में शराब रखने से नशा नहीं चढ़ता, पेट में पहुँचेगी तब नशा होगा। ऐसे धर्म केवल तन से नहीं बल्कि भावों से करेंगे तो आत्मा में असर होगा।

आत्मा की बीमारी के सबसे बड़े डॉक्टर भवान महावीर हैं, पहले उन्होंने अपनी बीमारी ठीक की फिर सबको उपदेश देकर बताया कि आप भी अनंत सुखी हो सकते हो।

आत्मा की बीमारी है क्रोध, मान, माया, लोभ

8 कर्म के 148 भेद हैं पर उनका राजा है मिथ्यात्व और क्रोध, मान, माया, लोभ जिसने हमारी बुद्धि को विपरीत कर रखा है। जो सत्य को सत्य नहीं समझने देता है। जो मेरा नहीं है उस पदार्थ को मेरा बनाने की भावना को जन्म देता है। जब उस वस्तु को अपना मानता है, तो उसके लिये क्रोध, मान, माया, लोभ करता है। उसके लिये हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह करता है, राग, द्वेष, मोह करता है। और पापों का उपार्जन कर दुःखों से पीड़ित होता है।

सारी दुनिया का बुखार एक सा

संसार में जैसे सबके शरीर की बीमारी एक सी होती है अर्थात् सारी दुनिया में बुखार होता है तो एक सा होता है। बीमारी जाति देश मोहल्ला नहीं देखती। वैसे ही आत्मा की बीमारी भी सारे संसार की एक सी है। और दवाई भी सबकी एक सी ही होगी, चाहे कोई हो। क्रोध की दवाई क्षमा है, मान की दवाई मार्दव है, माया की दवाई आर्जव है, लोभ की दवाई शौच (पवित्रता) है। मन की शुद्धि तभी होगी जब किसी भी वस्तु का लोभ नहीं रहेगा। यदि इस दवाई को खाया जाये, तो मन शांत, सरल, सहल, प्रसन्न होगा और अशुभ कर्म का आना रुकेगा, शुभ कर्म का आस्त्रव होगा। मन के ठीक होने पर तन भी ठीक रहेगा। वातावरण भी ठीक रहेगा।

यह दवाई भगवान महावीर ने पहले स्वयं खाकर आत्मा को कर्मों से मुक्त किया। फिर हम सबको बताया ताकि हम भी बीमारी से मुक्त हो सकें और सुखी हो सकें। सारे शास्त्र सारे प्रवचन, भक्ति, तपस्या सब इसीलिये किया जाता है। ईर्ष्या, द्वेष, क्लेश न करें।

जिस घर में जितना क्लेश उतनी बीमारी

अक्सर देखा जाता है कि घर का हर सदस्य एक दूसरे पर हावी रहता है। किसी ने बात अच्छे के लिये भी कही हो, तो वह उल्टा अर्थ निकालता है और दिन भर क्लेश का वातावरण रहता है। सब लोग किसी न किसी टेंशन में रहते हैं और धीरे-धीरे सारा परिवार किसी न किसी बीमारी से ग्रसित हो जाता है। घर में किसी का मन नहीं लगता। सब घर से बाहर भागना चाहते हैं। बाहर निकल कर ऐसा महसूस करते हैं जैसे नरक से बाहर निकले हों। ज्यादा से ज्यादा समय बाहर गुजारने का प्रयास करते हैं। जितने समय घर में रहते हैं, अशांति रहती है।

शारीरिक बीमारी से बड़ी मानसिक बीमारी

आज तक किसी ने शरीर की पीड़ा से परेशान होकर आत्महत्या नहीं की, आत्महत्या जब भी करते हैं मानसिक पीड़ा के कारण करते हैं। अपनों के प्रेम के बीच रहकर शारीरिक पीड़ा तो बरदाश्त हो जाती है, पर जब अपनों के द्वारा मानसिक पीड़ा दी जाती है, तब उसे सहन करना मुश्किल होता है और वे अपनी जीवन लीला समाप्त कर लेते हैं। अपनों का धोखा, अपनों के द्वारा छल करके स्वार्थ सिद्ध करना, अपनों के द्वारा मानसिक यातना देना, अधिक क्रोध करना इंसान को अधिक कष्टदायी होता है। जिस घर में पति पत्नी पर अधिक क्रोध करता है; वहाँ पत्नी बीमार रहने लगती है। जहाँ पत्नी पति पर अधिक क्रोध करती है; वहाँ पति का धंधा चौपट हो जाता है। जहाँ दोनों क्रोध करते हैं; वहाँ बच्चे भी हाथ से निकल जाते हैं। अतः अधिक क्रोध न करें।

मानसिक बीमारी दूर करने के उपाय

1. प्रातः उठने पर सभी परिवार के लोगों से मुस्करा के हाथ जोड़ कर जय जिनेन्द्र करें।
2. थोड़ा भी अच्छा काम करने पर प्रशंसा करें।
3. एक दूसरे को सम्मानित शब्द से संबोधन करें।
4. दूसरे की गलती क्रोध में न बताकर प्यार से बतायें।
5. दूसरे के द्वारा गलती बताये जाने पर क्रोध न करें, गलती को ठीक करें, दोबारा बोलने का मौका न दें।
6. बाहर के सभी लोगों को जय जिनेन्द्र अवश्य करें।

7. ऊँची आवाज में बात न करें। गलत तरीके से कही गई सही बात भी गलत होती है और सही तरीके कही गलत बात भी स्वीकार की जाती है।
8. ईर्ष्या में किसी पर व्यंग्य न करें।
9. किसी का काम करने के बाद, जतायें न, एहसान न बतायें।
10. आपस में एक-दूसरे पर विश्वास रखें।
11. किसी की बात छिपकर न सुनें।
12. अपनी गलती को, सफाई देकर ठीक करने का प्रयास न करें।
13. हर समय अपनी बात ऊपर रखने का प्रयास न करें।
14. खेल खेलते समय सामने वाले को भी जीतने का मौका दे।
15. किसी के बीमार होने पर सहानुभूति अवश्य दिखायें एवं शक्ति अनुसार सेवा करें।
16. किसी के संकट में काम आयें एवं उससे बदले की भावना न रखें।
17. किसी से भी अधिक बातचीत न करें।
18. भगवान पर श्रद्धा रखें, भक्ति, पूजा, स्वाध्याय, गुरु सेवा, त्याग, दान करें एवं औरों को प्रेरणा दें।
19. बातचीत करते समय इतना न खो जायें कि जो नहीं बोलना था, वो भी बोल जायें और आप चिंता में पड़ जायें।
20. भक्ति, पूजा, ध्यान, स्वाध्याय में हुई अनुभूति को किसी को न बतायें।
21. अपने राज सबको न बतायें।
22. किसी भी वस्तु के लिये लड़ाई झगड़ा न करें।
23. जिसका हिस्सा जितना है, उसे देने में अन्याय न करें।
24. किसी से लड़ाई होने पर अनबन न करें। जय जिनेन्द्र अवश्यक करते रहें।
25. अपनों से झगड़ा होने पर बाहर न कहें।
26. परिवार के सदस्यों के साथ मित्रवत् रहें, ताकि बाहर के मित्रों की आवश्यकता अधिक न पड़े।
27. एक-दूसरे से गिफ्ट, प्रशंसा, सेवा की आकांक्षा न रखें।
28. भोगों की अधिक इच्छायें और आकांक्षायें न रखें।
29. अच्छा साहित्य और धार्मिक शास्त्र का अध्ययन अवश्य करें।
30. अच्छे सपने किसी को न बतायें।
31. बुरे सपने आने पर माला अथवा शांति विधान करें।

32. अंतिम समाधि की भावना अवश्य रखें।
33. भोजन हमेशा प्रेम से करायें और शांति से करें।
34. व्रत, उपवास, पूजा आदि अवश्य करें।
35. समाज देश में सहयोग की भावना रखें।
36. अपना काम ईमानदारी से करें।
37. अपने कर्तव्यों के प्रति सजग रहें और पूर्ण करें।

मर्यादा, अनुशासन, सम्मान से घर में शांति आती है

कृष्ण की लीला और राम की मर्यादा जगत में प्रसिद्ध है। पिता-पुत्र का संबंध मर्यादा में हो। वाणी का व्यापार मर्यादा में हो। पिता मर्यादा बनाने के लिये बच्चों से मजाक आदि न करें, गंभीरता से बात करें, अपने वचनों का पालन करें, बच्चे भी मर्यादा में रहकर पिता से ऊँची आवाज में बात न करें। क्रोध आ रहा हो, तो कुछ समय के लिये क्षेत्र परिवर्तन कर दें, पर पिता पर क्रोध करके अपशब्द न बोलें। मर्यादा और अनुशासन में रहकर उनके सम्मान की रक्षा करें। थोड़ा क्रोध टालने से शांति भंग नहीं होती। क्रोध आने पर मौन ले लें। अपनों के सामने अभिमान न दिखायें।

माँ ने जन्म दिया है, माँ का उपकार मानते हुये, उनकी गलतियों को क्षमा करें, जिसने तुम्हें लायक बनाने में मेहनत की है, उन्हें नालायक न समझें, माता-पिता कम पढ़े-लिखे हैं, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। माता-पिता का हृदय बच्चों को दुआ दे, अभिशाप न दे, ऐसे काम करें। क्योंकि वो जो भी देंगे दिल से देंगे। दिल से निकली बात आप पर असर जरूर करेगी। किसी भी कारण से माता-पिता के हृदय को चोट न पहुँचायें।

संबंध जितना नजदीक हो, उतनी ही ज्यादा अपेक्षा होती है, अपेक्षा पूरी न होने पर बुरा लगता है, क्रोध आता है। क्रोध के पत्थर से दिल तोड़ा जाता है। नजदीक के प्रेम संबंध दूर होने लगते हैं। जीवन में कोई ऐसा साथी चाहते हैं, जिससे दिल की बात कह सके, जब दिल की बात सुनने वाला दिल तोड़ दे तो पीड़ा होती है। अतः नजदीक के संबंध को जीने के लिये अति सावधानी की आवश्यकता है। दोनों एक-दूसरे से अपेक्षा कम रखें, दोनों अपनी वाणी पर संयम रख कर, सुंदर शब्दों का प्रयोग एवं सुंदर संबोधन करें। एक-दूसरे के लिये सहयोग की भावना रखें। गलती हो जाने पर बदले की भावना न रखें, बल्कि उन्हें क्षमा करें। नजदीक कोई भी संबंध हो सकते हैं, चाहे पति-पत्नी का हो, मित्रता का, देवरानी-जेठानी या पड़ोसी-पड़ोसी,

सास-बहू का, भाई-भाई का हो, बच्चों के साथ का हो? सबके साथ सम्मान की भाषा का प्रयोग करें। मुस्करा कर एक दूसरे का सम्मान करें। एक-दूसरे को अपने से ज्यादा अच्छा समझे। तो निश्चित घर में शांति होगी तो बीमारी घर में प्रवेश नहीं करेगी। यदि कर्मोदय से हो भी गई, तो वह भी अपनों के बीच, अपनों के प्यार में, वो भी अच्छी ही लगती है। इतने सारे लोग जब आपके बीमारी के दूर होने की दुआ करेंगे तो, दवा और दुआ दोनों से बीमारी भी जल्दी ठीक हो जायेगी।

रथ की सवारी का
सुबह-2 बुहारी का
नहीं होने में बीमारी का
बड़ा ही महत्व है

शादी में सँवरने का
जीवन में सुधरने का
निन्दा नहीं करने का
बड़ा ही महत्व है

कर्म के हन्ता का
चुटकुले में संता बंता का
दूर करने में चिन्ता का
बड़ा ही महत्व है

धनुष में तीर का
भोजन में खीर का
केवल ज्ञानी महावीर का
बड़ा ही महत्व है

घर से दादा का
करने में वादा का
जीवन में मर्यादा का
बड़ा ही महत्व है

कंट्रोल में राशन का
देश में प्रशासन का
जीवन में अनुशासन का
बड़ा ही महत्व है

स्वभाव में नर्म का
नारी में शर्म का
करने में अच्छे कर्म का
बड़ा ही महत्व है

आलस छोड़ने के लिये किसकी तरफ देखें?

यदि आप कमरे में बैठे हैं, कोई दूसरा मनुष्य आपके पास नहीं है, तो अपने-आपसे पूछे! आपके पास कौन है? उत्तर होगा, मैं अकेला हूँ। अब इसी बात पर चिन्तन करें कि क्या मैं अकेला नहीं! जिस कमरे में बैठे हैं, वहाँ मच्छर भी हैं, मक्खी भी, चूहा, बिल्ली आदि भी हो सकते हैं। छिपकली भी हो सकती है और आप कहते हो, हम अकेले हैं। पानी अलग-अलग बर्तनों में रहने से अलग नहीं हो जाता। हर बर्तन का पानी एक है। इसी तरह शरीर अलग-अलग हो जाने से आत्मा अलग नहीं होती। आत्मा तो वही है। अर्थात् कमरे में आप अकेले नहीं हैं, आपके साथ और भी जीव हैं। सूक्ष्म निगोदिया तो अनंतानंत भरे पड़े हैं।

अब हमने मच्छर, मक्खी की तरफ ध्यान दिया, तो देखें वे क्या करते हैं अर्थात् मच्छर काटता है। आपके कमरे में पहुँचते ही आपके आस-पास मंडराने लगता है। कभी कान में आकर गीत सुनाता है, कभी हाथ पर, गाल पर, पांव पर बैठ आपके शरीर का खून चूसता है। आप उसे उड़ा देते हैं, वो फिर आ जाता है। आप फिर उड़ाते हें, ऐसा कई बार करते हैं। दोनों अपना-अपना काम क्यों कर रहे हैं, दोनों को सुख चाहिये मच्छर को खून का सुख चाहिये, इंसान कष्ट से बचना चाह रहा है। पर मच्छर भी कम नहीं जब तक आप बैठे रहेंगे, मेहनत करता रहेगा। मच्छर मक्खी आलसी नहीं। वह अपनी मेहनत में कमी नहीं करता और वह सफलता भी प्राप्त करता है। एक मच्छर जिसके पास बड़ा शरीर नहीं, इंद्रियाँ पूरी नहीं हैं, वह भी कितनी मेहनत करता है, इंसान आलस क्यों करता है। एक मक्खी को उड़ाओ, तो वह फिर वापस आ जाती है। दरवाजे के बाहर बैठी होती है, जैसे ही दरवाजा खुलता है, झट से अंदर आ जाती है। चूहा घर में मुख्य द्वार से न घुस पाये तो, न जाने कहाँ-कहाँ से जमीन को खोदकर अलमारी और कमरे में पहुँच जाता है। चींटी अपने शरीर के वजन से अधिक वजन लेकर ऊपर चढ़ती है, बार-बार गिरने पर भी वह हारती नहीं हैं।

मनुष्य में अनंत संभावना

मच्छर, मक्खी, चूहा कितनी भी मेहनत कर ले पर भोजन से ज्यादा वे कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाते। किन्तु मनुष्य के अंदर अनंत संभावनाएं छिपी हैं। उसकी शक्ति भी अपार है। शारीरिक क्षमता भले हो, मानसिक क्षमता से कमजोर शरीर से बड़े-बड़े कार्य कर सकता है।

आज के लिये बहुत काम है

जिस दिन, जिस समय में हम जी रहे हैं, उस दिन के लिये ही अनेक काम सामने तैयार खड़े रहते हैं। बच्चा हो, जवान हो, या बूढ़ा अपने-अपने स्तर के काम सबके पास है। ये कर्म भूमि है, यहाँ बिना काम किये जीवन का गुजारा संभव नहीं है। छोटे बच्चे की क्रिया, बालक का खेल-कूद और पढ़ाई का शुभारंभ, युवावस्था में मित्रता के संबंध और निभाने के भाव। शादी होने पर महिला पुरुष दोनों की अपनी-अपनी जिम्मेदारी। अर्थात् संसार में किसी को फुर्सत नहीं है। सब बिजी हैं। कुछ लोग तो बिना काम के भी व्यस्त रहते हैं।

कुछ आवश्यक क्रिया हम रोज करते हैं। चाहे कुछ भी हो, एक नंबर जाना, दो नंबर जाना, भोजन करना, पानी पीना, प्रतिदिन सोना, जागना, बीमार हो जायें तो समय पर दवाई खाना ये सारी क्रियाएँ शरीर हमसे करवाता है या हम स्वयं जागरूक होकर करते हैं, कुछ भी हो, ये सारे कार्य तो रोज करने ही पड़ते हैं। नहीं करेंगे तो परिणाम गलत हो जायेगा। जैसे यदि कोई दो, तीन दिन तक शौच न जाये तो पेट में कितना इकट्ठा होगा आदमी बीमार पड़ जायेगा। इसलिये वह इस क्रिया को करता ही करता है। इसी तरह घर में साफ-सफाई की जाये तो उसका प्रभाव भी शरीर पर और देखने वालों पर पड़ता है। इसे हम कल पर नहीं टाल सकते। जिसके घर में गंदगी और कबाड़ होता है, वास्तु के हिसाब से भी घर में अच्छे कार्य नहीं होते, और लक्ष्मी, सुख और शांति तीनों वहाँ नहीं रहती। हमें नींद आ रही हो, तो हम कल पर नहीं टालते, कि कल सो जायेंगे। भूख लगती है, तो कल पर नहीं टालते, कि कल खा लेंगे। इसी तरह हमारे अन्य कार्य भी हैं, जिन्हें हमें कल पर नहीं टालना चाहिये।

बच्चे यदि कई दिन तक होम वर्क न करें, तो ढेर इकट्ठा हो जाता है और फिर टेंशन होती है। व्यापारी अपने दुकान का हिसाब-किताब रोज न करें, तो भी वह परेशान होता है।

कल पर न टालें

कहा जाता है कि संसार में इंसान का सबसे बड़ा शत्रु आलस है, प्रमाद है। इंसान इस आलस के कारण बड़े-बड़े कार्यो से वंचित रह सकता है। बड़े-बड़े लोगों के द्वारा लाभ लेने से वंचित रह जाता। व्यापार में आलस करने पर घाटा हो जाता है। बच्चे पढ़ाई में आलस करते हैं, तो परीक्षा हॉल में बैठकर पछताते रहते हैं और परीक्षा फल अच्छा नहीं आता, जिससे उनका भविष्य भी खतरे में पड़ जाता है। महिलायें रसोई के काम आलस करें, तो कभी-कभी दुर्घटना भी घट जाती है। बूढ़े भगवान का नाम लेने में आलस करें, तो उनका मरण भी बिगड़ जाता है। मरण बिगड़ने से उसके पूरे जीवन की साधना व्यर्थ चली जाती है। साधु अपने नित्य के आवश्यक में आलस करें, भावों में शिथिलता आ जाती है। धर्मात्मा यदि स्वाध्याय में आलस करें, तो होने वाली विशुद्धि से वंचित रह जाता है। मन की अशुद्धि के कारण दुःख संकट पीड़ाओं को सहन करके दुर्गति में चला जाता है। आलस ऐसा शत्रु है जो इहलोक और परलोक दोनों बिगाड़ देता है।

अतः किसी भी काम को कल पर न टालें, आज करें अभी करें। लोगों को जब बताया जाये, तो वह अक्सर कह देते हैं कि ''हो जायेगा''। चिन्ता न करें। ''हो जायेगा'' और ''अभी करते हैं'' ये दोनों शब्दों में अंतर है। हालांकि उस समय यदि कोई जरूरी काम कर रहा है, तो बात अलग है, पर उत्तर तो यही होना चाहिये इस काम के बाद ये करते हैं। या उसे अपनी डायरी में लिखे कि कब करना। जो व्यक्ति कहता है कि ''हो जायेगा चिंता न करो'' उससे काम करवाने वाले को चिंता करनी ही पड़ती है। वरना धोखा हो जाता है।

अक्सर लोग कहते है ''कोई दिक्कत नहीं हो जायेगा। अरे ये तो बहुत सरल है। काम वास्तव में सरल है पर आलस में यदि नहीं किया तो ये कठिन भी हो जायेगा। जो सब्जेक्ट (विषय) बच्चों को सरल लगता है। वे लापरवाही में उसे पढ़ते

नहीं हैं। और उसी सरल विषय में परीक्षा में नंबर कम आते हैं। इंसान में वर्तमान में, भूलने की बीमारी बहुत ज्यादा रूप से हो रही है। अतः काम तुरंत करें, तो हो जायेगा यदि भूल गये तो काम होगा हीं नहीं।

जो काम को कल पर टालते हैं, हो सकता है कि उसके पास बहुत सारे काम इकट्ठे हो जायें कि वह सोचता ही रहे कि, क्या करूं, क्या न करूं रात में नींद भी न आये कि इतने काम इकट्ठे हो रहे हैं कैसे करूं अकेले। यदि काम तुरन्त कर लेता तो शायद अकेले भी हो जाता। पर इकट्ठे होने पर काम में अब औरों की जरूरत भी है। काम तुम्हारा है तो औरों से करवाने की अपेक्षा क्यों करते हो। जब तुम किसी और का सहयोग नहीं करतें, तो तुम्हारा कौन करेगा।

व्रत नियम धरने का
पहाड़ों पर झरने का
आज का काम आज करने का
बड़ा ही महत्व है

रहने के लिए जमीं का
बारिश में नमी का
ढाई द्वीप में कर्मभूमि का
बड़ा ही महत्व है

अनाज को चालने का
बच्चों को पालने का
काम को नहीं टालने का
बड़ा ही महत्व है

लिखने में स्याही का
अच्छे काम में वाह वाही का
नहीं करने में लापरवाही का
बड़ा ही महत्व है

भाषा में सरस का
भोजन में रस का
नहीं करने में आलस का
बड़ा ही महत्व है

भोजन में चखने का
पांव में टखने का
अपने काम डायरी में लिखने का
बड़ा ही महत्व है

सहयोग के बिना जी नहीं सकते

इंसान के जीवन जीने में असंख्य अनंत जीवों का सहयोग होता है, तब कहीं जाकर वह अपने जीवन को जी पाता है। एक बच्चा यदि जन्म लेता है, तो मात्र एक परिवार पर ही उसका प्रभाव नहीं पड़ता बल्कि पूरे देश और विश्व पर पड़ता है। बच्चे के जन्म में सरकार की जिम्मेदारी बढ़ जाती है। प्रशासन का, सुरक्षा का दायित्व बढ़ता, मोहल्ले में पर भी प्रभाव पड़ता है, रिश्तेदार मित्रों पर प्रभाव पड़ता है। सब अपने-अपने हिसाब से सहयोग करते हैं। अभी तो जन्म लिया है, जिस परिवार में जन्म लिया है, वह परिवार, समाज, देश और लोगों से कितना जुड़ा है, इसका प्रभाव भी पड़ता है।

अभी तो जन्म हुआ है

तुरंत जन्मा बच्चा कुछ भी नहीं कर सकता है। अर्थात् अपना, वस्त्र, भोजन, आवश्यकता की वस्तुएँ अपने आप नहीं ले सकता। असमर्थ हैं, असहाय हैं, निर्बल हैं। बाहर की सुरक्षा भी स्वयं नहीं कर सकता। मक्खी, मच्छर, सांप, बिच्छू से भी अपनी सुरक्षा नहीं कर सकता माता-पिता उसकी सुरक्षा करते हैं, माता भोजन देती है, वस्त्र पहनाती है, शू-शू पोटी भी साफ करती है। खिलाती है, प्यार करती है। बच्चे के अनुसार उसके जीवन जीने में सहयोग करती है। बिना सहयोग के भविष्य बनना मुश्किल है। बच्चे के मुस्कराने पर मुस्कुराती है, बच्चे के दुःखी होने पर दुःखी होती है। बीमार होने पर डॉक्टर के यहाँ ले जाती है। तब कहीं जाकर बच्चा बड़ा होता है। थोड़ा बड़ा होने पर माता-पिता बच्चे की शिक्षा संस्कार की व्यवस्था करते हैं। और बड़े होने पर बाहर के बुरे संस्कारों से बचाते हैं। आत्मा-परमात्मा की शिक्षा देकर धार्मिक संस्कार देते हैं। हाथ जोड़ना सिखाते हैं, दान करना सिखाते हैं, पूजा-पाठ सिखाते हैं। बड़े होने पर व्यापार करवाते हैं, जॉब की व्यवस्था करते हैं, युवा होने पर शादी करते हैं, फिर उनके बच्चों की सेवा करते हैं।

आप सोचिये परिवार यदि जन्म देने के बाद छोड़ देता, तो आज क्या हालत होती। आज जीवन बिना संस्कारों के पशु जैसा होता। कहीं खा लिया, कहीं भी सो गये, दिन भर व्यर्थ घूमते रहे, जीवन का उपयोग नहीं कर पाते। जीवन का सबसे ज्यादा उपयोग मनुष्य ही कर सकता है। जन्म के समय हम कुछ नहीं थे, पर सबने मिलकर हमारे जीवन को उत्तम बनाया, सुंदर बनाया। इसमें देश समाज, मोहल्ले, रिश्तेदार और परिवार सबका सहयोग है, सबने हम पर उपकार किया है।

हवा, पानी, कपड़ा, मौसम, धरती, बाग, बगीचे, पेड़-पौधे, नदी, समुद्र, पहाड़, बादल सब सहयोग करते हैं।

दुख के वियोग का
कर्म के नियोग का
करने में सहयोग का
बड़ा ही महत्व है

रिश्तों में नानी का
बचपन के बाद जवानी का
सहयोग में पानी का
बड़ा ही महत्व है

सूजी में रवा का
बीमार में दवा का
सहयोग में हवा का
बड़ा ही महत्व है

छोड़ने में द्विदल का
राजनीति में दल का
बारिश के लिए बादल का
बड़ा ही महत्व है

भैंस के पड़ा का
हाथ में कड़ा का
सहयोग में कपड़ा का
बड़ा ही महत्व है

गाने में आवाज का
बोलने में अंदाज का
जीवन में समाज का
बड़ा ही महत्व है

बच्चों में रिबन का
रहने में भवन का
आत्मा के लिए मनुष्य जीवन का
बड़ा ही महत्व है

मनुष्य ही ज्ञान, संस्कार, सुख में वृद्धि कर सकता है

शिल्पी पाषाण को छैनी-हथौड़े की चोट मार-मार कर एक अनघड़ व्यर्थ पाषाण को परमात्मा बना देता है। जो पाषाण खान में पड़ा था, जिसे कोई देखता भी नहीं था, वह पाषाण श्रद्धा उत्पन्न करने में सहायक बन जाता है। जिसे कोई देखता भी नहीं था, शिल्पी के संस्कारों से एकटक देखने योग्य बन जाता है। शिल्पी की चोट ने पाषाण को वरदान बना दिया। इसी तरह माता-पिता अपने बच्चे के जीवन को शिक्षायें देकर योग्य बना देते हैं। बचपन में स्वयं ज्ञान नहीं होता कि क्या अच्छा है, क्या बुरा है। माता-पिता बच्चे का भविष्य जानते हैं कि कैसे अच्छा बनेगा? अतः दिन में कई बार बहुत बातों के लिये मना करते हैं, और उसके बदले अच्छा सिखाते हैं। बच्चों को बुरा लगता है। चोट लगती है तो गुस्सा भी आता है। पर माता-पिता इसकी परवाह किये बिना, डांटते भी हैं और सिखाते भी हैं।

माता-पिता के साथ समय-समय पर बच्चा जहाँ-जहाँ जाता है, वहाँ भी सिखाया जाता है। स्कूल जाते हैं तो टीचर सिखाती है, मंदिर जाते हैं वो समाज के लोग सिखाते हैं। पाठशाला में शिक्षिका सिखाती है। जो बच्चा इन सबसे संस्कार लकर आगे बढ़ता है वह गुणवान बन जाता है। सुंदर और अच्छा जीवन जीने के बीज डालकर, भविष्य में सुंदर फल प्राप्त करता है। पर जो बच्चा इन सब बातों का बुरा मानकर गुस्सा करता है, सीखने से इंकार कर देता है। वह बालक का भविष्य सुखद नहीं होता। कई बाहर वालों के टोकने का माता-पिता को भी बुरा लगता है, और उनसे लड़ने पहुँच जाते है। टीचर से लड़ने पहुँच जाते हैं। डांट-खोट निकालती है, डांट शुद्ध सोना बनाती है। डांट में चोट तो लगती है पर बुराइयों का व्यर्थ खंड निकल जाता है। और इंसान का आकार इंसान का बन जाता है। मात्र शरीर के आकार से दिखने वाला मनुष्य-मनुष्य नहीं होता, मनुष्य होने के लिए मनुष्य के गुण होना भी आवश्यक हैं।

जन्म के समय इंसान अनघड़ पाषाण की तरह होता है, परिवार शिल्पी के समान हमें मनुष्य और इंसान की तरह जीना सिखाता है। तब कहीं जाकर वह जीवन को सुंदर बना पाता है। जितना शिक्षित और संस्कारित इंसान अपने बच्चे को करता है उतना संसार में चारों गति में कोई जीवन नहीं करता। क्योंकि नारकी और देवो के बच्चे नहीं होते, पशु मे ंअपने बच्चों को शिक्षित करने की क्षमता नहीं, अतः संस्कार और शिक्षा मनुष्य में ही संभव है। देवता नारकी पशु जितना ज्ञान लेकर पैदा होते हैं, संपूर्ण जिन्दगी उतना ही रहता है, किन्तु मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो अपने ज्ञान सुख, शिक्षा और संस्कार में वृद्धि कर सकता है। यदि वह अपना समय आलस में व्यर्थ करे तो समझना चिन्तामणि रतन को पाकर उसने लाभ नहीं लिया। अतः किसी के टोकने का बुरा न माने और अपने संस्कार शिक्षा से सुख में वृद्धि करें।

दूर होने में अज्ञान का
खोज करने में विज्ञान का
जीवन में धर्म ज्ञान का
बड़ा ही महत्व है

भोजन के बाद डकार का
छोड़ने में तीन मकार का
जीवन में अच्छे संस्कार का
बड़ा ही महत्व है

जेब में नोट का
नेता में वोट का
पाषाण पर शिल्पी की चोट का
बड़ा ही महत्व है

बनिया में बाँट का
गाँवों में खाट का
टीचर की डाँट का
बड़ा ही महत्व है

पढ़ाई करने, क्या करें?

स्वस्थ तन में स्वस्थ मन निवास करता है। यदि शरीर बीमार होगा तो मन स्वयं ही बार-बार तकलीफों की तरफ जायेगा। इसलिये तन को स्वस्थ रखने के लिये पर्याप्त शुद्ध सात्विक भोजन, प्राणायाम, ध्यान एवं योग आवश्यक है। कोरोना महामारी के काल में घर के 2 या 4 कमरों में तीन-चार महीने निकालना बड़ा मुश्किल का काम था। इसलिये छत पर बैठकर या बालकनी में बैठकर प्राणायाम योगा ध्यान के लिये समय अवश्य निकालें। सोना, खाना, नहाना आवश्यक क्रियाएँ हैं वैसे ही इसे भी अपनी दिनचर्या में शामिल करें।

चिन्ता मुक्त मन, तन को स्वस्थ करता है

अब दूसरे पहलू से देखें तो बीमार व्यक्ति भी यदि हँसता, मुस्कराता, सकारात्मक सोच रख कर कार्य करता है, तो बीमारी भी जल्दी भाग जाती है। प्रसन्न रहने से बीमारी महसूस भी नहीं होती है। जिस पर ध्यान ज्यादा न दिया जाये, वह टिकता नहीं है। इसलिये बीमारी पर ध्यान न देकर, किसी न किसी कार्य में व्यस्त रहें, तो मन के साथ तन भी स्वस्थ हो जाता है। कहाँ भी है ''खाली दिमाग शैतान का घर।'' अर्थात् जो काम में व्यस्त नहीं होगा, वह बिना वजह, किसी न किसी बात को याद करके चिन्ता में घुनता रहेगा। उसकी ये चिन्ता स्वस्थ व्यक्ति को भी बीमार कर देगी। इसलिये चिन्ता न करके चिन्तन पर विशेष ध्यान देना चाहिये।

अधिक चिन्ता करने वाले को अनेक तरह की बीमारियाँ आनी शुरू हो जाती है। डिप्रेशन, शुगर, बी.पी. (ब्लड प्रेशर), हार्ट अटैक, सिरदर्द और अन्य तरह की भी बीमारियाँ आ जाती। दिमाग की नसों पर दबाव पड़ने से, उसका असर पूरे शरीर पर होता है।

अतः मन को प्रसन्न रखना आवश्यक है। घर के काम करके, पढ़ाई, व्यापार आदि करके मन प्रसन्न होता है, किन्तु ध्यान करने से आत्मा प्रसन्न होती है। अतः

ध्यान प्रतिदिन किया जाये, तो इससे जीवन जीने का नया रास्ता मिलता है एवं प्रसन्नता में वृद्धि होती है। अतः तन को स्वस्थ करने के लिये, मन को भी चिन्ता से मुक्त रखना आवश्यक है।

काम बड़ा या छोटा नहीं होता, यदि हमसे न किया जाये तो हमें बड़ा लगता है, और किया जाये तो छोटा लगता है। इसलिये करने का रास्ता ढूंढिये, उसे बड़ा न समझिये। समझ में आते ही वह छोटा हो जायेगा। किसी भी किताब को समझने की जरूरत है, उसे मन को एकाग्र करके पढ़िये, फिर देखें कैसे समझ में नहीं आती। जब बचपन में जब पहली क्लास में होते हैं तो क ख ग भी कठिन लगते हैं, फिर भी उसे पढ़ते हैं परीक्षा देते हैं, दूसरी क्लास में आते हैं वो पहली क्लास की पढ़ाई सरल और दूसरी की कठिन लगने लगती है। ऐसे करते-करते हम आज यहाँ तक पहुँच गये। यहाँ भी ऐसा ही है, पढ़ने के बाद सरल लगेगा।

डिजीटल स्टडी करने से आँखों पर जोर पड़ता है, थकान अधिक महसूस होती है। तब पढ़ाई करने के बाद आँख बंद करके जो पढ़ा है उसे रिपीट कीजिये, उसका रिवीजन कीजिये। इससे मन की एकाग्रता बढ़ेगी, आँखों को आराम मिलेगा, और जो पढ़ा है वह विषय समझ में अच्छी तरह से आ जायेगा, और लम्बे समय तक याद रहेगा तथा अपनी पढ़ाई की परीक्षा भी हो जायेगी स्वयं की योग्यता का आकलन भी हो जाता है। अतः जो पढ़ाई आँख खोलकर की है, उसे आँख बंद करके भी करो, तो याद करने में ज्यादा मेहनत नहीं लगेगी एवं आँख को भी आराम मिलेगा।

पढ़ाई के काल में अपने मन को स्थिर रखने के लिये उन लोगों से बात न करें, जिनसे बात करने के बाद मन भटकता है। अधिक मित्रता निभाने के चक्कर में अपने तन और मन को कष्ट न दें, उसे स्वस्थ रखने का प्रयास करें। क्योंकि मन की भटकन इंसान के भविष्य को खराब कर देती है। मित्रों के कारण अपने माता-पिता से झगड़ा न करें, भाई-बहनों के साथ सम्मानीय व्यवहार करें। आप बड़े हैं, तो छोटे भाई बहन पर क्रोध न करें और उन्नति के उपाय सोचे। ऐसा करने पर घर में रहना है, तो घर का वातावरण सुंदर बनाना आवश्यक है। मम्मी के साथ घर का काम करें। यदि आप लड़के हैं, तो थोड़ा बहुत पिता के काम के लिये भी समय निकाल सकते हैं।

यदि इस तरह आपने अपना समय बिताया है आपका तन और मन दोनों स्वस्थ होंगे मन पर संयम रखें, वचन पर संयम रखे।

कब तक सीखते रहेंगे अ आ इ ई

पूर्व दिशा से सूरज प्रतिदिन निकलता है। दोपहर को चढ़ता है और शाम को ढल जाता है। फिर सूरज के जाते ही अंधेरा हो जाता है। दूसरे दिन फिर सूरज निकलता है, चढ़ता है और ढल जाता है। यह क्रम अनादि काल से चल रहा है। सूरज के पास ऐसा कोई उपाय नहीं है कि वह अपनी यात्रा को विराम दे सके। सृष्टि और प्रकृति के नियम का पालन उसे भी करना पड़ेगा।

पेड़ पर पहले कली बनती है, फूल खिलता है, मुरझाता है और टूट कर फूल धूल में मिल जाता है। इसी तरह फलादि भी एक दिन अंतिम अवस्था को प्राप्त होकर पुनः जन्म लेने की कड़ी में शामिल हो जाते हैं।

नदियाँ पहाड़ों से निकलती हैं, हजारों मील का सफर करके एक दिन समुद्र में मिल जाती हैं। फिर सूर्य किरणों से वाष्पित होकर आकाश में जाकर पहाड़ों पर बारिश बनकर बरस जाती है। सरिताओं का ऐसा क्रम न जाने कबसे चला आ रहा है।

इंसान गर्भ में आता है, नौ माह बाद जन्म लेता है। बचपन में अ आ इ ई उ ऊ सीखता है, बड़ा होकर धन कमाता, जवान होकर संसार के कार्य करता है। धीरे-धीरे बुढ़ापा आता है और मृत्यु हो जाती है। फिर गर्भ में आता है पुनः अ आ इ ई सीखता है और वही पुराना क्रम धन जमीन परिवार इकट्ठा करता है और छोड़कर पुनः चला जाता है।

ऐसा करने का क्रम अनंत काल से चला आ रहा है। कब तक अ आ इ ई सीखते रहोगे? कब तक परिवार इकट्ठा करके उसे छोड़ते रहोगे? कब तक धन इकट्ठा करके छोड़ते रहोगे? पूछो इन सारे प्रश्नों के उत्तर स्वयं से। जब मिले तो मंदिर में जाकर भगवान महावीर या किसी वीतरागी तीर्थंकर से पूछ लेना। इस परंपरा को सर्वज्ञ प्रभु ने तोड़ दिया। अ आ इ ई का ज्ञान नहीं उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त कर लिया, जो अजर, अमर अविनाशी और अक्षय है। एक बार प्रगट हो गया तो अब दोबारा जायेगा नहीं। अनंत काल तक इसकी ज्योति बुझेगी नहीं।

जिसे कुछ पाना है उसे कुछ छोड़ना पड़ेगा, जिसे बहुत कुछ पाना है, उसे बहुत कुछ छोड़ना पड़ेगा, और जिसे सब कुछ पाना है, उसे सब कुछ छोड़ना पड़ेगा। अर्थात् हमारे वीतरागी भगवान ने संसार की समस्त वस्तु और समस्त मोह का त्याग किया, तो उन्होंने सब कुछ अर्थात् अपनी आत्मा को प्राप्त कर लिया। हमें भी अपनी जन्म मरण की परंपरा को तोड़ना है, तो स्वयं से नाता जोड़ना होगा। आत्मा संबंधित विचार और भाव करना होगा। आत्म तत्त्व की भावना निरंतर भानी होगी और संसार से मोह छोड़ना होगा। तभी अनादि काल से चल रही इस परंपरा का नाश होगा वरना दोहराते रहेंगे वही कहानी—

वही सर्दी वही गर्मी वही बातें पुरानी हैं
वही लेना वही देना वही खाते पुराने हैं
अनादि काल से हमने वही सब कुछ है दोहराया
वही रिश्ते, वही झगड़े वही नाते पुराने हैं।

पुरानी रीत पुरानी प्रीत पुराने ही बहाने हैं
इसी में खो गया जीवन, इसी से ही अंजाने हैं
जागो जागो हे आतमराम ये अवसर हाथ आया है
नहीं समझा जो आतम को, वही दुःख भी पुराने हैं।

दूध में मलाई का
हाथ में कलाई का
सीखने में अ, आ, इ, ई का
बड़ा ही महत्व है

पापो से बचने का
मेंहदी के रचने का
स्वयं से प्रश्न पूछने का
बड़ा ही महत्व है

सीप में मोती का
दादा की पोती का
केवल ज्ञान की ज्योति का
बड़ा ही महत्व है

होने में संज्ञान का
जीवन में सुज्ञान का
भगवान के केवलज्ञान का
बड़ा ही महत्व है

अक्षरीय ज्ञान की आवश्यकता क्यों?

संसार को अक्षरीय ज्ञान के बिना भी चलाया जा सकता। जैसे—व्यापार भी अक्षरीय ज्ञान के बिना हो सकता है। भोजन पानी के काम में भी आवश्यकता नहीं है, परिवार, गृहस्थी संभालने में भी अधिक आवश्यकता नहीं। रिश्तेदारी निभाने में भी जरूरी नहीं है। बच्चों को जन्म देने में और उनके लालन पालन में भी अक्षरीय ज्ञान आावश्यक नहीं। बड़े-बड़े सेठ अगूंठा छाप होते हैं, करोड़ों अरबों के मालिक आज भी हैं। अर्थात् धन कमाने में पुरुषार्थ के साथ भाग्य की प्रधानता है। बच्चे से प्रेम करने के लिये, कोई किताब नहीं पढ़ी जाती कि प्रेम कैसे किया जाता है? पति-पत्नी का रिश्ता निभाने के लिये कोई शिक्षा नहीं ली जाती। महिलायें प्रतिदिन भोजन बनाती है उसके लिये किसी किताब की आवश्यकता नहीं। चतुर्थ काल के प्रारंभ में, जो शिक्षा दी गई वह आज तक चली आ रही है। खेती बाड़ी करने के लिये क्रमशः सीख जाते हैं और अच्छी तरह से बिना पढ़े-लिखे लोग भी खेती कर लेते हैं।

बिना अक्षरीय ज्ञान के मोह संसार चलाया जा सकता है, तो बिना अक्षरीय ज्ञान के धरम क्यों नहीं हो सकता? द्रव्यज्ञान भाव ज्ञान, अक्षरीय ज्ञान द्रव्य ज्ञान, आत्मा में भाव ज्ञान होता है। भावों के द्वारा ही धर्म किया जाता है। प्रभु के दर्शन में भाव की आवश्यकता है। मंत्र पढ़ने में भाव की आवश्यकता है साधन कम होने पर, सुख कम, पर शांति ज्यादा थी। तुम अखबार पढ़कर खबर लेते हो, वो पड़ोस में जाकर लेता है। वैराग्य भावना लाने में भाव की आवश्यकता है। उपवास, व्रत, दान करने में भाव श्रद्धा की आवश्यकता है, सेवा, विनय करने में भावों की ही जरूरत है, पश्चाताप प्रायश्चित भी भावों के द्वारा किया जाता है और जिसके द्वारा मोक्ष की प्राप्ति होती है, वह ध्यान भी भावों से होता है, ध्यान में कोई किताब नहीं पढ़ी जाती। अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति भी भावों से होती है।

भावना भव नाशिनी,
भावना भव वर्द्धिनी॥

पहले के समय में लोग पढ़े-लिखे बहुत कम मात्रा में होते थे, पर भावात्मक रूप से अत्यंत संवेदनशील होते थे। एक घर के कुंवर साहब पूरे गाँव से प्यार करते थे। सुख के भौतिक साधन नहीं थे पर शांति अधिक थी। सुबह जल्दी उठना और नित्यकर्म एवं धार्मिक क्रियाएँ पूर्ण करते थे। दूसरों के सुख-दुःख दोनों में भावना से सहयोगी बनते थे। आज ज्यादातर लोग पढ़े-लिखे हैं, भावना से व्यवहार में कमी आ रही है।

जब भावों से ही सारा काम होना है, तो अक्षरीय ज्ञान की आवश्यकता क्यों? प्रश्न बहुत अच्छा है। जीव के अंदर की शक्ति है भाव, भाव सोने के समान है, पर अक्षरीय ज्ञान सोने में सुहागा है, अर्थात् भाव के साथ यदि अक्षरीय ज्ञान हो जाये, छुपे ज्ञान को उभारने में समय कम लगेगा। अक्षरीय श्रुत चेतना को जाग्रत करने में सितार में झंकार देकर सुंदर सुर निकालने के समान है। वीणा है पर बजाने का ज्ञान नहीं तो वीणा की मधुर ध्वनि का आनंद नहीं उठाया जा सकता। इसी तरह भाव है पर उसे कहाँ ले जाया जाये, दिशा नहीं तो आगे बढ़ना मुश्किल होगा। अतः द्रव्यश्रुत ज्ञान, भावों को संस्कारित करता है और दृष्टिकोण को विकसित कर, ज्ञान की सूक्ष्म गहराई में जाता है।

अक्षरीय ज्ञान नक्शा है

किसी भी गन्तव्य स्थान तक पहुँचने के लिये नक्शा जो काम करता है, वही काम ज्ञान मंजिल तक पहुँचाने का करता है। मंजिल कोई भी हो सकती है; जिसे सूरज चांद सितारों को जानना है, उसे ज्योतिष ज्ञान सहायता करता है। जिसे तीन लोक और नदी, पहाड़, समुद्रों का ज्ञान करना हो, उसे भूगोल या सिद्धांत ज्ञान सहायता करता है। जिसे शरीर को जानना हो, कैसे आयुर्वेद सहायता करता है। जिसे अणु परमाणु को जानना हो, उसे पुद्‌गल विज्ञान सहायता करता है। जिसे आत्मा परमात्मा को जानना हो, उसे अध्यात्मिक ज्ञान सहायता करता है। मंजिल और आचरण में उतार ले, तो मोक्ष मंजिल पर पहुँचा देता है। कर्मों में फंसे, मोह के दलदल में धंसे प्राणी को बाहर निकलने में, द्रव्यश्रुत ज्ञान की बहुत बड़ी भूमिका है। जब सूर्य न निकले, तब तक दीपक से ही काम चलाना होगा। ज्ञान रूपी सूर्य को आमंत्रित करने के लिये, द्रव्यश्रुत ज्ञान रूपी दीपक से आराधना करनी होगी। तो एक दिन ज्ञान सूर्य उदित होगा। अज्ञान का नाश और सुख का विकास होगा।

ज्ञान अहंकार का कारण न बने

अहंकार नहीं हो इस बात का ज्ञान होना आवश्यक है, पर ज्ञान का ही अहंकार हो जाये, तो खतरे में जीवन आ सकता है। वर्तमान समय की भौतिक शिक्षा ने अहंकार को जन्म दिया है, यह शिक्षा भी कलह क्लेश और अशांति का कारण बन रही है। ज्ञान बढ़ने पर सुख बढ़ना चाहिये, वरन ऐसा नहीं देखा जा रहा, ज्ञान तो बढ़ रहा है, पर अनीति, अन्याय, भ्रष्टाचार, हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, पैसे का तीव्र लोभ भी बढ़ रहा है, सेवा सत्कार भी कम होता जो रहा है, केवल औपचारिकताएं रह गई हैं। जबकि कहा है—

विद्या ददाति विनयं, विनयं ददाति पात्रताम।

अर्थात् विद्या प्राप्त करने से विनय आती है, विनय से पात्रता, योग्यता बढ़ती है। पर आज उल्टा ही देखा जा रहा है। शिक्षा शब्द का अर्थ संस्कार, जहाँ संस्कार नहीं, वह शिक्षा अधूरी है। संस्कार के साथ ली गई शिक्षा ज्ञान है, बिना संस्कारों की शिक्षा मात्र कोरा ज्ञान है, जिसमें संस्कार नहीं। जहाँ संस्कार नहीं; वहाँ सुख शांति नहीं। पढ़ा-लिखा बेटा माता-पिता को डांटे, वहाँ सुख कैसा। जहाँ पत्नी-पति को धमकी दे, पति डरा-डरा जिंदगी बिताये वहाँ, सुख शांति कहाँ। जहाँ रिश्तेदारी केवल स्वार्थ के लिये हो, वहाँ प्रेम कहाँ, आत्मिक शांति कहाँ।

जो ज्ञान सुख शांति न दे...

ज्ञान का कार्य सुख और शांति को देना पर अक्षरीय ज्ञान में क्रोध, मान, माया, लोभ शामिल हो जाये, तो वह अशांति का कारण बनता है, जो ज्ञान हमें अनंत सुख देने की संभावना रखता है, उससे हमें दुःख मिल रहा है, इसमें हमारी ही कमी है। जब अक्षरीय नहीं था, तो पाप कम होते थे, पर अक्षरीय ज्ञान करने पर पाप प्रकृति, पाप भाव, पाप आचरण करने में और ज्यादा कुशल हो गये। इससे अच्छा था कि अक्षरीय ज्ञान होता ही न। बिना पढ़े लिये ही सही थे, एक हथियार से एक को मारते थे, ज्ञान बढ़ने पर एक बम से, करोड़ों लोगों को एक बार में मार देते हैं। शेर भी इतनी हत्या नहीं कर पाता जितनी मनुष्य कर लेता है। शेर तो केवल जितना भोजन चाहिये उतने जीवों की हत्या करता है। पर इंसान अपने अहंकार के लिये लोगों की हत्या करता है। अतः ज्ञान होने पर, उस ज्ञान का सदुपयोग कैसे किया जाये, इस बात का ज्ञान होना भी आवश्यक है। जैसे—डॉक्टर के हाथ में चाकू हो, तो किसी को जीवन दान देता है और डाकू के हाथ में चाकू हो, तो किसी की

जान लेता है। ठीक इसी तरह का भौतिक ज्ञान है। ज्ञान के उपयोग का ज्ञान करना भी जरूरी है।

ज्ञान ले जाता है

ज्ञान का सदुपयोग इंसान को स्वर्ग और मोक्ष ले जाता है। जीवन में ज्ञान के माध्यम से करने वाले सद्कार्य उसे स्वर्ग और मोक्ष ले जाता है। ज्ञान का दुरुपयोग करने वाले को ज्ञान नरक और पशु गति में ले जाता है। ज्ञान दूसरों का भला करे न करे पर स्वयं का भला करता है, जब हम इसका सदुपयोग करे। ज्ञान दूसरों का बुरा करे न करे, पर हमारा बुरा होता है, जब हम इसका दुरुपयोग करें।

सम्यक् ज्ञान

धर्म पर होने वाली दृढ़ आस्था सम्यक् दर्शन है, और होने वाला ज्ञान सम्यक् ज्ञान है। जब संसार की सच्चाई नजर आ जाये, शरीर और आत्मा में भेद नजर आ जाये, पुण्य और पाप की व्याख्या आचरण में आ जाये, भला और बुरे का ज्ञान हो जाये, अहिंसा धर्म समझ में आ जाये तो समझना सम्यक् ज्ञान हो गया।

सामान रखने में बक्शा का
देश की रक्षा का
ज्ञान रूपी नक्शा का
बड़ा ही महत्व है

मंत्रों में णमोकार का
घुंघरू की झंकार का
छोड़ने में अहंकार का
बड़ा ही महत्व है

जीवन में प्रणय का
धर्म में सुनय का
बड़ों की विनय का
बड़ा ही महत्व है

करने में जाप का
अग्नि के ताप का
छोड़ने में पाप का
बड़ा ही महत्व है

भाव का ही प्रभाव है

आत्मा में उठने वाले परिणामों को भाव कहते हैं। प्रतिक्षण प्रति समय ये भाव हमारे शरीर पर प्रभाव डालते हैं। जैसे हमारे भाव होंगे, वैसा हमारा वातावरण और स्वास्थ्य होगा भाव दो तरह के होते हैं शुभ भाव और अशुभ भाव। अशुभ भाव घास फूस की तरह है जैसे—घास-फूस कहीं भी, कभी भी अपने आप उग जाती है। किसी बीज या कलम लगाने की जरूरत नहीं होती। बिना प्रयास और बिना मेहनत के ही पैदा हो जाती है। ठीक इसी तरह बुरे विचार क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील परिग्रह आदि। किसी भी वस्तु के प्रति चाहे वो हमारे काम की हो या न हो मन राग, द्वेष से पल भर में भर जाता है।

लेकिन शुभ विचार प्रथम तो स्वयमेव आते नहीं। सत्संगति, सत्साहित्य, शास्त्र, विद्वानों की गुणवानों की संगति से थोड़ी देर के लिये आते हैं, फिर स्थान परिवर्तन होते ही, विचार परिवर्तित हो जाते हैं। शुभ विचार ऐसे हैं जैसे—फूलों का बगीचा। फूलों का बाग लगाने के लिये माली को बहुत मेहनत करनी पड़ती है। भूमि को उपजाऊ बनाना पड़ता है। बीज और कलम लगानी पड़ती है। समय-समय पर पानी देना पड़ता है और पेड़ों को पशु खा न जाये इसीलिये बाड़ भी लगानी पड़ती है। इसी तरह शुभ विचार मन में पैदा करने के लिये शास्त्र और अच्छे साहित्य का अध्ययन करना पड़ता है। गुरुओं के प्रवचन सुनते हैं। उनके सान्निध्य का लाभ उठाते हैं। मंदिर जाकर पूजा, ध्यान आदि करते हैं और इन विचारों की रक्षा के लिये इंद्रियों पर संयम की बाड़ लगाते हैं। वरना विषय कषाय के पशु सारे अच्छे विचारों को चर जाते हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि क्या करें हमारे भाव ही नहीं बनते हैं। हमें धर्म करने की इच्छा ही नहीं होती क्या करें? उनके सबसे अच्छा उत्तर ये है कि जब फिल्मी संगीत सुनकर राग पैदा हो सकता। राग के चित्र देख कर वासना पैदा हो सकती

है, तो बारह भावना पढ़कर, वैराग्य भावना पढ़कर, वैराग्य पैदा क्यों नहीं हो सकता। प्रभु के दर्शन करके वीतराग भाव पैदा क्यों नहीं हो सकते? अवश्य ही हो सकते हैं। जितने ध्यान से, जितने चित्त को स्थिर करके आत्मा से फिल्मी गाने सुने हैं उतने ही भाव से आप बारह भावना सुनिये।

लोग फिल्मी गाने बड़े ही सुमधुर आवाज में बनवाते और लोग दीवाने बनकर उसे कई बार सुनते हैं और फ्री समय में उससे गुनगुनाते हैं। उस गाने से अपनी लय मिलाने की कोशिश करते हैं। जितनी मधुर लय में वे गाने गाये जाते हैं, उतनी ही मधुर लय से प्रभु की पूजा करना चाहिये। बारह भावना पढ़नी चाहिये। णमोकार मंत्र आदि पढ़ना चाहिये। क्योंकि बिना लय के पढ़ी गयी पूजा चित्त को स्थिर नहीं करती है। संगीत वो अमृत है, जिसके माध्यम से वैराग्य का बीज आत्मा की भूमि में सहज ही अंकुरित हो जाता है।

जैसे—हम तो कबहुं न निज घर आये-आये। जब ध्यानपूर्वक इस लाइन को बार-बार दोहराया जाये, तो आत्मा के तार झंकृत हो जाते हैं। वास्तव में हम आज तक सांसारिक घर को ही अपना घर मान रहे थे। आत्मा का घर तो ध्यान के माध्यम से स्वयं में स्थिर होना है। देखो कितना आनंद है, अपने घर में रहने में। अथवा

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार
मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार

इन दो लाइनों को आत्मा की गहराई से पढ़े, बार-बार पढ़े, इस पर चिंतन करें, तो ये दो लाइने हमारे जीवन को परिवर्तित कर सकती हैं। हमारे वैराग्य वृद्धि में कारण बनेगी। संसार से मोह कम होगा और सुख का जीवन प्रारंभ हो जायेगा। इसी तरह पूरी बारह भावना पढ़ने में कम से कम एक घंटा लगना चाहिये। दादी अपने पोते को शाब्दिक बारह भावना तो याद करा देती है, पर भाव भरना भूल जाती है। बिना भाव के शब्द अधूरे होते हैं। हमने कहा मन मंदिर में भावना से भगवान की तस्वीर आ जानी चाहिए और साथ ही श्रद्धा से हाथ भी जुड़ जाने चाहिये।

जल के स्रोत दो तरह के होते हैं, जैसे कुआं और तालाब। कुआं का पानी स्वयं का है बाहर से नहीं लिया। अंदर जड़ों से झरना फूटता है। लेकिन तालाब का पानी बाहर से भरा जाता है। तालाब का लेने पर कम हो जाता है। कुआं का पानी लेने पर थोड़ी देर बाद फिर कुएं में पानी आ जाता है।

ठीक इसी तरह हमारा ज्ञान दो तरह से आता है। प्रथम बाहर किताबों से शास्त्रों से अथवा अन्य बाह्य साधनों से। किन्तु जब व्यक्ति ध्यान में बैठता है तो

कुएं के समान झरना फूट पड़ता है। बाहर से लिया ज्ञान कुछ समय में विस्मृत हो जाता है किन्तु जो अंदर से पैदा हुए ज्ञान को कितना निकालते जाये, उसकी कोई सीमा नहीं होती। इसीलिये ध्यान अवश्य करना चाहिये।

हम अपने मस्तिष्क के संपूर्ण जीवन में एक हिस्से का ही प्रयोग कर पाते हैं। बाकी हिस्सा तो यूं ही पड़ा रह जाता है। जैसे एक महिला है, घर गृहस्थी से ज्यादा सोच उसकी नहीं होती। दुकानदार की सोच दुकान तक सीमित है। वरना आत्मा में अनंत ज्ञान है, जिसकी तरफ हमने अभी तक झांक कर नहीं देखा। अनंत संभावनाओं का केन्द्र मानव मात्र संसार शरीर और लोगों तक सीमित रह जाता है। अध्यात्मिक भाव पैदा नहीं कर पाता। हमारी आत्मा का जागरण अध्यात्मिक भावों से होगा।

खमण में भाव का
देने में सुझाव का
आत्मा के भाव का
बड़ा ही महत्व है

सुबह-2 आदित्य का
राजाओं में विक्रमादित्य का
पढ़ने में अच्छे साहित्य का
बड़ा ही महत्व है

बिजली के संचार का
धर्म के प्रचार का
इंसान के शुभ विचार का
बड़ा ही महत्व है

मनुष्यों में मीत का
बच्चों में प्रीत का
जीवन में संगीत का
बड़ा ही महत्व है

घटना में प्रारब्ध का
ध्यान में निःशब्द का
भाव व्यक्त करने में शब्द का
बड़ा ही महत्व है

नदी में नाव का
शरीर में पाँव का
जीवन में अध्यात्मिक भाव का
बड़ा ही महत्व है

धर्म में किस द्वार से प्रवेश करें?

अक्सर लोगों की समस्या होती है कि धर्म की शुरुआत कहाँ से करें। धर्म करना चाहते हैं, पढ़ना चाहते हैं, सीखना चाहते हैं पर छोर नजर नहीं आता शुरू कहाँ से करें। सर्वप्रथम तो धर्म किसे कहते हैं इस विषय पर ध्यान दें—

जो पापों से दूर करे,
जो मन को शान्ति दे,
जो आत्मा को आनंद दे,
जो कषायों से दूर करे,
जो मन में विशुद्धि बढ़ाये,
जो आत्मध्यान की ओर ले जाये

उसे धर्म कहते हैं। भगवान महावीर ने चार अनुयोगों के माध्यम से धर्म ज्ञान का उपदेश दिया है। ये चार द्वार हैं, जहाँ से प्रवेश करके आत्मा तक पहुँचना है। वे अनुयोग है—

प्रथमानुयोग
करणानुयोग
चरणानुयोग
द्रव्यानुयोग

प्रथमानुयोग—यह प्रथम द्वार है। इसमें महापुरुषों के चरित्र को पढ़ाकर शिक्षा दी जाती है। जैसे बच्चा जब छोटा होता है, तब उसे हिंसा से, चोरी से, झूठ से क्या होता है, सीधे शब्दों में नहीं समझाया जाता, उसे कहानी सुनाई जाती है कि उसने झूठ बोला, तो क्या फल मिला। चोरी की, तो कैसे पिटाई हुई, हिंसा की, तो उसे फांसी पर चढ़ना पड़ा, कहानी से समझाया जाता है। जिन्होंने अच्छे काम किये, वह स्वर्ग गया, मोक्ष गया, यह भी आदर्श पुरुषों के माध्यम से समझाया जाता है। बच्चे को अक्षर भी सिखाये जाते हैं, तो चित्र दिखाकर अ अनार का, आ आम का।

बच्चे की बुद्धि चित्रों से और कहानी से शीघ्र ही शिक्षा लेती है और उसे आनंद भी आता है।

अतः प्रथमानुयोग के शास्त्रों में चौबीस तीर्थंकर, 9 नारायण, 9 प्रति नारायण, 9 बलभद्र, 12 चक्रवर्ती, 11 रूद्र, 24 कामदेव, भगवान के माता-पिता, सतियों का वर्णन, सम्यक्दर्शन के आठ अंगों की कथाएं, पांच पापों की कथायें एवं अन्य धार्मिक पुरुषों की कथायें होती हैं। इसमें 24 तीर्थंकर के पांचों कल्याणक, समवशरण का वैभव, तपस्या काल, मोक्ष आदि का वर्णन होता है। चक्रवर्ती नारायण प्रतिनारायण बलभद्र का वैभव, कामदेव की सुन्दरता, सम्यक् दर्शन प्राप्त करने की विधि बतलाई जाती है। पाप करने से चारों गति का भ्रमण एवं ध्यान तपस्या आदि करने से स्वर्ग मोक्ष की प्राप्ति का वर्णन किया जाता है।

ज्ञान प्राप्ति के प्रारंभ में मन में एक महापुरुष की छवि बस गई, उनके प्रति श्रद्धा का जन्म अंतर में हो गया। उस श्रद्धा ने धर्म श्रद्धा को जन्म दे दिया और शास्त्रों को पढ़ कर कर्म को स्वर्ग मोक्ष नरक को जानने की भावना हुई, कर्म का बंधन कैसे भावों से होता है, (किन भावों से छूटते हैं) तीन लोक कहाँ हैं? क्या है? यह प्रश्न मन में गूंजने लगे। तब भगवान ने कारणानुयोग दूसरे द्वार में प्रवेश करने को कहाँ

प्रथमानुयोग के कुछ ग्रंथों के नाम—

1. चौबीसी पुराण
2. महापुराण
3. पद्मपुराण
4. श्रणिक चरित्र
5. श्रीपाल चरित्र
6. यशोधर चरित्र
7. आदि पुराण
8. प्रद्युम्न चरित आदि

करणानुयोग—धर्म ज्ञान में प्रवेश करने का दूसरा प्रवेश द्वार करणानुयोग है। करण यानी परिणाम, भाव, अनुयोग यानी द्वार। भावों में प्रवेश कर कर्मों को समझना आवश्यक है। एक समय में कितने कार्मों का बंध होता है, कितने कर्मों का उदय होता है। कब पापकर्म, पुण्य बन जाता है, कब पुण्य पाप बन जाता है। कर्म कब तक आत्मा में रहता है। कौन से कर्मों की आत्मा में रहने की अवधि अधिक से अधिक कितनी है। कम से कम कितनी और कहाँ होती है। 14 गुणस्थान 14 मार्गणा, 8 कर्म, साततत्व, आदि का वर्णन किया जाता है। शरीर की रचना कौन सा कर्म करता है, बाधायें कौन सा कर्म डालता है, कौन से कर्म से हम अपनी आत्मा को भूले बैठे हैं? कौन सा कर्म ज्ञान नहीं होने देता? कौन सा कर्म देखने में बाधा डालता है? कौन से कर्म से नींद आती है, कौन से कर्म से भूख लगती है, कौन सी गति में जीव कितने समय तक रहेगा? यह सारा काम कौन-कौन से कर्म करते हैं। इन सबका वर्णन करणानुयोग करता है। स्वर्ग कहाँ है, मोक्ष नरक कहाँ है, मनुष्य कहाँ रहते हैं। यह बात करणानुयोग पढ़कर पता चलता है और भावों में बहुत सुधार आता है।

करणानुयोग में कथा कहानी नहीं है, शुद्ध माल है। संसारी प्राणी शुद्ध घी खाना चाहते हैं, शुद्ध दूध पीना चाहते हैं। वैसे भावों को शुद्ध करने, करणानुयोग का ज्ञान करना भी आवश्यक है। तभी भावों की शुद्धि से आत्मा की शुद्धि होती है। जितना जीव और पुद्गल का वर्णन करणानुयोग करता है। शायद उसे शब्दों में बताना मुश्किल है। जीव का वर्णन तो है ही, पुद्गल के अणु-परमाणु की शक्ति का वर्णन भी करणानुयोग करता है। इन ग्रंथों का स्वाध्याय यदि गुरु के माध्यम से किया जाये तो जल्दी समझ में आता है।

करणानुयोग के ग्रंथों के नाम—

1. तत्वार्थसूत्र (मोक्ष शास्त्र)
2. जीवकांड
3. कर्म काण्ड
4. लब्धिसार
5. क्षपणासार
6. षटखंडागम (धवल महाधवल, जयधवल)
7. तत्वार्थ वृत्ति
8. तत्वार्थसार
9. सर्वार्थसिद्धि
10. तत्वार्थराजवार्तिक

यदि कोई कहे कि, जैनधर्म के किसी एक ग्रंथ का नाम बताओ जिसमें संपूर्ण जैन धर्म को समझना हो, तो उसका नाम है तत्वार्थसूत्र—आचार्य उमा स्वामी ने हम पर उपकार किया इस ग्रंथ की रचना करके। एक-एक सूत्र ऐसा है जिस पर पूरी-पूरी किताब लिखी जा सके। जिसने तत्वार्थसूत्र गहराई से पढ़ लिया वह करणानुयोग को अच्छी तरह से समझ सकता है। अपने जीवन में तत्वार्थसूत्र ग्रंथ अर्थ सहित

अवश्य पढ़ना चाहिये। और अन्य ग्रंथों में आचार्यों ने सुंदर वर्णन किया है। निगोदिया से लेकर मोक्ष तक कर्मों की व्यवस्था क्या रहती है, तभी समझ में आयेगा।

चरणानुयोग–जब करणानुयोग ने कर्मों को समझाया, स्वर्ग, नरक, मोक्ष को समझाया तो, अब विचार किया जीवन में कैसा आचरण किया जाये कि कर्मों से बच सके। पापों से बच सकें, तीसरा द्वार धर्म का भगवान महावीर ने बताया, कैसे चलना, कैसे देखना, कैसे बोलना, कैसा खाना, कब खाना, कितना खाना, कैसे सोना, कब सोना, कितना सोना, कैसे उपवास करे, कैसे पूजा अभिषेक करे, कैसे और कहाँ कितना दान दें, गुरु की सेवा कैसे करें, कैसे जीवन जियें, कैसे मृत्यु को समाधि बनाये, कैसे व्रतों का पालन करें, अणुव्रत, महाव्रत की क्या महिमा है? कैसे प्रतिक्रमण करे, गलती होने पर प्रायश्चित्त कैसे लेकर पाप से छूटे, देव शास्त्र गुरु को नमस्कार कैसे करें, छोटे, बड़ों की यथायोग्य विनय कैसे करें, अर्थात् जीवन को कैसे संस्कारित करे चरणानुयोग ने सिखाया।

प्रथमानुयोग से धर्म में श्रद्धा आई, करणानुयाग ने भावों को समझाया और चरणानुयोग ने बाहर के जीवन को संस्कारित कर दिया। पहले अंदर को सुधारो बाहर का आचरण सुधारने में स्थिरता रहेगी। बिना भावों को सुधारे बाहर का आचरण ज्यादा दिन टिक नहीं सकता। बाह्य आचरण सुधारें बिना अंदर में विशुद्धि बन नहीं सकती। अतः तीसरा द्वार चरणानुयोग है।

चरणानुयोग के कुछ ग्रंथ–

श्रावक के लिये

1. रत्नकरण्डक श्रावकाचार
2. सागार धर्मामृत
3. लाठी संहिता

मुनियों के लिये

1. अनगार धर्मामृत
2. मूलाचार
3. भगवती आराधना

श्रावक को मुनियों के ग्रंथ नहीं पढ़ना चाहिये।

द्रव्यानुयोग–भाव और आचरण दोनों को सुधार कर, जब जीव योग्य बनता है, तब उसे शुद्ध आत्मा का दर्शन कराने वाला चौथा अनुयोग है। द्रव्यानुयोग। आत्मा के शुद्ध स्वरूप का वर्णन करता है, आज तक संसारी प्राणी अपने आपको वही समझता है जिस गति में रहता है अर्थात् स्वर्ग में रहता है तो देव या देवी समझता है, नरक

में खुद को नारकी मानता है, मनुष्य पर्याय में मनुष्य मानता है, पशु बनता है तो पशु मानता है। जबकि आत्मा शरीर रूप नहीं है। जैसे पानी को जिस बर्तन में रखो वह उसी आकार का हो जाता है; उसी तरह आत्मा जिस शरीर में जाती है; उसी आकार की हो जाती है। आत्मा निराकार है। आत्मा का अपना कोई आकार नहीं है। आकार पुद्गल का बनता है। आत्मा अमूर्तिक है।

आत्मा रस रहित, गंध रहित, वर्ण रहित है, अर्थात् चर्म चक्षु से आत्मा को नहीं देखा जा सकता है। आत्मा का केवल अनुभव किया जा सकता है। आत्मा का स्वभाव क्रोध रहित है, मान, माया, लोभ रहित है। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्री वेद, पुरुष वेद, नपुंसक वेद से आत्मा रहित। आत्मा कर्मों से रहित होने पर उसका शुद्ध स्वरूप प्रगट होता है, जिसमें दुःख, संकट, परेशानी, संघर्ष, पीड़ा, टेंशन, चिंता, दर्द, बीमारी, जैसी आत्मा में है ही नहीं। ये सारी चीजें मोह के कारण महसूस होती है। शरीर से, परिवार से, धन से, वस्त्रों से, जमीन, जायदाद, रिश्तेदार जिन-जिन से मोह होता है; वहीं-वहीं से दुःख स्वयमेव हो जाते हैं।

आत्मा से कर्मों की अशुद्धि के दूर होते ही, आत्मा की शक्तियाँ प्रगट होती हैं। आत्मा के गुण प्रगट होने लगते हैं। आत्मा अनंत गुणों का भंडार है, उन गुणों का ध्यान करने से, वे प्रगट होते हैं। जैसे सूर्य बादलों में छिपा है, तो नजर नहीं आता। हवा चलते ही बादल हट जाते हैं। सूर्य प्रगट हो जाता है। ऐसे कर्मों के बादल हटने से केवलज्ञान का सूर्य प्रगट होता है।

अनंतज्ञानी आत्मा कर्मों के कारण अज्ञानी है, अनंत शक्तिमान आत्मा कर्मों के कारण कमजोर और बीमारी से घिरा है, अनंत सुखी आत्मा मोह के कारण अपने आपको दुःखों से भरा हुआ मानता है। अपनी आत्मा को पहचानो और उसे प्राप्त करने का प्रयास करो। यह बात द्रव्यानुयोग के माध्यम से मालूम होती है। द्रव्यानुयोग पढ़कर उसका प्रेक्टीकल ध्यान में किया जाता है।

धर्म का अंतिम द्वार हमें हमारी आत्मा में प्रवेश कराता है। आत्मा का ज्ञान कराता है हमें हमारी पहचान कराता है। हमें हमारी शक्तियों से परिचय कराता है। द्रव्यानुयोग ही अपनी मंजिल में पहुँचने का रास्ता दिखाता है। बिना आत्मा के ज्ञान के जीवन अधूरा है। सारी दुनिया को जाना, पर जानने वाले को नहीं जाना, तो सब व्यर्थ है।

राम भरोसे जे रहे, तो पर्वत पे हरयाये

पहाड़ों पर हजारों लाखों वृक्ष होते हैं जिनकी कोई चिन्ता करने वाला नहीं होता। उन वृक्षों को पानी डालने कोई नहीं जाता। कोई खाद आदि डालने की भी चिन्ता नहीं करता। फिर भी उन वृक्षों पर फल-फूल आते हैं और वनों में रहने वाले हजारों पशु-पक्षियों का पेट भरता है। जंगल में हजारों-लाखों वृक्ष होते हैं, जो भगवान भरोसे जन्म लेते हैं और विशाल रूप धारण कर हजारों वर्ष की आयु का जीवन बिताते हैं।

सारा संसार, परिवार की चिन्ता करने वाला व्यक्ति इससे शिक्षा ले। व्यक्ति सबकी चिन्ता करता हैं कि इसका क्या होगा, उसका क्या होगा, बेचारा अपनी जिन्दगी के अमूल्य क्षणों को खराब कर देता है। जब उसका सोचा हुआ नहीं होता तो आखिरी में यही कहता है, जो भाग्य होगा, वही हो गया। यही बात यदि पहले सोच ले, तो कम से कम चिन्ता का बाकी समय खराब न हो।

माता-पिता अपने बच्चों की इतनी अधिक चिन्ता करते हैं कि उनकी प्रभु भक्ति पूजा, माला, स्वाध्याय सेवा सब कुछ छूट जाता है। न नींद आती है, न मंदिर में भक्ति पूजा में मन लगता है। बस एक चुभन पूरे समय चुभती रहती है और समय पूरा होता रहता है।

आप बच्चों के प्रति फर्ज निभाइये, कर्तव्य कीजिये, किन्तु आपके अपने स्वयं के प्रति जो कर्तव्य है उन्हें भी कीजिये। स्वयं के ज्ञान और ध्यान की उन्नति के प्रति भी जागरूक रहिये। घर में माता-पिता की सेवा भी मन से कीजिये। गुरुओं की सेवा भक्ति में भी पीछे न रहे। अपनी सारी शक्ति, सारा दिमाग यदि एक ही जगह लगा दोगे, अन्य सारे कार्य आपसे नहीं हो पायेंगे और आपके जीवन का विकास रुक जायेगा। रुके हुये पानी में जैसे मच्छर आदि पैदा हो जाते हैं, वैसे रुके हुये विचार में भी चिन्ता के मच्छर उत्पन्न होकर काटना शुरू कर देते हैं। तब मन बड़ी पीड़ा से भर जाता है।

जैसे पर्वत पर खड़े पेड़ स्वयं ही अपने भोजन पानी की व्यवस्था कर जीवन

जीते हैं। आप स्वयं भी देखते हैं कि कुछ लोग ऐसे हैं जो धूप, गर्मी, बरसात को झेलकर जीते हैं और मजबूत हो जाते हैं। कहते हैं—जिन्हें ज्यादा प्यार मिलता है वे बीमार बहुत रहते हैं। जिनकी कोई परवाह नहीं करता, वे आराम से रहते हैं और स्वस्थ रहते हैं।

स्वस्थ रहने का सबसे अच्छा तरीका है—खूब मेहनत कीजिये और प्रसन्न रहिये। दवाई खाने की अपेक्षा मेहनत करना ज्यादा श्रेष्ठ है। पशु-पक्षी के लिये कोई डॉक्टर नहीं होता। घर में पलने वाले पशु-पक्षी ज्यादा बीमार रहते हैं। जंगल और खुले आसमान में रहने वाले पशु-पक्षी दिन भर मेहनत करते हैं। पक्षी आकाश में उड़ते रहते हैं। पेड़ों पर कभी इस डाल से उस डाल पर कूदेंगे, कभी कहीं जायेंगे किन्तु खाली नहीं बैठते हैं। रात्रि में वे खाते भी नहीं हैं और बिल्कुल शांति से बैठ जाते हैं कि जरा सी भी आवाज नहीं आती। गाय भैंस आदि जानवर दिन में खाते हैं और रात्रि में जुगाली करते हैं।

लेकिन आजकल का मनुष्य पैदल नहीं चलता। सारे काम मशीन से करता है। चप्पल पहन कर चलता है। इससे उसका संबंध धरती से खतम हो जाता है। कूलर, पंखे, ए.सी. की हवा खाते हैं। खाद से उगाया अनाज सब्जी खाते हैं। गाय भैंस को इंजेक्शन लगाकर दूध निकालते हैं। उसका प्रकृति से संबंध हर तरह से समाप्त हो गया। इसीलिये स्वास्थ्य सबका खराब रहता है। आँखें जहाँ प्रकृति के दृश्य देखती थी अब वे आँखें टीवी, मोबाइल देखती है। कान जहाँ सुबह शाम मंदिरों की घंटियाँ और चिड़ियों की चहचहाहट सुनते थे; अब वे कान अधिक शोर वाले रागमयी संगीत सुनते हैं। गाड़ियों के हॉर्न की आवाज सुन रहे हैं। नाक को जहाँ शुद्ध वायु शुद्ध ऑक्सीजन मिलती थी, अब वह नाक गाड़ियों के धुएं खा रही है और सेंट और डीओ की खुशबू से भरी हुई है। जिह्वा जहाँ फल, सब्जी खाकर संतुष्ट होती थी, अब मैगी, पिज्जा, बर्गर, आइसक्रीम खा रहे हैं। अब बीमार नहीं होंगे तो और क्या होगा।

शरीर मिट्टी का बना हुआ है और मिट्टी का शरीर मिट्टी से दूर रहेगा तो बीमार तो होना ही है। इंसान का शरीर जब बीमार होता है, तो मन अपने आप बीमार हो जाता है और जब मन बीमार होता है, तो तन अपने आप बीमार हो जाता है। दोनों का आपस में गहरा संबंध है। दोनों स्वस्थ रहेंगे तो जीवन में आनंद होगा वरना परेशानी जिन्दगी जीकर भी मृत्यु को याद करना प्रारंभ कर देते हैं।

वास्तव में स्वस्थ होना चाहते हैं तो पहले प्रकृति से जुड़ो। सुबह-सुबह परमात्मा का स्मरण करो। थोड़ा ध्यान भी लगाओ। सुबह की शुद्ध वायु ग्रहण करने पैदल

घूमने जाओ। भोजन सात्विक बनाओ। ज्यादा दिखावा मत करो। फिर देखिये कैसे स्वस्थ नहीं होते हैं। मन और तन दोनों संयम रखे, जीवन संयम मय होगा, तभी हमारी आत्मा और मन स्वस्थ हो सकेंगे वरना जीवन गर्त में चला जायेगा।

हमारे मन में जहाँ परमात्मा का वास होना चाहिये वहाँ हम इस मन में दुनिया भर के लोगों के गंदे चित्रों को भर कर रखा है और मन गंदे विचारों से भरा हुआ है। ऐसे विचारों के बीच में परमात्मा कैसे रह सकता है। जैसे घर गंदा हो तो तुम्हें ही अच्छा नहीं लगता। तुम्हारा ही वहाँ रहने का मन नहीं करता, तो विचारों से मन में परमात्मा कैसे रह सकता है। मन को मंदिर बनाना है, तो बाहरी गंदगी को जितने हो सके अपने मन से दूर रखो।

ये विचार हमारी आँखों के माध्यम से मन से प्रवेश करते हैं। कानों के माध्यम से मन में प्रवेश करते हैं। नाक, शरीर के माध्यम से मन में प्रवेश करते हैं। अतः इन सबके माध्यम से आने वाले विचारों को रोके।

गर्मी में शरबत का
श्रृंगार में बनावट का
धरती में पर्वत का
बड़ा ही महत्व है

सांस लेने में वायु का
होने में चिरायु का
जीवों की आयु का
बड़ा ही महत्व है

केले के समोसे का
बील के रेशे का
जीवों में राम भरोसे का
बड़ा ही महत्व है

मन को मोड़ने का
कर्मों को तोड़ने का
धर्म करके चिन्ता छोड़ने का
बड़ा ही महत्व है

बनाने में सेहत का
कष्ट में आहत का
करने में मेहनत का
बड़ा ही महत्व है

थोड़ा सुख मिला?

आपको दाँत की याद आ रही है? नहीं, क्यों? क्योंकि आपके दाँत में दर्द नहीं है। शरीर के जिन-जिन हिस्सों में दर्द होता है, तो मन उस विषय को सोचना, महसूस कर लेता है जिन हिस्सों में दर्द नहीं होता, उसकी हमें याद नहीं है। अर्थात् वस्तु होकर भी याद नहीं आ रही है, इसका नाम है 'सुख', संसार में हैं और संसार याद न आये, इसका नाम है सुख। यदि हम सुंदर हैं सारे दिन हमें अपने सुंदर होने का स्मरण रहता है ये भी इंद्रिय सुख है किन्तु इन्द्रिय सुख-भविष्य में दुःख का कारण है। एक फुंसी भी निकल जाये तो सुंदरता गायब हो जायेगी और मन में कष्ट प्रारंभ हो जायेगा।

जब बच्चे स्वस्थ हैं, बीमार नहीं हैं, पढ़ाई ठीक चल रही है, तब तक बच्चों की दिन भर याद नहीं आती, उन्हें जरा भी कष्ट हो, तो वह बच्चा दिन भर दिमाग में घूमता है। सोना जब तक बैंक लॉकर में रखा है, तो आपको सोने की याद नहीं आ रही है। सोने की चैन गले में पड़ी है तो याद नहीं आ रही, लेकिन वही सोना कोई छीन कर ले जाये, तो चौबीस घंटे वही चैन नजर आयेगी। संसार की वस्तु क्षणिक सुख देती है, पर अंत में दुःख कारण ही है।

जिस रात आपकी नींद बार-बार खुले, दिमाग में विचार चलते रहें, तो आप कहते हो आज अच्छा नहीं लग रहा, नींद नहीं आई और जिस रात आप गहरी नींद में सोये, कुछ भी याद न आये, तो आप कहते हो आज तो आनंद आ गया, बहुत अच्छी नींद आई। अर्थात् निर्विचार निर्विकल्प अवस्था में आनंद की प्राप्ति होती है।

सारे संसार में लोग शांति और आनंद की खोज करते हैं, किन्तु आनंद हमारे पास ही है। विचारों को बंद करते ही आनंद का झरना फूट पड़ता है। या हम आत्मा और परमात्मा का जब सच्चे मन से चिंतन मनन भक्ति करते हैं, तब हमारी आत्मा प्रसन्न होती है। पूजा पाठ और भक्ति में शांति नहीं मिलने का कारण। मन में दुनिया भर के विचारों सहित भक्ति पाठ करते हैं इसीलिये आनंद नहीं आता।

रेडियो में यदि दो स्टेशन एक साथ चलें तो, समझ कुछ नहीं आता, और घर्र-घर्र की आवाज आती है। ठीक पूजा करते हुये हमारे दो स्टेशन एक साथ चलते हैं मन में विचार संसार के और शरीर वचन पूजा में लगा है तो आनंद कहाँ से आयेगा। पहले रेडियो को सेट करें, सुई एक स्टेशन पर करें, तो सुरीला मधुर संगीत सुनाई देगा जो कर्ण प्रिय और मनहरण होगा। ठीक इसी तरह जब मन केवल परमात्मा के चरणों में रहेगा तो आनंद आयेगा।

दो मुख सुई सिये न कंथा, दो मुख पंथी चले न पंथा
दोऊ काम नहीं होय सयाने, काम भोग अरू मोक्ष पयाने

जिस तरह दो मुख की सूई से कपड़ा नहीं सिला जा सकता, दो मुख वाला राही किस राह पर जायेगा? इसी तरह एक बार में एक काम करो। पूजा भी चल रही है और घर के विचार भी चल रहे हैं। मीठा और नमक मिला कर खाया जा रहा है। मीठा स्वाद कैसे आयेगा?

अक्सर मनुष्य घर में रहता है, तो दुकान को याद करता है। दुकान में रहता है, तो मंदिर को याद करता है। मंदिर में रहता है, तो बच्चों को याद करता है। बच्चों के पास रहता है, तो ग्राहक को याद करता है। विडंबना है कि जहाँ शरीर से रहता है, वहाँ मन से नहीं रहता है। इसीलिये इसे भटकती आत्मा कहा जाता है और इसीलिये सुख की प्राप्ति नहीं हो रही है।

जब आदमी के पास दुःख रहता है, तो सुख को याद करता है। सुख पाने के लिये मेहनत करता है। जब उसके पास सुख आ जाता है, तो वह पुराने दुःखों को याद कर दुःखी रहता है कि पहले उसने मेरे साथ ऐसा बुरा व्यवहार किया था। मेरे ऊपर ऐसा दुःख आया था। जब दुःख रहता है, तब तो दुःखी है ही, पर जब सुख है, तब भी दुःखी ही रहता है।

सुखी होते हुये भी आदमी को दुःखी रहने की आदत पड़ गयी है। उसके पास दुःख ना हो, तो इधर-उधर की उल्टी सीधी बात कर वह दुःख इकट्ठा कर ही लेता है। दुःख ना हो, तो आदमी बोर हो जाता है। दुःख रहता है तो उसे भगाने में उसका मन लगा रहता है। अब दुःख नहीं है तो काम ही नहीं बचा। क्योंकि ध्यान करना आता नहीं, स्वाध्याय में मन लगता नहीं, धर्म चर्चा से दूर भागते हैं। तब काम ही नहीं बचा तो आदमी क्या करे। उल्टे सीधे काम में लगा रहता है।

उदाहरण के लिए—एक सेठ जी थे। उनका मन कहीं नहीं लगता था। एक दिन एक संन्यासी के पास जाकर अपनी समस्या रखी। महाराज कुछ करो, मन उदास सा रहता है। संन्यासी पूछा घर में धंधा पानी ठीक है। सेठ जी बोले, महाराज प्रभु

की पूरी कृपा है संपन्नता हर तरह से है। सेठजी ने कहा पत्नी पुत्र आज्ञाकारी है। सेठजी ने कहा महाराज, मेरी हर बात मानी जाती है। मेरी बात कोई नहीं टालता। नाती पोते सब ठीक है? हाँ महाराज सब मौज में है।

महाराज ने कहा एक काम करो अपने घर का सारा सोना एक पोटली में इकट्ठा करके लाओ। संन्यासी के ऊपर सभी का भरोसा था। सेठ जी सोने के पोटली बना लाये और संन्यासी के सामने रख दी। संन्यासी ने पोटली उठाई और भागना शुरू कर दिया। सेठ जी सोच ही नहीं पाये, ये क्या हुआ। होश आया तो संन्यासी के पीछे भागे। संन्यासी आगे-आगे, सेठ जी पीछे-पीछे दौड़ते रहे। काफी देर बाद संन्यासी गाँव के बाहर आया और पेड़ के नीचे पोटली रख के, पेड़ के पीछे छुप गया। सेठ जी आये और पोटली को छाती से लगा ली। पेड़ के पीछे से झांककर संन्यासी बोला थोड़ा सुख मिला? अर्थात् सांसारिक सुख मिलने के बाद जीवन को आत्मा (अध्यात्म) की ओर कैसे बढ़ाना है इस बात का ज्ञान नहीं होने के कारण, जीवन रुक जाता है, आगे रास्ता नजर नहीं आता और आदमी का जीवन उदास हो जाता है, उत्साह खतम हो जाता है।

अध्यात्मिक ज्ञान, जीवन उत्साह का संचार करता है, कल्याण का रास्ता दिखाता है, आत्मा के उद्धार की बात करता है और मनुष्य पर्याय को सार्थक बनाता है। सांसारिक जीवन से हटकर थोड़ा देखे, तो एक जीवन और है वह अध्यात्मिक जीवन है। इस भव और पर भव को भी सार्थक बनाता है। सांसारिक सुख और दुःख दोनों से ऊपर उठो और आत्मा के सुख का जीवन जिओ।

हवा के रूख का
शरीर में मुख का
जीवन में सुख का
बड़ा ही महत्व है

वृक्षों में कल्प का
जाप में अंतर्जल्प का
होने में निर्विकल्प का
बड़ा ही महत्व है

चेहरे पर नैन का
बोलने में मीठे बैन का
मनुष्यों के लिए चैन का
बड़ा ही महत्व है

गाँवों में हाट का
कपड़े के लाट का
करने में पूजा पाठ का
बड़ा ही महत्व है

नजर को बदलिये, नजारे बदल जायेंगे

जंगल में एक विशाल पेड़ सैकड़ों वर्षों से खड़ा था। कई वर्षों की आंधियाँ उसका कुछ न बिगाड़ सकीं। तूफानों से सामना उसने डटकर किया पर कुछ नहीं बिगड़ा। कई बार उस वृक्ष पर बिजली भी गिरी पर उसकी शक्ति के आगे बिजली भी कुछ न बिगाड़ सकी। किन्तु एक दिन उसमें दीमक लगी और धीरे-धीरे उसे खोखला करने लगी और एक दिन ऐसा आया कि उस दीमक ने उसकी सारी जड़ को खा लिया और वह पेड़ धराशायी हो गया, गिर गया, खतम हो गया।

ठीक इसी तरह से एक व्यक्ति धन से संपन्न है, परिवार से समृद्ध है, शरीर से शक्तिशाली है किन्तु किसी भी तरह की चिन्ता, दीमक उसे लग जाये, तो वह कुछ दिनों में टूट जाता है। जो व्यक्ति पहलवानों से जीत जाता है, दुश्मनों से डरता नहीं, काम दिन रात करता है, किन्तु चिन्ता रूपी दीमक ऐसे शक्तिशाली पुरुष को भी जीते जी अर्द्धमृतक समान कर देती है। बार-बार किसी भी बात का मन में घूमना चिंता है।

किसी को शादी की चिन्ता है, तो किसी को धन की चिंता, किसी को शरीर की बीमारी की चिन्ता है, तो किसी का अपमान हो गया इसकी चिन्ता, तो किसी को भोजन की चिंता, किसी को ऑफिस की चिन्ता है, तो किसी को दुकान, फैक्ट्री की चिन्ता, किसी को पढ़ाई की चिन्ता है, तो किसी को डिगरी की चिन्ता। बच्चे से बूढ़े तक सबको किसी न किसी चीज की चिन्ता है।

कोई कर्जा लेकर चिन्ता में है, तो कोई कर्जा देकर चिन्ता में है, मंदिर दुकान घर, बाहर कहीं भी बैठे हो, एक चिंता की चुभन इंसान को सदा चुभती रहती है। कुछ समय के लिये भी वह अपने आप उससे दूर नहीं हो पाता है। माला फेरते हुये भी भगवान याद नहीं आते, वही चिंतायें दिमाग में घूमती रहती हैं। दूसरों से परेशान है, तो उसे दूर कर दें, पर जब स्वयं से परेशान होता है, तो कहाँ भागे, चिन्ता ऐसा दर्द है, जिसे न कह सकते हैं, न सह सकते हैं।

जिसे अपनी चिंता का प्रवचन सुनाये, वह भी तैयार रहता है अब मेरी चिंता भी सुनो, तो लगता है कि, चलो हमारी ही चिन्ता ठीक है। सब एक-दूसरे को अपनी चिन्ता सुनाते हैं पर इससे समस्या का समाधान नहीं निकलता है। समस्या है तो समाधान भी है। समय लग सकता है, अंधेरा है, तो सबेरा होगा, सूरज चढ़ा है, तो उतरेगा अवश्य, कोई सोचे कि सबके दिन सदा एक से ही होते हैं, तो नहीं होते हैं।

प्रकृति को देखो वृक्षों पर हरे सुंदर पत्ते आते हैं। कुछ समय बाद पीले हो जाते हैं और कुछ समय बाद पतझड़ हो जाता है। सभी कार्यों के साथ ऐसे ही लगा लेना चाहिये। बचपन आया, जवानी आई और फिर न चाहते हुये भी बुढ़ापा आ गया। संसार हमारे चाहने से नहीं, कर्मों से चलता है।

माँ दुःखी है बेटा पढ़ता नहीं है, अब बेटे के ज्ञानावरणी का तीव्र उदय चल रहा है, इसीलिये वो पढ़ता नहीं है, यदि पढ़ता है तो याद नहीं होता है। माँ रात दिन आर्तध्यान कर रही है जो तिर्यंच गति का कारण है। अब प्रश्न है कि चिंता ना करें तो क्या करें? हाँ उस बच्चे के नाम से विधान करो, सरस्वती स्तोत्र पढ़ो और उसे सुनाओ यदि पढ़ सकता है तो पढ़ाओ। सरस्वती की जाप करवाओ। जिनवाणी माता की सेवा करो। उसे प्यार से समझाने का प्रयास करो। चिंता के कारण आपको मिलने वाले सारे सुख सारे बेकार हो गये। कोठी, मकान, कूलर, ए.सी. भोजन कुछ भी अच्छा नहीं लगता। ज्यादा चिंता हो तो सोचो कि बच्चे का अपना भाग्य भी तो काम करेगा। उस बेटे की चिन्ता में माँ का धरम भी छूट जाता है।

सास जब बहू लाती है, तो बड़े अरमान होते हैं कि, आकर ये काम करेगी, जब अपेक्षाएँ पूरी नहीं होती, तो सास को गुस्सा आना प्रारंभ हो जाता है। मान लो सास को सफाई का काम पसंद है और बहू उतना साफ नहीं कर पाती, तो छोटी-छोटी बात को लेकर सास बार-बार उसे नीचा दिखाती है। बहू उस समय चुप रहती है, कुछ समय बाद, सास से लड़ना प्रारंभ कर देती है। अब पासा उल्टा पड़ गया और सास और बहू दुःखी रहने लगी।

ऐसे समय में सास को प्यार से समझाना चाहिये, नहीं करने पर उसकी बुराई आस-पड़ोसी से न करें। वे पड़ोसी निश्चित ही मौका मिलते ही बहू से कह देंगे और बहू के मन में आपके प्रति जितना आदर सम्मान है वो भी नहीं रहेगा। घर में लड़ाई की संभावनाएँ और ज्यादा होगी। बहू ये बात आपके बेटे से कह कर आपको बेटे से भी दूर कर देगी। आपसे ज्यादा सहन नहीं हो रहा है। थोड़ी दूरी बनाए रखें, जिससे प्रेम बढ़ेगा। यदि शक्ति है, तो घर के काम अवश्य करें। खाली दिमाग

शैतान का घर। जैसे अपनी लड़की की बुराई किसी से नहीं करती, वैसे अपनी बहू की बुराई किसी से न करें।

बहू को परेशानी है कि सास तेज है। बात-बात में टोकती है। जैसे सास ने कहा, जरा सब्जी में तेल कम डालना, तो बहू को बहुत गुस्सा आता है। गुस्साकर कमरे में जाकर मम्मी को फोन लगाती है, कहती है माँ ये सास अच्छा खाने भी नहीं देती। पीहर में फोन करने पर आपने सास और माँ के संबंध खराब कर दिये, तुम्हारी माँ सास का सम्मान नहीं कर पायेगी और विचार करो कि इसी बात के लिये तुम्हारी माँ मना करती, तो क्या तुम किसी और से कहती नहीं। अर्थात् जैसी माँ के प्रति भाव है वही सास के लिये होने चाहिये। माँ भी डांटती थी, सास ने डांट दिया तो क्या हुआ। सास ननद के साथ हुई बात को पति से मत कहो, माँ बेटे और बहन भाई के रिश्ते में दरार आ जायेगी और दोनों कहेगी ये बहू बहुत खराब है, मेरे बेटे को भड़काती है। धीरे-धीरे यह दरार खाई बन जायेगी।

पिता को चिन्ता है, बेटा बात नहीं मानता है। यदि पुत्र बड़ा हो गया है, तो उससे मित्र जैसा व्यवहार करे। उसे आदेशात्मक भाषा में नहीं बल्कि उपदेशात्मक भाषा में बात करें। नहीं मानने पर बुरा नहीं मानें। क्योंकि ये सब कुछ आज पहली बार नहीं हो रहा है, हर पिता के सामने ये समस्या आती है। किन्तु नासमझ पिता लड़ाईयाँ करके संबंध बिगाड़ लेता है और समझदार पिता अपनी जिंदगी को धरम की ओर मोड़कर जीवन को सफल बना लेता है। हर पिता अपने पुत्र से प्यार करता है, पर हर पुत्र अपने पिता से प्यार नहीं करता है। इस बात को ध्यान मे रख पुत्र से ज्यादा अपेक्षायें नहीं होनी चाहिये। किन्तु पुत्र के प्रति अच्छे भाव रख कर उसे खूब आशीर्वाद देना चाहिये।

सुख मिलना हमारे भाग्य पर आधारित है। किन्तु सुख देना हमारे पुरुषार्थ पर निर्भर करता है। कहा भी है

हम ना सोचे, हमें क्या मिला है,
हम ये सोचे किया क्या है अर्पण,
फूल खुशियों के बांटे सभी को।
सबका जीवन ही बन जाये मधुवन॥

आ.105 स्वस्ति भूषण
जहाजपुर, अतिशय क्षेत्र

सारी प्रकृति तप रही है आप क्यों डरते हैं?

मोह नींद के जोर जग वासी...
ज्ञान दीप तप तेल...

ज्ञान दीपक हाथ में लेकर चलेंगे तो गड्ढे में गिरने से बच जायेंगे, वरना तिर्यंच, नरक के गड्ढे, दुःख और संकट के गड्ढे में तो गिरना ही पड़ेगा। ज्ञान के आते ही सब सच्चाई दिखने लगती है जैसे दीपक के जलते ही कमरे में रखी वस्तुएं स्पष्ट दिखने लगती हैं। अंधेरे में सत्य नजर नहीं आता है। जैसे—कोई जंगल में जा रहा है, रास्ते में कुछ नहीं आ रहा है, आदमी चौराहे पर खड़ा है, अचानक बिजली एक सैकेंड के लिए चमकती है और वह रासता देख लेता है और अपने मार्ग पर आगे बढ़ने लगता है। इसी तरह सत्य रूपी ज्ञान की बिजली यदि एक क्षण के लिये भी चमक जाये, तो हमें आगे बढ़ने के लिये मार्ग नजर आ जाता है।

ज्ञानी व्यक्ति रात के अंधेरे में भी सही रास्ते पर चलता है और अज्ञानी व्यक्ति दिन के उजाले में गलत रास्ते पर भटक जाता है। ये ज्ञान की महिमा है। ज्ञानी व्यक्ति कीचड़ में भी कमल के जैसे रहता है और अज्ञानी व्यक्ति फूलों के बीच भी कीचड़ जैसे कार्य करता है। इसीलिये ज्ञान प्राप्ति का पुरुषार्थ अवश्य करना चाहिये। आचार्यो ने कहा ज्ञान प्राप्ति का पुरुषार्थ तब तक करना चाहिये; जब तक केवलज्ञान की प्राप्ति न हो जाये।

सारी दुनिया सुख के लिये दिन-रात मेहनत करती है, फिर भी सुख नहीं मिल पाता। कारण क्या है? कारण है कि संसार जहाँ सुख ढूंढ रहा है, उस संसारी इंद्रिय सुख के साथ दुःख लगा है। इधर कुछ क्षण को सुख मिला, पीछे से दूसरा दुःख आ गया, वो सुख, दुःख बन गया। इसीलिये इतनी मेहनत के बाद रिजल्ट दुःख ही होता है। भगवान महावीर उस सुख की बात करते हैं जिसके पीछे दुःख नहीं है। वह सुख प्राप्त होता है 'ज्ञान' से।

ज्ञान का कार्य है जो हमें करना चाहिये वह कराना, जो नहीं करना चाहिए

उसे छोड़ना। ज्ञान पाप कार्यों से दूर कर, सद्‌कार्यों में प्रवृत्त कराता है। ''ज्ञान दीप तप तेल भर'' अर्थात् ज्ञान आते ही तपस्या साथ चली आती है। दोनों का अविनाभावी संबंध है। सच्चा ज्ञान है तो तपस्या की ओर प्रवृत्ति स्वयमेव चली आती है।

तपस्या क्या है? सीधी सरल सी परिभाषा है। जो कार्य करना चाहिये, उसे करना प्रारंभ करना और जिन कार्यों से पाप बंध होता है, उन्हें छोड़ना। बस ये ही तपस्या है। जैसे—भोजन करते हैं और भोजन में भी विशेष इच्छाओं के साथ भोजन करते हैं। तब उस भोजन से संबंधित कितना पुरुषार्थ किया, कितनी मेहनत की, उससे कर्मों का कितना आस्रव हुआ। अतः भोजन को सीमित करना, शुद्ध करना, अथवा उपवास आदि करना तपस्या है। जिसकी जिह्वा खाने में और बोलने में वश में हो जाये बस यही सबसे बड़ी तपस्या है।

लोग तपस्या का नाम सुनकर डर जाते हैं। जबकि संसार में देखा जाये, तो संसार में ऐसी कौन सी चीज है, जो तपे बिना आपके काम आती है। तपे बिना कोई भी वस्तु उपयोग नहीं की जा सकती। चाहे भोजन हो या पहनने के कपड़े हों। चाहे बर्तन हो या सोना-चांदी हो। तपने पर ही जीव और अजीव दोनों की शुद्धि होती है।

सोना जब धरती से निकलता है, तब वह आपके उपयोग के लायक नहीं होता सोना एक बार नहीं, दो बार नहीं सोलह बार अग्नि में तपाया जाता है, तब कहीं जाकर सोना आपके आभूषण का रूप बनकर शरीर में धारण करने योग्य होता है। चांदी, तांबा, पीतल, लोहा, सबको अग्नि परीक्षा देनी होती है, तब मनुष्य क्यों डरता है तपस्या करने से।

धरती से हमें अन्न, फल, सब्जी सब कुछ मिलता है। आपने कभी चिंतन किया कि अन्न, फल, सब्जी किस-किस प्रक्रिया से गुजर कर आपकी थाली तक पहुँचते है। किन-किन स्थितियों से गुजरना पड़ता है। कितनी बार अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है। बीज जब धरती में बोया जाता है तब इसके पहले धरती को मुलायम किया जाता है। फिर बीज डाला जाता है। बीज अपना आत्मसमर्पण करता है। तब भूमि उसे गलाकर उसमें से नया अंकुरण पैदा करती है। हवा, पानी, धूप उसे शक्ति देते हैं। पेड़ धीरे-धीरे बड़ा होता है। धूप की गर्मी सहन करता है, हवा और तूफान के थपेड़े सहन करता है। तब कहीं जाकर अन्न आदि की पैदावार होती है।

अभी भी अन्न आपके भोजन के योग्य नहीं हुआ फिर पिसता है, फिर रोटी आदि बनाने में सिकता है, तब आपके भोजन के योग्य होता है। सब्जी को भी अग्नि में उबाला जाता है तब आप सब्जी भोजन में ग्रहण करते हैं। उसके पश्चात् पेट

में भोजन का रस अभी नहीं बना। पेट में पित्ताशय अग्नि में अभी अन्न और पचेगा तब उसका रस रक्त बनेगा तब शक्ति आयेगी। सारी प्रकृति ही तपती है। पेड़-पत्ते, फूल, डाली। कुत्ता, गाय, चिड़िया, कबूतर किसके पास घर है रहने को सब प्रकृति के साथ ही जीते हैं। गर्मी आती है, तो गर्मी सहन करते हैं। आज तक किसी चिड़िया या बंदर के हाथ में पंखा या उसके घोंसले में कूलर, ए.सी. नहीं लगा। बरसात आने पर किसी कबूतर या पशुओं को छतरी लगाये नहीं देखा होगा। बरसात आती है तो सभी भीग जाते हैं। सर्दी आती है, तो कोई पशु-पक्षी कभी स्वेटर नहीं पहनते हैं। कभी रजाई ओढ़कर नहीं सोते। सब प्रकृति के साथ ही जीते हैं।

किन्तु मनुष्य की विडंबना देखिये गर्मी आती है, तो पंखा, कूलर, ए.सी. के बिना जिन्दगी को असंभव समझता है। बरसात आती है सारी दुनिया भीगती है बस मनुष्य ही सूखा रह जाता है। सर्दी में ऊनी कपड़े लादकर रजाई ओढ़कर ठंड से बच जाता है। आप कहेंगे कि पशु-पक्षी के पास बचने की योग्यता नहीं है इसीलिये उन्हें कष्ट सहना पड़ता है। हमारे पास योग्यता है फिर हम कष्ट सहन क्यों करें? जितना आपके पास ज्ञान उसके हिसाब से प्रश्न आपका सही है। किन्तु जब विशेष हमें कुछ मिला है, तो कुछ विशेष करने को मिला। प्रकृति से बचने को नहीं। इसीलिये शरीर तो प्रकृति के हिसाब से ही बना है। हम उसमें विकृति पैदा करके उसे बीमार कर देते हैं।

इस शरीर की रक्षा के लिये कितना परिग्रह इकट्ठा करना पड़ता है और परिग्रह इकट्ठा करने के लिये कितना पाप और कषाय करना पड़ता है। जिससे अंनत पाप का बंध होकर हमारी आत्मा दुर्गति में चली है। अतः ये मानव तन ज्ञानपूर्वक तपस्या करने को मिला है। अन्य गतियों में पशु गति आदि में कष्ट सहन करते हैं पर ज्ञान नहीं होने से कर्म निर्जरा नहीं होती। किन्तु जब ज्ञानपूर्वक वही किया जाये तो उसका नाम है तपस्या।

जैसे एक भिखारी को खाने को नहीं मिला। वह बहुत परेशान है, दुःखी है कि आज भोजन नहीं मिला। दूसरा एक व्यक्ति ने उसी दिन चतुर्दशी का उपवास किया। और वह प्रसन्न है, प्रभु पूजा भक्ति में लगा हुआ है। भोजन दोनों ने नहीं किया, उसमें से एक ने पाप बंध किया दूसरे ने पुण्य बंध। एक के पास खाना नहीं था इसीलये नहीं खाया, दूसरे के पास था किन्तु उपवास किया इसीलिये नहीं खाया। दोनों में श्रेष्ठ कौन? भिखारी का कष्ट है, और उपवास करने वाले का त्याग तपस्या की श्रेणी में आयेगा भावपूर्वक पवित्र भावों से किया त्याग, तपस्या है।

हर समस्या का समाधान तपस्या है। जिससे पाप कर्म झड़ते हैं और पुण्य कर्म

का आस्रव होता है और भेद विज्ञान पूर्वक तपस्या की जाये तो वह हमारे मोक्ष मार्ग में आगे बढ़ने में सहायक है। सम्यक्‌दर्शन में कारण है, सम्यक्‌चरित्र पथ में आगे बढ़ायेगी। इसीलिये तप करने से डरना नहीं चाहिए। तपस्या करने से मन की संकल्प शक्ति मजबूत होती है। आत्मा प्रसन्न होती है। शरीर में मजबूती आती है। अध्यात्मिक सुख के साथ भौतिक सुख दौड़े चले आते हैं। मान, सम्मान, यश, कीर्ति, पीछे-पीछे चले आते हैं। इहलोक और परलोक दोनों सुधर जाते हैं। कर्म से मोक्ष की प्राप्ति भी होती है।

वस्तु का होना या नहीं होना महत्वपूर्ण नहीं है। मन में त्याग की भावना होना और उसे कार्यरूप परिणत करना ही तपस्या है। भगवान महावीर ने त्याग और तपस्या के बल पर ही अपनी आत्मा को परमात्मा बना लिया। जब भगवान को ही त्याग करने पर मिला है, तो हमें बिना त्याग किये कैसे सुख शांति मिल सकती है। संसार को तन-मन धन से ग्रहण करना मतलब कीचड़ में पैर डालना और त्याग करना मतलब कीचड़ से बाहर खुद को निकालना है।

जीव का ऐसा स्वभाव है जहाँ जाता है वहाँ रम जाता है, वहीं का हो जाता है, वहाँ की हर वस्तु हो या शरीर अपना समझने लगता है। इसी कारण जीव त्याग मार्ग में आगे नहीं बढ़ पाता है। जैसे—एक सुअर नाली में रहता था। नाली में लोट रहा था। नारद जी वहाँ से निकले, सुअर को देखकर, उन्हें बड़ी दया आई, देखो बेचारा सुअर कितनी गंदगी में रह रहा है। उन्होंने सोचा चलो सुअर को स्वर्ग ले चलते हैं। वे सुअर के पास पहुँचे भाई चल स्वर्ग वहाँ बहुत सफाई और सुन्दरता है। सुअर बोला ठीक चलूँगा, पर पहले ये बताओ कि वहाँ नाला मिलेगा कि नहीं? नारद जी ने माथा ठोंक लिया। और इस बात का ज्ञान कर लिया कि नाली का कीड़ा नाली में ही रहना चाहता है। उससे बाहर निकलने के लिये महान पुण्य चाहिये। तब पाप के कीचड़ से बाहर निकलना हो पायेगा।

इसी तरह संसारी प्राणी है। अनाज का कीड़ा 24 घंटे अनाज में रहकर अन्न खाता है। मनुष्य भी सदा खाने में अपना मुख खुला रखता है। सागार धर्मामृत में लिखा भी है—

काले कले कलौचित्ते, देह चंदनादि, कीटकम

अर्थात् इस कलिकाल में चंचल चित्त वाले मनुष्य का शरीर अन्न का कीड़ा है। इस कीड़ा को, मनुष्य की संज्ञा, तब प्राप्त होगी जब यह त्याग तपस्या करेगा। वरना जन्म लेते ही खाना शुरू कर दिया था, सारी जिन्दगी खाने में बिता दी, और मरते-मरते भी यही कहता है जरा हलवा बना दो, जरा पकौड़ी बना दो। खाते-खाते

ही मर जाता है। ऐसा लगता है ऐसे जीवन ने केवल खाने को ही जन्म लिया था। वही करके चला गया, कुछ भी अच्छा काम नहीं कर पाया।

गाड़ी में पैट्रोल क्यों डालते हैं और कितना डालते हैं? उत्तर-गाड़ी चलाने के लिये गाड़ी में पैट्रोल डालते हैं। और गाड़ी जितना चलाना हो उतना पैट्रोल डालते हैं। गाड़ी को नहीं चलाये, तो गाड़ी पैट्रोल भी नहीं खाती है। शरीर भी एक गाड़ी है। दो आँखें लाइट है, पैर चक्के हैं, स्टेरिंग हाथ हैं, पेट टंकी है। इस गाड़ी को भी उतना भोजन दो जितनी आवश्यकता हो। दोनों गाड़ी में इतना अंतर एक गाड़ी को चाबी से बंद कर देते हें तो वह बंद हो जाती है और पैट्रोल नहीं खाती है। किन्तु शरीर रूपी गाड़ी सदा स्टार्ट रहती है। चाहे सो रहे हो या जाग रहे हों, बैठे हों या कुछ कर रहे हों, गाड़ी को भोजन चाहिए। पलक झपकने में भी शक्ति लगती है। देखने में भी शक्ति लगती है और शरीर शक्ति संचित भी कर लेता है। यदि उपवास करें तो भी गाड़ी चलती रहती है। बंद नहीं होती है।

वह गाड़ी हमें जहाँ जाना हो मंजिल पर पहुँचाती है। आत्मा को जहाँ जाना हो तो भी ये गाड़ी मंजिल पर पहुँचाती है। शरीर गाड़ी है आत्मा मालिक है और मन ड्राइवर है। यदि आत्मा जाग्रत हो तो गाड़ी, आत्मा के हिसाब से सही रास्ते पर चलती है और आत्मा सुप्त हो जाये तो मन रूपी ड्राइवर इंद्रियों की इच्छा पूर्ति हेतु गाड़ी को संसार में भटका देता है। इसका कष्ट आत्मा को सहन करना पड़ता है। कषाय और पापों के बीच आत्मा भटक जाती है।

जाग्रत आत्मा ही शरीर से तपस्या करा सकती है। वरना अनादि के संस्कारों के वशीभूत मोह और राग में ही जीवन व्यतीत हो रहा है। इस आत्मा ने खाना सोना और इंद्रियों के भोग के अलावा कुछ नहीं किया। चाहे पशुगति हो या देव गति तिर्यंचगति, नरक गति, मनुष्य गति में तो प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो ही रहे हैं।

सारा बाजार भोगों की सामग्री से भरा पड़ा। आकर्षक, आँखों को सुंदर लगने वाली, भ्रमित करने वाली सामग्री लोगों के मन लुभा रही है। शरीर के स्तर पर ही सारा बाजार है। आत्मा को कल्याण मार्ग पर बढ़ाने वाली कोई दुकान नहीं है। भौतिकता का बढ़ता रूप इंसान को स्वयं से दूर कर रहा है, तपस्या से दूर कर रहा है। ऐसे में सुख और शांति के सारे रास्ते बंद हो जाते हैं।

वर्तमान समय में इन भोगों की सामग्री का त्याग बहुत बड़ी तपस्या है। भोगों की सामग्री के प्रति आकर्षण न हो ये बहुत बड़ी बात है। त्याग के संकल्प से मन शांत हो जाता है। वरना जिसके शरीर में आभूषण कपड़े आदि दिखेंगे आपको वैसा लेने की इच्छा जाग्रत हो जायेगी। भौतिकता की अंधी दौड़ का, कहीं अंत नहीं है।

आज ये वस्तु आई, कल दूसरी, परसों तीसरी, आप कहाँ तक भागेंगे। आज मोबाइल के प्रति इतना आकर्षण है कि, एक बच्चे को कहते सुना है, ''पापा आपको छोड़ देंगे, पर मोबाइल नहीं छोड़ेंगे। मोबाइल खरीदने के लिये बच्चे घरों में चोरी करते हैं। लड़कियाँ इस तरह के सुखों के लिये गलत काम करने लगती हैं। पाकिस्तान के एक लड़के ने अच्छा मोबाइल खरीदने के लिऐ अपनी किडनी बेच दी। जहाँ देखो सब अपने-अपने मोबाइल में व्यस्त हैं। किसी को एक-दूसरे से बात करने का समय नहीं है। सोते-सोते मोबाइल देखकर सोते हैं, सो कर उठकर सबसे पहले मोबाइल ही देखते हैं। आज के समय में आदमी भोजन छोड़ सकता है, पर मोबाइल नहीं छोड़ सकता। ये दुनिया न जाने कहाँ जा रही है। इसमें फंसकर हमारी एनर्जी (शक्ति) हमारा ज्ञान और हमारा आयुकर्म नष्ट होता है। हमारी कमाई दौलत भी नष्ट होती है।

भारत की संस्कृति का
पुद्गल की आकृति का
धरती पर प्रकृति का
बड़ा ही महत्व है

देखने में दर्पण का
नहीं होने में कृपण का
बीज के आत्म समर्पण का
बड़ा ही महत्व है

तीर्थंकरों में विमल का
गंगा के निर्मल जल का
कीचड़ में कमल का
बड़ा ही महत्व है

चंद्रमा में गुरुत्वाकर्षण का
भौतिकता में आकर्षण का
भगवान के दर्शन का
बड़ा ही महत्व है

दूर होने में समस्या का
तिथियों में अमावस्या का
जीवन में तपस्या का
बड़ा ही महत्व है

जंगल में नाग का
त्यौहारों में फाग का
जीवन में त्याग का
बड़ा ही महत्व है

प्रभु महावीर को छूने वाली हवा दवा बन जाती है

कुछ लोग कहते हैं कि भगवान महावीर कैसे भगवान हैं? जो न किसी बीमार की सेवा करते हैं और न उन्हें दवाई देते हैं। वे न किसी निर्धन को वरदान देते हैं और न दुःखी के आँखों के बहते हुये आंसू पोंछते हैं। न किसी के पास बैठकर उन्हें धीर बंधाते हैं। वे कैसे भगवान हैं?

हमने कहा भगवान महावीर वास्तव में ऐसे भगवान थे, जिनकी चरण छांव ही सारे दुःखों को दूर कर देती थी। जो हवा प्रभु को छू लेती थी, यदि वह हवा बीमार को छुये तो उसकी सारी बीमारियाँ ठीक हो जाती थीं। भगवान महावीर के सच्चे भक्त के घर में लक्ष्मी हमेशा वास करती है। माणिक, मोती लड़ियाँ उसके चरणों की दासी होती हैं। प्रभु किसी के आंसू तब पोंछे जब आंसू आयें। प्रभु के चरणों में आने वाले का मन और आत्मा उनके दर्शन मात्र से प्रसन्न हो जाती है। और कई भवों के पाप कट जाते हैं। वे बोलकर धीर नहीं बंधाते बल्कि वे बिना बोले ही उनके प्रभाव से सारे दुःख दूर हो जाते हैं। वे ऐसे भगवान थे उन्हें कुछ करने की जरूरत नहीं।

सारा संसार केवल पुद्गल की शक्ति को शक्ति समझता है। किन्तु ये सारा अतिशय आत्मा के ध्यान की शक्ति का था। आत्मा में अनंत बल है, जिसे भगवान महावीर ने अपनी तपस्या और त्याग से प्रगट किया। प्रभु ने अंनत दर्शन, अनंत ज्ञान, अनंत सुख, अनंत वीर्य को प्रगट कर लिया है। जिसने आत्मा की शक्ति को पहचान लिया और उसे प्रगट कर लिया उसके सामने सारे संसार की शक्तियाँ निष्क्रिय हो जाती हैं।

जब भी और जहाँ भी अहिंसा शब्द का नाम लिया जाता है, भगवान महावीर का नाम और उनका चित्र सामने आ जाता है। भगवान महावीर की जीवन चर्या जीवन शैली ऐसी थी कि सूक्ष्म से सूक्ष्म जीव की रक्षा करते थे। उनका प्रेम मनुष्य मात्र के प्रति नहीं बल्कि प्राणी मात्र के प्रति था। पशु, पक्षी, पेड़, पत्ती, फूल, फल

सबके ऊपर उनका प्रेम बरसता था।

जिसके अंदर द्वेष ना हो, ईर्ष्या न हो, राग, मोह, क्रोध न हो, लालच, मान, मायाचारी न हो, बस ध्यान ही ध्यान हो और सब जीवों के प्रति करुणा भाव, सब जीवों के प्रति अनंत प्रेम हो, ऐसी आत्मा परमात्मा बन जाती है। जो सब जीवों के सुखी होने की भावना रखते हैं, सबका कल्याण चाहते हैं, ऐसे जीव अनंत शक्ति को प्राप्त कर लेते हैं। वे परम पिता, भगवान महावीर थे। ऐसी भावना करना कठिन तो है, असंभव नहीं है। ऐसे भगवान महावीर की हम उपासना करते, पूजा भक्ति करते हैं और उनका जन्म कल्याणक मनाते हैं।

लोग कहते हैं सपने साकार नहीं होते।
होते हैं तो सत्य के आकार नहीं होते।
देखो त्रिशला माँ के सपने साकार हो गये
गोद में आये महावीर देश के भगवान हो गये।

अपने-अपने विचार दीजिये—

मिथ्या दृष्टि का जन्म होता है
सम्यक्दृष्टि की जन्म जयंती होती है
तीर्थंकरों का जन्म कल्याणक होता है।
तो भगवान महावीर जयंती
कहें या जन्म कल्याणक कहे।

अहिंसा के दीप को प्रकाश दिया जिसने
हिंसा के तम का नाश किया जिसने
उन महावीर प्रभु को हम नमन करते हैं
हिंसा के तम का नाश किया जिसने।

मुझसे मेरा मिलन करा दो

साथ चाहिये, साथ चाहिये, साथ चाहिये, 24 घंटे साथ चाहिये, अकेले जीना नहीं आता, अकेले में मन नहीं लगता। थोड़ी देर के बाद, मन भीड़ की तरफ भागता है। भोजन का समय हो तो साथ चाहिये। अकेले में खाना खाना भी अच्छा नहीं लगता। जबकि सब अपना भोजन अलग-अलग करेंगे, अपने-अपने हाथ से खाना है, अपने-अपने पेट में जाना है। फिर भी साथ चाहिये। क्यों किसलिये?

लड़ना है, तो भी साथ चाहिये अकेले में शक्ति कम पड़ती है, साथ मिलने के बाद और विशेषता आ जाती है। आवाज तेज निकलने लगती है। सोना है तो भी अकेले में नींद नहीं आती है। डर लगता है। जबकि सबको नींद अपनी-अपनी लेनी है। फिर भी साथ चाहिये। घूमने जाना है तो भी साथ चाहिये। मंदिर जाना है तो भी साथ चाहिये। आदमी अकेले कोई काम नहीं कर पाता। अकेले केवल एक ही काम होता है वह है परलोक की यात्रा। उसमें यदि साथ माँगोगे, तो भी नहीं मिलेगा। अकेले ही जाना पड़ेगा।

बच्चे जब पढ़ाई करने जाते हैं यदि उनका कोई किसी में एडमीशन नहीं लेता है, तो वो भी उस स्कूल को छोड़ देता है, कोई भी नहीं है। जबकि दोस्त के अलावा अन्य बच्चे और भी हैं; किन्तु वह दोस्त के साथ के बिना पढ़ता भी नहीं है। मन को हमने पराधीन बना दिया। स्वयं के साथ जीना नहीं आता और स्वयं के साथ जीने की शिक्षा भी नहीं मिली।

जब तक हम दूसरों के साथ जीने का कार्यक्रम करते रहेंगे; तब तक हमारा संसार बढ़ता रहेगा। तब तक हम पराधीन जिन्दगी जीते रहेंगे। पराधीनता की बेड़ियों में बंधकर जीना कितना मुश्किल है। आप स्वयं इस अनुभव से गुजर चुके। कभी-कभी आपको लगता भी होगा कि कहाँ जायें, क्या करें जहाँ जाकर शांति मिले। पर रास्ता मालूम नहीं, मजबूर हैं। किसी ने कहा भी है—

पराधीन स्वप्नौ सुख नाही

देश जब गुलाम था, अंग्रेज भारतवासियों के ऊपर अपना शासन करते थे और मना करने पर अत्यधिक पीड़ा देते थे। उस पीड़ा को पीड़ा माना और उस पराधीन जिन्दगी को कष्ट समझा, तो उससे गुलामी की जंजीर तोड़ने का उपाय किया। जान गंवा कर भी भारत को आजाद किया। किन्तु कर्म रूपी, मोह रूपी अंग्रेज भी हमारी आत्मा पर शासन कर रहे हैं। उससे मुक्ति का उपाय कब करोगे। कब कर्म की जंजीर को तोड़ोगे। नहीं किया तो पराधीनता की जिन्दगी से कभी मुक्त नहीं हो पाओगे।

पराधीनता से मुक्ति के उपाय

1. हम धर्म ध्यान प्रारंभ करें। अर्थात् अपना कुछ समय, भगवान का ध्यान करते हुये जाप में निकालें।
2. भगवान के गुणों का, भगवान के स्वरूप का चिंतन मनन करें। उन जैसे गुणों की प्राप्ति की भावना भायें। मन शांत होगा, भावों में सुधार आयेगा।
3. ध्यान और जाप में किसी के साथ की इच्छा त्यागे, और एकांत में निडर होकर साधना करें।
4. घर के हर सदस्य की समस्या को समझें, आपके हाथ में दूर करने का उपाय हो, तो करें, वरना चिंता मुक्त हो भगवान से प्रार्थना करें और उन्हीं पर छोड़ दें। सारा अपने सिर पर न रखें।
5. घर के सदस्यों की छोटी-छोटी गलती पर दिन भर गुस्सा न करें। समय सबको सिखा देता है, और कर्म सबको सजा देता है, कोई आपसे कार्य न सीखे तो उसी पर छोड़ दें, गुस्सा न करें। प्रेम व्यवहार रखें और चिंता मुक्त हो जायें।
6. अपनी आत्मा और परमात्मा को सर्वस्व मानकर जियें, परिवार के हर सदस्य के साथ कर्तव्यों का निर्वाह करें। जीवन कल्याण और उत्थान की तरफ जायेगा।
7. मोह और राग सताये तो स्वयं के द्वारा स्वयं को समझाने का प्रयास अवश्य करें।
8. निंदा, बुराई और झगड़ा करने वाले से संपर्क कम रखें, आपका मन शांत रहेगा।
9. परिवार वालों से भी अनावश्यक न बोलें अधिक बोलने पर झगड़ा अवश्य होता है। सबके प्रति मन में प्रेम भावना अवश्य रखें।
10. भगवान के भाव सहित दर्शन, भाव सहित पूजा, जाप, और भाव सहित स्वाध्याय अवश्य करें।

यदि आपने इतना कर लिया तो निश्चित आपके परिवार में भी शांति होगी और आपका जीवन भी अच्छा बनेगा और जब धर्म की भावनायें तीव्र होंगी तो दिन भर साथ की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी क्योंकि हमने स्वयं के साथ जीना सीख लिया है। जिसका मन अकेले में शांत रहे, समझना स्वयं मुलाकात हो गयी। कहा भी है–

''मुझसे मेरा मिलन करा दो''

अभी तक संसार की चेतन और अचेतन वस्तुओं से ही मिलते रहे। आज मुझसे मेरा मिलन हो गया।

रेल में पांत का
मुख में दांत का
जीवन में साथ का
बड़ा ही महत्व है

सागर के मंथन का
गाय के थन का
करने में प्रभु चिंतन का
बड़ा ही महत्व है

नहीं भूलने में औकात का
कार्य के शुरुआत का
स्वयं से मुलाकात का
बड़ा ही महत्व है

भावों की अभिव्यक्ति का
छोड़ने में आसक्ति का
पराधीनता से मुक्ति का
बड़ा ही महत्व है

कपड़े के थान का
नहीं होने में परेशान का
जीवन के उत्थान का
बड़ा ही महत्व है

करने में अच्छे व्यवहार का
जीवन में सुधार
जीने के लिए परिवार का
बड़ा ही महत्व है

अपना खून न पियें

साड़ी में पिन लगाती हुई ममता के हाथ में पिन चुभ गई और खून आ गया, उसने फटाफट उंगली मुँह में डालकर खून पी लिया। ममता ही नहीं आज ज्यादातर लोग ऐसा करते हैं। अर्थात् अपना खून बाहर क्यों जाये इसलिये वे खुद खून पी लेते हैं। भगवान महावीर ने इसे माँसाहार के अंतर्गत माना है। खून किसी का पिया जाये अपना या दूसरे का माँसाहार की श्रेणी में आता है। अतः चोट लगने पर अपना खून न पियें बल्कि हाथ को साफ पानी से धो लें।

माँस खून हड्डी आदि सब माँसाहार की श्रेणी में आता है। अतः अहिंसक प्रभु के भक्तों को छोटी-छोटी बात का ध्यान रखना आवश्यक है। खून को पीने पर भी आप मान लेंगे कि ये माँसाहार है। पर एक छोटी सी आदत 90% लोगों में पाई जाती है। दांतों से हाथों के नाखून काटने की। अक्सर लोगों की उंगली मुँह में ही लगी रहती है। जरा सा हाथ खाली हुआ तो फटाफट नाखून काटने लगते हैं या नाखून चबाने लगते हैं। कुछ लोग तो इतने खा जाते हैं कि उंगली भी अजीब लगने लगती है, पर वे अपनी इस आदत को नहीं छोड़ते हैं।

जैसे खून पीना माँसाहार है, वैसे ही अपनी ही उंगली के नाखून मुँह में डालना माँसाहार है। क्योंकि नाखून हड्डी है और हड्डी मुँह में डाली जाये तो वह माँसाहार की श्रेणी में आयेगा। बात बहुत छोटी है पर सुधारने की आवश्यकता है। और ये काम बच्चे ही नहीं बड़े बूढ़े तक भी करते हैं। माँसाहार के त्यागी को ये दोनों कार्यों को छोड़ना आवश्यक हैं।

बच्चो को पालने का
पंखा को झालने का
मुँह में उँगली नहीं डालने का
बड़ा ही महत्व है

रसोई में शुद्धि क्यों?

बचपन में जब बिना पैर धोये रसोई में घुसते थे तो, दादी की आवाज आती थी अरे पैर धोकर रसोई में जाना। जब स्कूल से लौटते थे, तो माँ कहती थी पहले स्कूल के कपड़े बदलो हाथ पैर धोओ फिर रसोई में आना। बहुओं को सासुएं कहती थीं, रसोई में नहा कर जाना, रात भर के जो ये बिस्तर के कपड़ो से कुछ मत छूना। जो कपड़े पहने हैं, वे भी मत छूना। पहले के समय बरामदा, आंगन और खाट सबके घर में होती थी। सुबह बिस्तर उठा कर अलग रख दिये जाते थे। खाट खड़ी कर दी जाती थी। दोपहर भोजन के बाद किसी को आराम करना हो तो, वह खाली खाट पर आराम करता था उस पर बिस्तर नहीं बिछाता था। ताकि रात की अशुद्धि रसोई में न पहुँचे। आज क्या हालत है, उसका वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है।

पहले बाजार से, दुकान से लौटकर पुरुष कपड़े बदलते थे, तब रसोई में जाते थे और साथ ही हाथ पांव धोकर ही प्रवेश करते थे। यदि सब्जी लाते थे, तो उन्हें पहले बाहर धोते थे, सूखा करते थे फिर सुधारते थे। बाहर से आने वाले संक्रमण को रोकने की उनकी क्रिया एकदम शुद्ध होती थी। जिससे कीटाणु प्रवेश नहीं कर पाते थे।

पहले का सेनीटाइजर

वर्तमान में सबसे अधिक बिकने वाली वस्तु का नाम 'सेनीटाइजर' है। क्या सेनीटाइजर पहले नहीं था। आपकी दृष्टि से नहीं होगा, पर मैं कहती हूँ पहले के समय में सस्ता सुंदर सेनीटाइजर था। जो अमीर और गरीब प्रयोग कर सकें। अर्थात् पहले घरों में चूल्हे जलते थे, या अंगीठी सिगड़ी पर भोजन बनता था, उसमें से होनी वाली राख इतनी तीखी होती है कि हाथ में एक कीटाणु नहीं रह सकता है। पहले घर में बर्तन भी राख से माँजे जाते थे। अर्थात् बर्तन भी सेनीटाइज किये जाते थे। राख इतनी क्षार वाली होती है कि आप दिन में 10 बार हाथ धोयें तो इतना सूखापन आ जायेगा

कि तेल लगाने की जरूरत पड़ जायेगी। वर्तमान में तरह-तरह के साबुन के द्वारा शुद्धि की जाती ळै। जबकि वे साबुन स्वयं अशुद्ध हैं। अर्थात् साबुन में गाय, भैंस की चर्बी का प्रयोग किया जाता है। सेनीटाइज में एल्कोहल का प्रयोग किया जाता है। बर्तनों को साफ करने के लिए अनेक तरह के पाउडर, साबुन उपयोग में लेते हैं तथा धोने की लापरवाही से वह साबुन भोजन के साथ पेट में जाता है ओर अनेक तरह की पेट की एवं स्किन (चमड़ी) की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

रसोई में आटा मसाला

भोजन का प्रमुख मटेरियल आटा और मसाला है। पुराने समय में गेहूँ के मौसम में साल भर का गेहूँ इकट्ठा आता था। गर्मियों के दिनों में गेहूँ धोकर छत पर डाला जाता था। दो-चार बार धूप में, उस पर हाथ फेरने भी जाना पड़ता था। अर्थात् गेहूँ के साथ थोड़ी धूप घर वालों को भी लग जाती थी। फिर वह गेहूँ किसी बड़ी लोहे की टंकी में भरकर बंद कर दिया जाता था आवश्यकतानुसार निकाल-निकाल कर पीसते जाते थे। इसी तरह से चने की दाल भी रखी जाती थी तथा बहुत सा रसोई का सामान बारिश आने से पूर्व ही एकत्रित किया जाता था। सभी मसाले साबुत (बिना पिसे) धोकर सुखाकर रख लिये जाते थे। ताकि बारिश में सड़ा हुआ, बारिश से भीगा सामान न लेना पड़े। पापड़, बड़ी, अचार, जीरामन नमक, आदि अनेक तैयारी वह गर्मियों में ही कर लेती थीं। ताकि बारिश के चार महीने में धर्म ध्यान अच्छी तरह से कर सकें एवं जीव सहित वस्तु उपयोग न करनी पड़े।

उत्तम गृहणी घर की सभी व्यवस्थाओं को बड़े सुचारू रूप से, मेहनत के साथ करती थी। सारी गर्मी ए.सी. और कूलर के सामने नहीं बिताती थी। क्योंकि जैसा खाओ अन्न, वैसा होगा मन। जैसा पिओ पानी, वैसी बोलो वाणी।

अपने परिवार को संस्कारित करना उत्तम नारी का कार्य है, वह न स्वयं होटल में जाकर खाती है, न अपने पति एवं बच्चों को जाने देती है। वह अनेक तरह के स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर खिलाती है, जिससे परिवार में स्वास्थ्यवर्द्धक एवं संतुष्ट करने वाले एवं पौष्टिक भोजन प्राप्त होता है। होटल तो परिवार के दो चार सदस्य जायेंगे, पर घर में माता-पिता भी हैं जिनका ध्यान रखना नारी का काम है। सर्दी गर्मी देखकर महिलायें रसोई को शुद्ध बनाने में पूरी मेहनत करती रहें।

कोरोना के समय में

उपर्युक्त कार्यशैली से जिनके घर में ऐसे कार्य होते होंगे, कोरोना के लॉकडाउन के

समय में उन्हें कोई दिक्कत नहीं हुई होगी। क्योंकि उन्हें घर के भोजन का अभ्यास है। जिन्हें होटल में खाने की चट होगी वे अवश्य ही परेशान हुये होंगे। नारी अपने घर को चाहे जैसा बनाये यह उसके हाथ में है। कोरोना ने घर का भोजन करना सिखा दिया। वापस उसी युग में आ जाओ, जहाँ से चलकर होटल तक पहुँचे थे।

महिलाओं का आलस दुःख का कारण

वर्तमान समय में आटा की चक्की आ गई, मिक्सी आ गई, अब तो बाजार के मसाले और बाजार के आटे का उपयोग नहीं करना चाहिये। पहले के समय में तो घर में हाथ की चक्की से आटा पीसते थे। दो बच्चे होने के बाद भी सारा काम शुद्धिपूर्वक हो जाता था। अब घर में दो बच्चे हैं, तो फुर्सत नहीं मिलती। और बाद में आदत पड़ जाती है।

आटा मसाला बेचने वाले अपने सामान के इतने गुण बताते हैं कि सामान्य व्यक्ति कहेगा कि ये ही सही है बाकी सब गलत हैं। पर वास्तविकता में वह ऐसा होता नहीं है। ऐसे ही मसालों के लिये होता है।

उदाहरण के लिये—एक व्यक्ति मेरे पास आया और बोला में मिर्ची का काम दोबारा से शुरू करना चाहता हूँ पर अब बेईमानी नहीं करूँगा। मैंने पूछा इसमें बेईमानी कैसे होती है, वह बोला मैं मिर्ची के पीछे के छोटे-छोटे टुकड़े डंठल खरीद के ले आता था उन्हें पीसकर उनमें लाल रंग डाल देता था, जिससे मिर्ची दिखने में सुंदर होती थी पर वह वास्तव में ठीक नहीं होती थी। मुझे घाटा बहुत लगा। अब मैं ऐसा नहीं करूंगा। तब मुझे पता चला कि मिर्ची में रंग मिलाया जाता है।

ऐसे ही धनिया में घोड़े की लीद मिलाई जाती है। हल्दी में पीली मिट्टी मिलाई जाती है। अतः बाजार का आटा मसाला नैतिक रूप से अशुद्ध होता है। इसलिये साबुत धनिया, मिर्ची, हल्दी लाकर घर में पीसना चाहिये।

मर्यादा

भगवान महावीर ने आटे और मसाले की मर्यादा बताई है। आटा और मसाला पिसने के बाद सर्दी में सात दिन, गर्मी में पांच दिन और बारिश में तीन दिन तक ग्रहण करने योग्य है। इसके बाद उसमें असंख्यात जीवों की उत्पत्ति शुरू हो जाती है। मार्केट में मिलने वाले आटा और मसाला की तो कोई मर्यादा ही नहीं रह जाती। अतः अभक्ष्य कहे हैं। भगवान महावीर का उपदेश है कि ऐसा पदार्थ न खायें जिससे जीव की हिंसा हो।

रसोई में सकरा का संक्रमण

मध्यप्रदेश में जैन परिवार की रसोई में सकरे का ध्यान रखा जाता है। सकरा अर्थात् लगार जैसे कोई आटा सान रहा है, तो उस सानते आटे के हाथ घी दूध मसाला या सूखे आटे में नहीं लगायेगा। यदि लगाता है, उस आटे के हाथ के जो परमाणु हैं वे उस वस्तु में चले जायेंगे और उसमें जीवोत्पत्ति प्रारंभ हो जायेगी। अर्थात् संक्रमण हो जाएगा। अचार, पापड़ चाहे खाली बर्तन धुले हुये क्यों न हों वे भी सकरे हाथ से नहीं छुये जाते। मध्य प्रदेश में ऐसा देखा गया है।

वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाये तो संक्रमण होता है, जीवोत्पत्ति होती है। अतः रसोई में शुद्धि के लिये सकरे हाथ से कोई वस्तु न छुयें। बचपन में अक्सर माँ कहा करती थी जूठे हाथ से भोजन नहीं छूना, उसमें भी संक्रमण हो जायेगा। ये भी देखा जाता है कि सकरे हाथ से छुआ सामान जल्दी खराब हो जाता है और खराब सामान को यदि लालच में खा लिया तो, बीमार होने की संभावना रहती है। कुछ हो न हो पर मन की अशुद्धि तो हो ही जाती है। अर्थात् संक्रमण अशुद्धि का कारण है।

आटे की लोई का
पर्वों में होई का
घर में रसोई का
बड़ा ही महत्व है

अनाज में दाने का
इनाम में पाने का
महिलाओं के द्वारा शुद्ध भोजन बनाने का
बड़ा ही महत्व है

चाँवल में चुनने का
बुनाई में बुनने का
रसोई में सकरा मानने का
बड़ा ही महत्व है

सोचने में बुद्धि का
सुख की वृद्धि का
रसोई की शुद्धि का
बड़ा ही महत्व है

जीजा के सालों का
सिर पर बालों का
रसोई में शुद्ध मसालों का
बड़ा ही महत्व है

सारा संसार शिक्षा का केन्द्र है

संसार का हर प्राणी संसार से कुछ न कुछ ग्रहण करता है। नाक से सांस लेता है, कान से आवाज सुनता है, मुँह से भोजन ग्रहण करता है। आँखों से चित्र ग्रहण करता है। इन सबसे विचार ग्रहण करता है। पर जो ग्रहण करना चाहिये उसे छोड़ देता है। मेरी भावना में कहा है—

गुण ग्रहण का भाव रहे नित,
दृष्टि न दोषों पर जावे।

हम संसार से अवगुण ग्रहण करते हैं, गुण नहीं। संसार का कण-कण हमें शिक्षा दे रहा है, पर लेते ही नहीं हैं। चारों तरफ हमारे सुधार के लिये ज्ञान बरस रहा है, पर हमें तो केवल सब में कमी नजर आती है। किसी ने एक स्त्री की तारीफ की—

आपके बाल नागिन जैसे
आपकी चाल मोरनी जैसे
आपकी आँखें हिरनी जैसे
आपकी नाक तोते जैसी
आपकी बोली कोयल जैसी

महिला अत्यन्त प्रसन्न हुई, पर उसने आगे कहा—काश आपके अंदर थोड़ी सी इंसानियत होती।

महिला विचारों में खो गई। मनुष्य के शरीर की तुलना तिर्यंचों की है। यदि मनुष्य जीवन में मानवता नहीं तो हम तिर्यंच की श्रेणी में आ जायेंगे। इसलिये भगवान महावीर के अनुसार 6 द्रव्य हमें शिक्षा देते हम उनसे सीखें—

जीवद्रव्य—परस्परोग्रहो जीवानाम (त.सू.)

अर्थ—परस्पर में एक दूसरे का उपकार करना।

पुद्गल द्रव्य—शरीर वचन मन का मिलना

सुख-दुःख जीवन मरण, श्वांसोच्छवास।
ये पुद्गल द्रव्य का उपकार। शरीर से धर्म करके ही इंसान भगवान बन जाता है।
धर्मद्रव्य–हमें चलने में सहायक है।
अधर्मद्रव्य–हमें ठहरने में सहायता करता है।
आकाश–हमें रहने को स्थान देता है।
काल–हमें परिणमन करने में सहायक होता है।

जीवों में भव्य का
जिनालय में नव्य का
संसार में छह द्रव्य का
बड़ी ही महत्व है

मकान की नींव का
धर्म में अतीत का
द्रव्यों में जीव का
बड़ा ही महत्व है

गद्दे में नर्म का
नारी में शर्म का
द्रव्यों में अधर्म का
बड़ा ही महत्व है

अखाड़े में मुद्गल का
वृक्षों में जंगल का
द्रव्यो में पुद्गल का
बड़ा ही महत्व है

दिनों में अवकाश का
देश में विकास का
द्रव्यों में आकाश का
बड़ा ही महत्व है

ज्ञान के मर्म का
टूटने में भर्म का
द्रव्यों में धर्म का
बड़ा ही महत्व है

सेठों में माल का
गर्मी में रूमाल का
द्रव्यों में काल का
बड़ा ही महत्व है

भगवान महावीर की दृष्टि में संक्रमण

जैन धर्म वैज्ञानिक धर्म है। हर क्रिया और कार्य के पीछे क्या कारण है, उसका उत्तर वैज्ञानिक दृष्टि से भगवान महावीर ने दिया है। जो बात आज वैज्ञानिक कह रहे हैं, वे बातें भगवान महावीर 2500 वर्ष पहले कह चुके हैं। वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला में खोज करके कहते हैं, और भगवान महावीर ने सच्चे ज्ञान केवलज्ञान की खोज कर उसमें जो देखा वो बताया है। वैज्ञानिकों का ज्ञान मशीनों पर आधारित है, पर भगवान महावीर का ज्ञान स्वाधीन अखंड, अविनाशी है। किन्हीं मशीनों की आवश्यकता नहीं। कुछ तथ्य प्रस्तुत करेंगे जो भगवान महावीर ने 2500 साल पहले कहे हैं और वैज्ञानिकों ने अभी कहा है।

जल में जीवों की खोज

जल ही जीवन है, ऐसा कहा जाता है। सुबह से लेकर रात तक हर क्रिया में जल का प्रयोग होता है। शरीर की सुंदरता स्वच्छता भी जल के आधार पर आधारित है, वरना असलियत सामने आ जायेगी। पशु-पक्षी भी जल के बिना नहीं जी सकते। प्रकृति ने भी मनुष्यों और पशु पक्षियों के लिये भी पानी की पर्याप्त संसाधन दिये। पहाड़ों से निकलने वाली नदियाँ जलापूर्ति करती हैं। उन नदियों से जंगल पर्वत और अनेकों शहर के जीव जंतु जीवन धारण करते हैं। जहाँ नदियाँ हों तो वहाँ जमीन के अंदर से पानी मिल जाता है जिससे कुएं, बाबड़ी, तालाब आदि बनाकर उपयोग किया जाता है। पहाड़ों पर पत्थरों के अंदर से झरने फूटते हैं, उनमें पानी कहाँ से आता है, कोई नहीं जानता। जीव जंतु कुआँ आदि खोद कर, जल प्राप्त नहीं कर पाते, तो प्रकृति में झरने, नदी के रूप में जंगल में भी पानी की व्यवस्था की है और तालाब झरनों, नदियों को भरने के समुद्र के पानी को लेकर, बादल सभी जगह पहुँचा कर पानी की कमी को पूरी करते रहते हैं। कितना अद्भुत है प्रकृति का खेल। जीव जंतु की सेवा में सभी लगे पड़े हैं।

भगवान महावीर ने जल को जीव कहा है। यह एकेन्द्रिय जीव है, जल ही जिसका शरीर है, वह जलकायिक जीव कहलाते हैं तथा जल की एक बूंद में 36450 त्रस जीव (दो इंद्रिय से पंचेन्द्रिय जीव) होते हैं। अतः पानी को सफेद रंग के बड़े कपड़े को दोहरा करके पानी छानने से, त्रस जीव निकल जाते हैं और हमें शुद्ध पानी पीने को मिल जाता है। जिस बर्तन में पानी छान रहे हैं वह साफ हो, छने पानी से तीन बार धुला हुआ हो तथा पानी छानने के बाद छने पानी से उस कपड़े के जीवों को वापस वहीं पहुँचायें जहाँ से पानी लिया था। उसी को बिलछानी या जीवाणी कहते हैं तथा पानी को थोड़ा गरम करने पर 6 घंटे तक उसमें जीवोत्पत्ति नहीं होती। तेज गरम करने पर 12 घंटे तथा उबालने पर 24 घंटे उसमें जीवोत्पत्ति नहीं होती। वह जल स्वास्थ्य के लिये उत्तम होता है।

वैज्ञानिक कहते हैं कि पानी को फिल्टर करके पीना चाहिये क्योंकि पानी में हजारों लाखों की संख्या में सूक्ष्म कीटाणु होते हैं। जो मनुष्य के पेट में जायेंगे तो अनेक तरह की बीमारियाँ होंगी और वैज्ञानिक कहते हैं कि पानी को उबाल कर पिओ तो उत्तम है। पानी को शुद्ध करने की, सैकड़ों तरह की मशीनें बाजार में आ गई हैं। लोग बोतल का पानी शुद्ध मानकर उसका अधिक प्रयोग करते हैं।

वैज्ञानिकों ने पानी के जीव को मशीन में देखा भगवान महावीर ने अपने केवल ज्ञान से देखा। वैज्ञानिकों ने कुछ वर्षों पहले देखा। भगवान महावीर ने 2500 साल पहले बता दिया। वैज्ञानिकों ने शरीर को स्वस्थ रखने के लिये शुद्ध पानी पीने कहाँ भगवान महावीर ने जल में रहने वाले जीवों की रक्षा करने के लिये, जल को छानने के लिये कहाँ दोनों के उद्देश्य में अंतर है।

पानी का संक्रमण

पानी से संक्रमण बहुत तेजी से फैलता है। अनछने पानी की एक बूंद यदि एक बाल्टी छने पानी में गिर जाये तो तत्क्षण छने पानी की संपूर्ण जल राशि में जीवोत्पत्ति हो जाती है। और इतनी तेजी से होती है कि संपूर्ण पानी असंख्यात जीवों का स्थान बन जाता है। एक बूंद पानी से पूरी टंकी में जीवोत्पत्ति हो जायेगी। पानी की गंदगी से पूरा शहर भी एक साथ बीमार हो सकता है। अनछना पानी इतना असर दिखा सकता है तो अन्य कीटाणु भी पानी में उतनी तेजी से संक्रमित होगा। इसलिये भगवान महावीर ने कहा धर्म की शुरुआत पानी छानने से होती है और वैज्ञानिकों ने कहा शरीर के स्वास्थ्य की शुरुआत शुद्ध पानी की शुद्धि से होती हे।

रात्रि भोजन क्यों नहीं कारण? वैज्ञानिक कारण

2500 वर्ष पहले भगवान महावीर ने अपने अलौकिक ज्ञान में देखा कि सूर्य ढलने के पश्चात्, रात्रि में अनंत सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति हो जाती है। दिन में सूर्य की तेज किरणों के कारण वे जीव उत्पन्न नहीं होते, किन्तु रात्रि का वातावरण उन जीवों की उत्पत्ति में कारण है। जब रात्रि में भोजन बनाया जाये, भोजन खाया जाये, तो वे सारे जीव भोजन में शामिल हो जाते हैं। जिससे अनंत जीवों की हिंसा करने का पाप लगता है। इसलिये रात्रि में भोजन नहीं करना चाहिये इसलिये रात्रि में भोजन करना महापाप बतलाया है। जीवन में यदि पाप कम करना हो तो रात्रि भोजन छोड़ो।

वर्तमान समय में वैज्ञानिकों ने खोज की है। स्वस्थ रहने के लिये इंसान को सोने से पांच घंटे पहले भोजन कर लेना चाहिये, ताकि सोते समय पेट को भी आराम मिल सके। इससे पेट का पाचन तंत्र मजबूत होता है। गैस नहीं बनती, खट्टी डकारें नहीं आतीं।

ऐसा एक बार का प्रेक्टीकल है, एक व्यक्ति ने हमें आहार दिया, हमने उसे 15 दिन का रात्रि भोजन त्याग कराया। 10 दिन बाद आकर वह बोला माताजी रात्रि भोजन त्याग से मुझे आनंद आ गया। मुझे आश्चर्य हुआ कि इसमें आनंद वाली क्या बात है। उसने कहा—पहले मैं रात को खाता था, तो सोने के बाद बीच में नींद खुलती थी, खट्टी डकारें आती थी, फिर 'इनो' पीता था। दोबारा मुश्किल से सो पाता था। जब से रात्रि भोजन त्याग किया है, रात भर चैन से सोता हूँ। खट्टी डकारें बंद हो गई, नींद नहीं खुलती। इसलिये आनंद आ गया।

डॉक्टर, वैज्ञानिक रात्रि भोजन त्याग के लिये कहते हैं, पर वे शरीर के स्वास्थ्य के लिए कहते हैं। भगवान महावीर जीव हिंसा से बचने के लिये कहते हैं। काम एक ही है, पर एक में धर्म है, एक में शरीर। धर्म करोगे तो शरीर अपने आप स्वस्थ रहेगा। जीवदयाधर्म का पालन होगा। जीवन दान देंगे, तो अच्छे जीवन की प्राप्ति होगी।

रात्रि में जीव संक्रमण बहुत तेजी से होता है। दिन में सूर्य की वजह से वह कमजोर पड़ जाता है, किन्तु रात्रि में संक्रमण अधिक बलवान होता है। अतः रात्रि में खाने-पीने से जितना बचे, उतना अच्छा होगा। रात्रि के समय छिपकली, मक्खी, मच्छर एवं कीटाणु भी बाहर निकलते हैं, जिससे कई बार दुर्घटना हो जाती है। इसीलिये रात्रि भोजन नहीं करना चाहिये।

ज्यादा खुशी ज्यादा गम दोनों में रहना सम

हमारा मानसिक लेबल सम होना, हमारी सामान्य स्थिति को दर्शाता है। सम अर्थात् समता समुद्र में पूरनमासी को ज्वार आता है अर्थात् पानी सामान्य स्थिति से अत्यधिक ऊपर उठ जाता है और अमावस को सामान्य स्थिति से बहुत नीचे चला जाता है। ठीक इसी तरह से इंसान खुशी में उछलने लगता है, कूदने लगता है, फूल जाता है, उसके अंदर अभिमान की हवा भर जाती है। अपने आपको संसार का सबसे अच्छा आदमी मानने लगता है। अर्थात् सामान्य स्थिति में नहीं रहता है। अपने लेबल से ऊपर पहुँच गया। ऐसी स्थिति में उससे कोई कहे कि चलिये ध्यान कीजिये, मन नहीं करेगा। पूजा में, प्रभु दर्शन में, माला फेरने में, मन नहीं लगेगा। यदि प्रतिदिन का नियम है, तो केवल पूरा होगा, वास्तविक रूप में नहीं कर पायेगा। जिस समय घर में शादी हो या आप किसी के यहाँ शादी में जायें तो अपने भावों को देखना, कैसा लगता है उस समय। जब दूल्हा-दुल्हन को मंदिर लाते हैं, उस समय न तो दूल्हा दुल्हन का मन लगता है और न ही साथ जाने वालों का लगता है। धर्म हमेशा समता की स्थिति में होता है। यदि उस समय भगवान के दर्शन करते हैं, तो मन में अपने भविष्य की कामनायें रहती हैं।

खुशी के मौके में चाहे जन्मदिन का हो या 'वैवाहिक वर्षगाँठ' मन भागता है, सबको अपना वैभव दिखाने का मन करता। जो सुंदर कपड़े, गहने पहने हैं, उसे दिखाने का मन करता है। यदि नये मकान का उद्घाटन हो तो, ऐसा लगता है कि लोग सारा मकान घूमे और एक बार ये कहे बहुत अच्छा मकान बनाया है। उस समय भगवान याद नहीं आता, उस समय ध्यान नहीं किया जा सकता और कोई दूसरा कह दे कि भगवान ने अच्छा मकान बनवाया है, तो लगता है कि ये गलत कह रहा है। मकान बनाने में मेहनत मैंने की है। भगवान ने नहीं की है। जबकि जो कुछ मिला उनकी भक्ति का ही फल है।

ज्यादा खुशी में हम सच्चाई को भूल जाते हैं। मिलने वाली हर सफलता और हर खुशी का जिम्मेवार स्वयं को ही समझते हैं। उस सफलता में मिलने वाले सारे निमित्तों को भूल जाते हैं। सबके द्वारा मिलने वाले सहयोग का याद भी नहीं करते हैं। अहंकार की हवा भरी होने से हम फूल जाते हैं और इस स्थिति में धर्म नहीं हो पाता है।

ठीक इसी तरह जीवन का दूसरा पलड़ा है गम, दुःख, पीड़ा, कष्ट, चिन्ता धूप छाया के समान कभी खुशी कभी गम होता है। जीवन में कभी हंसते हैं, तो कभी आंसू भी बहाते हैं। जीवन में कभी पहाड़ की ऊँचाइयाँ मिलती हैं तो कभी दुःख के गड्ढे में भी गिरते हैं। दोनों के बीच समता में रहना सोच क्यों नहीं पाते। खुशी और गम में हम धैर्य क्यों नहीं रखते। हम शास्त्र के स्वाध्याय से स्वयं को जानने का प्रयास क्यों नहीं करते। कितनी कमियाँ हैं हमारे अंदर। हम उन्हें दूर क्यों नहीं करते? हमें अच्छे कार्यों के प्रति पुरुषार्थ करने में आलस क्यों करते हैं?

इन सब प्रश्नों को एकांत में बैठकर पहले स्वयं से करो और उनका समाधान भी स्वयं से पूछो, शास्त्रों में ढूंढो, फिर भी न मिले, गुरुओं के चरणों में जाकर, विनयपूर्वक उनसे पूछो। अपने जीवन को अज्ञानता में खोना नहीं है। ज्ञान के माध्यम से जीवन को प्रकाशित करना है। अज्ञानता में दुःख, पीड़ा, कष्ट है और ज्ञान में सुख, आनंद, तृप्ति है। बाहर का वैभव होते हुये भी अज्ञानता में सुखी नहीं रह सकते, जबकि बाहर का वैभव नहीं होते हुये भी जीवन आनंदमयी होता है। समता का जीवन ही ज्ञानमयी जीवन कहलाता है।

संबंध दो तरह के होते हैं। राग का संबंध और द्वेष का संबंध। संसारी प्राणी, राग के संबंध को संबंध मानता है, पर द्वेष के संबंध को संबंध नहीं मानता। भगवान महावीर कहते हैं कि इंसान राग में व्यक्ति को कम याद करता है, पर द्वेष में ज्यादा याद करता है और जब तब याद करता है, तब तक संबंध है और जब तक संबंध है; तब तक बंध है और जब तक बंध है; तब तक संसार की वृद्धि है। परिवार में यदि किसी सदस्य को अकस्मात् कुछ हो जाये, तो उस समय परिवार शोक सागर में डूब जाता है। किसी ने कहा है कि—

जब तक जीवे माता रोवे, बहन रोये दस मासा
तेरह दिन तक पत्नी रोवे, फेर करे घर वासा।

चौबीस घंटे परिवार केवल उसी को याद करता है, जो चला गया, उसे नहीं करता है, जो अभी सामने है। आर्त्त ध्यान के कारण उसका मन कहीं भी नहीं लगता। पूजा, पाठ, भक्ति, जाप, भगवान, सामायिक हर समय केवल एक ही चेहरा याद रहता है और उस समय भी भगवान भक्ति के लिये नहीं आते बल्कि उनसे प्रश्न

पूछते हैं कि, भगवान हमने ऐसी तो गलती नहीं है फिर आपने ऐसी सजा क्यों दी? या भगवान आपने मेरे साथ बहुत बुरा किया। भगवान से शिकायत करते हैं, उस कष्ट और दुःख का जिम्मेवार भगवान को ठहराते हैं।

अच्छा हो तो मैंने किया, करते बुरा भगवान।
ऐसा कहता है इंसान...।

जब बेटा डॉक्टर बना था तब, मैंने बनाया, कुछ गड़बड़ हुई, तो भगवान ने की है। मकान बना था, तो मैंने बनाया है, भूकंप आया तो भगवान ने किया है। ऐसा क्यों? हमें अपने कर्म नजर क्यों नहीं आते? हमें अपनी काली करतूत क्यों नजर नहीं आती। हमारी सोच अच्छी नहीं है, हम ये है। और जब तक संसार है तब तक दुःख, पीड़ा, कष्ट साथ-साथ चलते रहेंगे। संसार को तज मुक्ति पथ पर चलें।

माँ की ममता का
जीवों की क्षमता का
जीवन में समता का
बड़ा ही महत्व है

नामों में प्रशांत का
नहीं होने में अशांत का
ध्यान के लिए एकांत का
बड़ा ही महत्व है

नहीं होने में विवाद का
खेत में खाद का
देने में धन्यवाद का
बड़ा ही महत्व है

रसोई में सूप का
धरती में भूप का
आत्मा के स्वरूप का
बड़ा ही महत्व है

आत्मा के गुणों में वीर्य का
राजाओं में शौर्य का
जीवन में धैर्य का
बड़ा ही महत्व है

अखबार में विज्ञाप्ति का
पापों की समाप्ति का
धर्म से आत्मा में तृप्ति का
बड़ा ही महत्व है

परिग्रह का उपयोग दवाई के समान करें

किसी भी वस्तु की व्याख्या भगवान महावीर ने दो नय से की है। प्रथम व्यवहार नय द्वितीय निश्चय नय। व्यवहार नय से वस्तु जिस स्थिति में, जिस वस्तु के साथ मिली हुई है, उसका कथन करता है। द्रव्य के साथ उसकी पर्याय तिर्यंच गति का वर्णन किया। इसमें वर्णन जीव का है, पर पर्याय सहित वर्णन है। कर्म शरीर पुद्गल सहित वर्णन है। यह व्याख्या व्यवहार नय से है। लेकिन जब उसी वस्तु का शुद्ध स्वरूप का वर्णन किया जायेगा, तो उसे निश्चय नय कहते हैं। जैसे—रसोई में आटा निकालती हुई महिला कहती है, रोटी बना रही हूँ। बीज बोता हुआ किसान कहता है अनाज पैदा कर रहा हूँ दही में बिलौती हुई महिला कहती है मक्खन निकाल रही हूँ। अर्थात् आटे में रोटी का दिखना, बीज में अनाज का ढेर दिखना, दही में मक्खन और घी दिखना, इसी तरह इस शरीर में शुद्धात्मा का दिखना, यह शुद्ध निश्चय नय की ही व्याख्या है। निश्चय नय सभी द्रव्यों के शुद्ध स्वरूप की व्याख्या करता है।

जीव की परिग्रह संज्ञा उसके चारों कषाय और पाँच पाप का कारण बनी हुई है। यदि इसकी व्याख्या करें, तो पता चलेगा कि आत्मा में चारों तरफ से परिग्रह का ग्रहण लगा हुआ है। परिग्रह शब्द स्वयं कहता है परि यानी चारों तरफ से ग्रह यानी ग्रहण। अर्थात् आत्मा पर ग्रहण लगा है। जैसे सूर्य चंद्रमा पर ग्रहण लग जाये, तो उसे अकाल कहा जाता है, किन्तु आत्मा का अकाल तो अनादि काल से चल रहा है। आत्मा के साथ या आत्मा के अलावा जो भी है, वह सब परिग्रह की श्रेणी में आता है। आत्मा के साथ जो कर्म लगे हैं, वे परिग्रह हैं। कर्मों के उदय में जो शरीर है, वह परिग्रह है। जिसे मेरा-मेरा कहते हैं, वह सब परिग्रह है।

चिंतन करो कि हमारा मन एक क्षण के लिये भी क्या परिग्रह से रहित हो पाता है? क्योंकि जो विचार चल रहे हैं वे भी पुद्गल है। दिन भर परिग्रह की चिंता में जिन्दगी कट रही है। हम जीवन जी नहीं रहे बल्कि जीवन काट रहे हैं। क्योंकि

आत्मा धर्म में नहीं अधर्म में जा रही है। चिंतन की आवश्यकता है कि आत्मा को आत्मा माने और परिग्रह को परिग्रह माने। सर्वप्रथम अपनी सोच, अपनी मान्यता को सही दिशा देनी होगी। जैसे दो आँखें हैं; वैसे ही दो नय हैं। आज तक की सारी व्याख्या व्यवहार नय से चल रही है। अब दूसरी आँख निश्चय नय की खोलनी होगी तभी हमें इस नश्वर शरीर में अविनश्वर आत्मा के दर्शन होंगे। जिस दिन से इस शरीर में भगवान आत्मा नजर आयेगी, समझना धर्म में प्रवेश हो गया। दोनों नय को समझ कर जब तक आत्मा को नहीं समझेंगे; तब तक हमें सत्य का ज्ञान नहीं होगा। बिना सत्य ज्ञान के जीवन में कुछ जाना ही नहीं।

सत्य जानना क्यों आवश्यक है। शास्त्रों में एक उदाहरण आता है कि एक व्यक्ति चादर ओढ़कर सो रहा था। सुबह-सुबह एक आदमी आया और उसने चादर खींचकर कहने लगा कि यह चादर मेरी है। नींद से उठ कर वह व्यक्ति बोला नहीं यह चादर मेरी है। दूसरे व्यक्ति ने कहा भाई साहब इस चादर के कोने पर मेरा नाम लिखा है। धोबी धोखे से यह चादर आपके यहाँ दे गया। आप निशान देखिये ये मेरी चादर है। मैं ले जा रहा हूँ। जैसे ही व्यक्ति ने कोने पर नाम देखा, चुप हो गया और चादर को मेरी कहना बंद कर, उसे वापस कर दी। अर्थात् सत्य का ज्ञान होते ही उस चादर से मेरापन का भाव खत्म हो गया। ठीक ऐसे ही ये ज्ञान हो जाये कि शरीर मेरा नहीं है, तो इस शरीर का मोह भी कम हो जाता है। रहते इसी शरीर में हैं, पर मेरे पने के भाव में आकर इस शरीर के लिये न जाने कितने पाप कर रहे थे। वे सब या तो बंद हो जायेंगे या कम हो जायेंगे। क्योंकि मेरा कहते ही चिन्ता शुरू हो जाती है। मेरापन खत्म होते ही चिन्ता खत्म हो जाती है। इसीलिये सत्य को जानना आवश्यक है। और निश्चय नय हमें शुद्ध स्वरूप सत्य के दर्शन कराता है।

परिग्रह के तीन भेद

1. चेतन परिग्रह 2. अचेतन परिग्रह, 3. मिश्र परिग्रह—स्त्री आभूषण पहने हुये।

चेतन परिग्रह—जैसे परिवार माता-पिता, पुत्र, पुत्री, रिश्तेदार, मित्र। जिस शरीर में आत्मा है और उसमें मोह भाव, राग भाव है वह चेतन परिग्रह के अंतर्गत आता है। कितनों को अपना बनाया, पर आज तक अपना नहीं बन पाया, भूल जाते हैं इस बात को कि अकेले आये हैं, अकेले जाना है। इतने धोखे खाने के बाद भी कोशिश जारी है। खोज जारी है किसे अपना बनाया जाये। अंतिम सांस तक नहीं थकते सबको अपना कहते-कहते। भगवान महावीर कहते हैं कि इसीलिये ये सब

चेतन परिग्रह हैं। जो अपना नहीं है, उसे अपना मान रहे। कभी-कभी परिवार ही ऐसी बात बोल देता है कि सच्चाई नजर आने लगती है। पर वह भ्रम थोड़ी देर टूटता है। दोबारा मोह फिर से अपना मान लेता है। इसीलिये परिग्रह दुर्गति का कारण है।

अचेतन परिग्रह—जो-जो वस्तुएँ आँखों से नजर आ रही हैं, वह सब पुद्गल है और जिन-जिन वस्तुओं से मोह है, वह सब परिग्रह है। दुकान, मकान, सोना, चांदी, मोटर गाड़ी, नोट, बैंक बैलेंस उधारी (जो दी है) सब परिग्रह है। आचार्य उमास्वामी जी महाराज तत्वार्थसूत्र कहते हैं—'मूर्च्छापरिग्रह' अर्थात् मूर्च्छा परिग्रह है।

मूर्च्छा परिग्रह—अर्थात् पदार्थों का सामने और साथ में रहना परिग्रह तो है, पर बिना मूर्च्छा के संभव नहीं है। उसके प्रति मोह भाव परिग्रह है। जैसे वस्तु अभी आई नहीं है, पर लेने का संकल्प ले लिया कि वह वस्तु आज नहीं तो पांच साल बाद, पर खदीदेंगे जरूर। ऐसे भाव आते ही उस वस्तु के परिग्रह का आस्रव प्रारंभ हो जाता है। कम बंध शुरू हो जाता है। पैसा कष्ट या सुख का कारण नहीं उसके प्रति मोह भाव खुशी और दुःख का कारण है। यदि वस्तु सुख का ही कारण है, तो एक वस्तु से समस्त जीवों को सुख ही मिलना चाहिये, पर ऐसा नहीं है। जैसे रसगुल्ला स्वस्थ व्यक्ति को सुख का कारण और शुगर की बीमारी वाले को दुःख का कारण है। रसगुल्ला अपने आप में कुछ नहीं। सुख दुःख उसकी उपयोगिता पर निर्भर करता है। एक वस्तु प्रारंभ में अच्छी लगती है और वही समय के बाद दुःख का कारण बन जाती है। अतः वस्तु-वस्तु है न अच्छी है, न खराब है।

भावों से ही बंध है और भावों से ही मुक्ति है। कोई भी वस्तु 24 घंटे हमारे शरीर से चिपक कर नहीं पड़ी है, पर उन वस्तुओं का मोह भाव अंदर पड़ा है। मकान-दुकान फैक्ट्री अपनी जगह है, पर कहीं चले जाओ। मोह भाव साथ घूमता रहता है। उदाहरण—एक व्यापारी ऊंटों को लेकर जा रहा था। रास्ते में पड़ाव डाला। ऊंटों को खूंटे गाड़कर रस्सी से बांध दिया। पर एक रस्सी कम पड़ गई। नौकर ने मालिक से कहाँ मालिक ने कहा इसे मैं बांध देता हूँ। उसने झूठ-मूठ में ऊंट के गले में हाथ घुमाया—जैसे रस्सी बांध रहा हो। और खूंटा ठोंककर झूठमूठ का बांध दिया। सुबह सभी ऊंटों की रस्सी खोली। पर उसकी नहीं खोली, क्योंकि उसके ये रस्सी थी ही नहीं। सबने ऊंट को उठाने की कोशिश की पर वह नहीं उठा। बाद में सेठ को याद आया कि इसे भी झूठमूठ की रस्सी से बांधा था। झूठ-मूठ में उसे खोला, वह चल पड़ा। ठीक ऐसे ही सारा संसार बाहर की रस्सियों से नहीं बंधा, भावों की रस्सियों से बंधा है। इसीलिये भावों से ही खोलना पड़ेगा।

सोना, चांदी, हीरा, पन्ना, कोठी, बंगला, गाड़ी के चित्र हमारे दिमाग की नसों में होते हैं, पूरे शरीर में भी नहीं होते। जैसे मोबाइल का मैमोरी कार्ड होता है। उन चित्रों को ही अपना मानते हैं। इससे ज्यादा कुछ नहीं है और यही सच्चाई है।

उदाहरण—एक आदमी के पास कमरा भर के रत्न थे। वह सुबह-सुबह दरवाजा खोलकर रत्न देख लेता और खुश रहता। पड़ोसी को पता चला। उसने उस व्यक्ति से कहा कि रत्नों के दर्शन करा दे पैसा दूँगा। उस व्यक्ति ने पैसे लेकर रत्न दिखा दिये। उसने उन रत्नों की फोटो को दिमाग में बसा लिया। कुछ दिनों के बाद उसने रत्नों के मालिक से कहा कि मैं भी तुम्हारी तरह रत्नों का मालिक हूँ। उसने कहा ऐसा कैसे हो सकता है। उसने कहा तुम रोज आँख खोलकर रत्नों को देखते हो। मैं आँख बंद करके रत्नों को देखता हूँ। देखते दोनों हैं। रत्न दोनों के साथ नहीं जायेंगे। मात्र देखना ही है, तो किन्हीं रत्नों को देखकर खुश हो जाओ। अपने को देखूंगा, इस चक्कर में कितनी मेहनत और कर्मों का बंध करना पड़ता है।

संसार मालकियत के चक्कर में सारी जिन्दगी परेशान रहता है और एक दिन मृत्यु सारी मालकियत छुड़ाकर तुम्हारा ट्रांसफर कहीं और कर देती है। लेकिन इंसान भी कम नहीं दूसरी जगह मालकियत कर देता। बंदर बनेगा छतों पर मालकियत, कुत्ता बनेगा तो गलियों की मालकियत, छिपकली बनेगा तो दीवालों पर मालकियत, पक्षी बनेगा तो वृक्ष और वृक्षों पर शाखाओं पर मालकियत। जहाँ जायेगा झूठी मालकियत में जिन्दगी बिता रहा है। अपनी आत्मा की ओर देखा, कुछ हमारा नहीं है। बस हमारे शुभ भाव, हमारे काम आयेंगे। हमारा धर्म, हमारे काम आयेगा। बाहर के परिग्रह को दवाई के समान प्रयोग करो जैसे दवाई खाते हैं, पर दवाई से मोह नहीं करते। ऐसे ही परिग्रह का उपयोग करो, पर मोह मत करो।

पापों के विरह का,
जन्म में सालगिरह का,
छोड़ने में परिग्रह का,
बड़ा ही महत्व है।

भोजन में खटाई का
बैठने में मिठाई का
बीमारी में दवाई का
बड़ा ही महत्व है

इंसान की अच्छी नियत का
मकान की छत का
नहीं करने में मालकियत का
बड़ा ही महत्व है

रात्रि में शमा का,
पैसों में जमा का,
देखने में शुद्धात्मा का
बड़ा ही महत्व है

जंगल में ठूंठ का
वृक्षों में रूट का
कहानी में ऊंट का
बड़ा ही महत्व है

कमरे में कोने का
बीज में बोने का
शरीर में आत्मा दिखने का
बड़ा ही महत्व है।

भारत में श्रमण का
भोजन में खमण का
नहीं लगने में ग्रहण का
बड़ा ही महत्व है

गणित में योग का
दुख के वियोग का
परिग्रह के सही उपयोग का
बड़ा ही महत्व है

नौकरी में वेतन का
रहने में निकेतन का
हमारे अपने चेतन का
बड़ा ही महत्व है

गाने में लय का
कार्य में विलय का
धर्म में निश्चयनय का
बड़ा ही महत्व है

नहीं होने में ऊहोपोह का
वस्तुओं की टोह का
छोड़ने में मोह का
बड़ा ही महत्व है

समुद्‌घात
आत्मा किस तरह बाहर जाती है

पढ़कर आश्चर्य होगा कि शरीर को छोड़े बिना आत्मा के प्रदेश शरीर से बाहर जाते हैं। जैसे टॉर्च की रोशनी के अंदर रहते हुये अपनी क्षमता के अनुसार बाहर जाती है। भगवान महावीर ने सात कारण बताये हैं, जिन कारणों से आत्मा के प्रदेश शरीर से बाहर जाते हैं। शरीर से आत्मा के प्रदेशों के बाहर निकलने का प्रभु ने समुद्‌घात नाम दिया है।

वे कारण इस प्रकार हैं–

1. वेदना समुद्‌घात
2. कषाय समुद्‌घात
3. विक्रिया समुद्‌घात
4. तैजस समुद्‌घात
5. आहारक समुद्‌घात
6. मारणांतिक समुद्‌घात
7. केवली समुद्‌घात

समुद्‌घात के भेद और परिभाषा को पढ़ते मुझे पच्चीस साल हो गये पर कभी गहराई में चिंतन-मनन नहीं किया किन्तु जब धवला ग्रंथ स्वाध्याय किया उसमें विशेष वर्णन पढ़ा तो एक दिमाग में झटका लगा कि ऐसा भी होता है। या हम दिन-रात ये सब कुछ कर रहे हैं। हमारी आत्मा बाहर जाकर क्या-क्या करती है हम समझ हीं नहीं पाते हैं। बड़े-बड़े ग्रंथों का स्वाध्याय भी आवश्यक है। वरना मनुष्य पर्याय पाना और बुद्धि, इंद्रियों का मिलना व्यर्थ हो जायेगा। भगवान महावीर की वाणी को ध्यान से पढ़ा जाये तो भगवान बनाने की ताकत है।

समुद्‌घात के सात भेदों का विश्लेषण समझना भी आवश्यक है।

वेदना समुद्‌घात–जब शरीर में अत्यधिक वेदना होती है, उस समय आत्मा के

प्रदेश शरी से बाहर निकलते हैं। पीड़ा जब सहन नहीं होती तो आत्मा शरीर छोड़ने का प्रयास करती है और बाहर भागती है। इसे भगवान महावीर ने वेदना समुद्‌घात कहा है। असहनीय पीड़ा की स्थिति में ज्ञान-ध्यान भी याद नहीं आता। बड़ा छोटा भी याद नहीं आता, असहनीय पीड़ा अपने रूप कर लेती है। उस पीड़ा को भोगने वाला आत्मा होता है।

कषाय समुद्‌घात–कषाय का नाम लेते ही कुछ-कुछ होता है। कषाय ने संसारी प्राणियों को अपने बहुपाश में कस रखा है। पकड़ इतनी मजबूत है कि आदमी सौ बार नियम लेता है छोड़ने का, फिर भी वही गलती दोहराता है। कषायों ने घेरा है, पापों का डेरा है, कर्मों का फेरा है, चलने की बेरा है, फिर भी करता तेरा मेरा है। कैसे बचे इस तेरे मेरे से।

कषाय के पच्चीस भेद हैं–

अनंतानुबंधी, क्रोध, मान, माया, लोभ

अप्रत्याख्यानावरण–क्रोध, मान, माया, लोभ

प्रत्याख्यानावरण–क्रोध, मान, माया, लोभ

संज्लवन–क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद।

कषायों में चर्चा क्रोध से प्रारंभ करें, सोचकर बड़ा आश्चर्य होगा कि क्रोध का संबंध किसी जाति, कुल, देश और विदेश से नहीं है। क्रोध का संबंध काले गोरे या किसी रंग से नहीं है। क्रोध का संबंध अमीर और गरीब से भी नहीं है। क्रोध का संबंध बच्चे, जवान, बूढ़े से भी नहीं बल्कि इन सब कारणों से हम इनमें भेद नहीं कर सकते, क्रोध सबको समान रूप से आता है। बच्चे क्रोध को नहीं समझते तो भी करते हैं, बड़े समझते हैं फिर भी करते हैं। क्रोध हर भाषा के लोग करते हैं। संसार में कहीं चले जाओ, क्रोध करने वाले सब जगह मिल जायेंगे।

क्रोध चारों गतियों के जीवों को आता है, अर्थात् नरक गति के नारकी क्रोध से सदा भरे पड़े रहते हैं और दिन-रात लड़ते रहते हैं। तिर्यंच गति में कुत्ता, बिल्ली, बंदर, गाय, घोड़ा आदि जानवर के पास भाषा नहीं है, वे भी क्रोध करते हैं। देवता भी क्रोध करते हैं। मनुष्य के पास क्रोध करने के निमित्त अधिक है, भोजन, कपड़ा, मकान, दुकान, पैसा, परिवार, सोना, चांदी, गाड़ी आदि किन्तु नारकी और तिर्यंचो के पास ये भी नहीं है फिर भी क्रोध करके लड़ते रहते हैं। क्रोध छोड़ने का पुरुषार्थ केवल मनुष्य गति में है। इंसान मन और वचन पर संयम रख कर क्रोध की मात्रा को कम कर सकता है। मोह को कम करके क्रोध को वश में कर सकता है। सबसे

अपेक्षा कम करने पर क्रोध कम हो जायेगा। मनुष्य में ज्ञान बढ़ाने की क्षमता है। इंसान में कषाय कम करने की ताकत है, यदि वह अपनी शक्ति जाग्रत करे तो।

ऐसा ही मान कषाय माया कषाय और लोभ कषाय के विषय में समझना चाहिये। इन कषायों को छोटा नहीं समझना चाहिये। ये चारों का अपना परिवार है। ये सब भाई बहन एक के कारण से शीघ्र दौड़े चले आते हैं। मान, माया और लोभ के बिना तो क्रोध अकेला रह ही नहीं सकता है। क्रोध कम करना है, तो मान, माया और लोभ को घटाना पड़ेगा। क्रोध अपने आप ढीला पड़ जायेगा।

जिस समय, ये कषाय हमारे अंदर आती है, उस समय आत्मा के प्रदेश तेजी से बाहर की तरफ भागते हैं। अर्थात् क्रोध जिस पर किया जा रहा है आत्मा के परमाणु उस पर अटैक करते हैं। व्यवहार की भाषा में भी कहते हैं कि उसकी हाय लग गई या उसकी बददुआ लग गयी है। कुछ नहीं आत्मा के प्रदेशों ने सारा काम किया है। ये आँखों से नजर नहीं आते और काम हो जाता है। 'नजर लगना' भी इसी का उदाहरण है।

धवला शास्त्र में यहाँ तक लिखा है कि कषाय की तीव्रता इतनी भी बढ़ सकती है कि, जिस पर क्रोध किया जाता है वो मर भी जाये। एक ऋद्धि भी होती है कि मुनिराज यदि क्रोध से देख ले, तो वह मर जाता है। ये सब कषाय समुद्घात का उदाहरण है। पति-पत्नी भी यदि एक दूसरे पर अधिक क्रोध करते हैं, इसका प्रभाव पति के धंधे पर पड़ता है, और पत्नी के स्वास्थ्य पर पड़ता है। इसीलिये घर की छोटी-छोटी बातों को बिना क्रोध किये निपटाना समझदारी है। वरना रिश्ता सुख के लिये किया जाता है और दुःखों की बारिश हो जाती है।

मान, माया और लोभ के समय भी आत्मा के प्रदेश बाहर जाते हैं और जो मन में भाव होते हैं वो काम करते हैं और मान, माया, लोभ का काम पूरा न हो तो उसकी रक्षा के लिये, क्रोध दौड़ा-दौड़ा चला आता है। हास्य (हंसने) के समय भी, रति (प्रेम) के समय भी, अरति (द्वेष) के समय भी, शोक के समय भी, भय के, जुगुप्सा (ग्लानि) के समय भी, आत्मा के प्रदेश शरीर से बाहर निकलते हैं तथा स्त्री वेद कर्म के उदय में, पुरुष वेद कर्म के उदय में और नपुंसक वेद कर्म के उदय में आत्मा के प्रदेश शरीर से बाहर निकल के, कर्मों का तीव्र आस्रव करते हैं।

विक्रिया समुद्घात—शरीर का छोटा बड़ा बनाना या शरीर से अलग शरीर बनाना विक्रिया कहलाता है। विक्रिया करते हुये आत्मा के प्रदेश निकल कर दूसरे शरीर में जाते हैं तभी पृथक विक्रिया संभव है। चक्रवर्ती अपने 96 हजार रूप बनाता है।

आत्मा की शक्ति अनंत है। एक रूप के अनेक रूप बनाकर उसी तरह काम करता है, जैसा एक शरीर करता है। अर्थात् हर शरीर वर्तमान की परिस्थिति के अनुसार सारे काम अलग-अलग रूप से कर सकते हैं। आत्मा एक है, पर काम सभी अलग-अलग हो रहे हैं। आत्मा की शक्ति अचिन्त्य है। आत्मा के द्वारा शरीर का संचालन बड़ी अच्छी तरह से होता है। विक्रिया समुद्घात में हाथ का अधिक लंबा करना, शरीर की ऊँचाई बड़ी करना। इन सबमें विक्रिया समुद्घात होता है। नरक के नारकी, स्वर्ग के देवता एवं मनुष्य में विक्रिया ऋद्धि वाले जीव विक्रिया समुद्घात करते हैं।

तैजस समुद्घात—छट्वें गुणस्थानवर्ती मुनिराज के मन में जब किसी जीव के या गाँव में महामारी फैली हो, तो करुणा आ जाये, तो मुनिराज के दायें हाथ से एक पुतला निकलता है और सारे गाँव की बीमारी ठीक करके वापस मुनिराज में समाहित हो जाता है। ऐसे जब मुनिराज को किसी पर क्रोध आता है, तो बायें हाथ से अशुभ तैजस पुतला निकलता है और सारे गाँव को भस्म कर देता है और वापस आकर मुनिराज को भी भस्म कर सकता है। इसे तैजस समुद्घात कहते हैं। जो पुतला शरीर से बाहर जा रहा है, उसमें आत्मा के प्रदेश हैं। इसीलिये इसे तैजस समुद्घात कहते हैं।

आहारक समुद्घात—छट्वें गुणस्थानवर्ती के मन में जब आगम से संबंधित कोई प्रश्न आता है और उसका समाधान ना कर पाये तो, उनके सिर से एक हाथ प्रमाण, सफेद रंग का पुतला निकलता है और ढाई द्वीप में जहाँ भी समवशरण होता है, वहाँ जाकर शंका का समाधान करता है और वापस आकर मुनिराज के सिर के द्वारा शरीर में समाहित हो जाता है, इसे आहारक समुद्घात कहते हैं।

मारणांतिक समुद्घात—जीव अंतिम समय यानी मरण के समय में आत्मा के प्रदेश शरीर से निकलते हैं और उस स्थान को छूकर वापस आकर शरीर में प्रवेश करते हैं। फिर बाद में आत्मा पूर्ण रूप से शरीर को छोड़ती है और जहाँ जन्म लेना है वहाँ पूर्ण रूप से पहुँच जाती है। उदाहरण—कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि कोई व्यक्ति, एकदम अचेत हो गया, लगता है मरण हो गया। थोड़ी देर बाद फिर सचेत हो जाता है और कभी-कभी तो वो आकर भी बताते हैं कि वो क्या देख कर आये। इसे ही मरणांतिक समुद्घात कहते हैं।

केवली समुद्घात—जिन्होंने चार घातिया कर्मों का नाश किया है, उन्हें केवली भगवान कहते हैं। तीर्थंकर केवली भगवान का समवशरण लगता है और सामान्य केवली भगवान की गंधकुटी लगती है। केवलज्ञान होने के बाद, जब तक मोक्ष नहीं

जाते, तब तक विहार भी होता है, रुकने पर समवशरण में विराजमान रहते हैं। जब आयु कर्म पूर्ण होने वाला होता है और अन्य कर्मों का समय अधिक होता है, तब समुद्घात के माध्यम से अन्य कर्मों के समय को आयु कर्म के बराबर करते हैं और मोक्ष हो जाता है।

केवली समुद्घात का क्रम दंड कपाट, प्रतर और लोकपूरण प्रतर, कपाट, दंड, स्वस्थान होता है। दंड समुद्घात में आत्मा के प्रदेश दंड के आकार में लंबाई किये होते हैं फिर कपाट में दरवाजे के सामान आकार में फैलते हैं, फिर प्रतर में त्रिकोण आकार में होते हैं और लोकपूरण में सारे लोक में फैल जाते हैं। इससे अन्य कर्मों की स्थिति आयु कर्म के बराबर हो जाती है। पुनः आत्मप्रदेश जिस क्रम से फैले थे, उसी क्रम से पुनः संकोच को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार केवली समुद्घात की आठ अवस्थाओं को प्राप्त कर प्रभु को मोक्ष हो जाता है। इसे केवली समुद्घात कहते हैं।

इस तरह सात समुद्घात के माध्यम से हमारी आत्मा के प्रदेश शरीर से बाहर जाते-आते रहते हैं।

इस प्रकार भगवान महावीर की वाणी (का स्वाध्याय करने) से कई रहस्य उद्घाटित होते हैं।

हंसना अच्छा है लेकिन...

मानव को वरदान के रूप में एक हंसने का विशेष उपहार मिला है। संसार के दुःखों से निकलने के रास्ते तो और भी है, पर इंसान को सबसे सरल रास्ता, हंसना ही लगता है। इसीलिये कभी कोई योगा के माध्यम से, कोई 'लाफ्टर चैनल' के माध्यम से, कभी कवि सम्मेलन में हास्य कविताओं के माध्यम से, कभी किताब में लिखे चुटकुलों के माध्यम से, इंसान थोड़ी देर हंस कर, उन सब बातों को भूल जाता है, जिनसे उनके मन में पीड़ा हो रही हो। हंसने पर दिमाग की नसों में आराम मिलता है, चेहरे का व्यायाम हो जाता है। प्रसन्न रहने पर बीमारियाँ जैसे वी.पी. आदि भी सामान्य रहता है। जीवेषणा भी जाग्रत होती है।

जीवन में जब खोजपूर्ण दृष्टि जाग्रत होती है, तब बिना बात किये चेहरे की भाषा समझ में आने लगती है। अक्सर मैंने देखा है कि जो मजदूर होते है, वे बिना योगा के बिना लाफ्टर चैनल के खुलकर हंसते हैं। पूरा मनोरंजन से काम करते-करते कर लेते हैं। मैंने देखा कि रहने को मकान नहीं। झोपड़ी में कूलर, पंखा, सोफा सेट, और बढ़िया किचिन भी नहीं। भोजन बनाने और खाने के लिये कोई ज्यादा बर्तन नहीं। तरह-तरह के व्यंजन नहीं। फिर भी चेहरे पर चिंताओं की कोई रेखा नहीं। आँखों में प्रसन्नता की पूरी चमक। बच्चों को पहनने के लिये पूरे कपड़े भी नहीं। सोने के लिये दीवान और डनलप के गद्दे नहीं, फिर भी बेखबर होकर पूरी नींद लेते हैं।

उनके जीवन में इच्छायें और आकांक्षायें सूक्ष्म हैं। कल की परवाह भी ज्यादा नहीं करते। इसीलिये चिंता भी नहीं। अधिक इकट्ठा करने पर तृष्णा बढ़ जाती है और अधिक की आकांक्षा में तन, मन को पूरी मेहनत करनी पड़ती है। तृष्णा की खाई में इतना डूब जाते हैं कि हंसना भी भूल जाते हैं। हंसने के लिये व्यवस्था करनी पड़ती है। सोने के लिये नींद की गोली खानी पड़ती है। बीमारी पर बीमारी बढ़ती जाती है और जीवन में एक परेशानी महसूस होने लगती है।

एक बच्चा जिसके अंदर अभी परिग्रह की लालसा नहीं, भविष्य की चिंता नहीं, घरवालों की परेशानी का समाधान खोजने की चिंता नहीं है, वह बच्चा कैसे हंसता है कैसा खिलखिलाता है? दस बड़ों के बीच में यदि एक बच्चा बैठा हो, तो सबके चेहरे मुस्कुराने लगते हैं। सबका मन प्रसन्नता से भर जाता है। घर में कुछ भी हो बच्चा कोई टेंशन नहीं लेता। मस्त खाता है और मस्त सोता है। बच्चे को देखकर हमें भी शिक्षा लेनी चाहिये, उस बच्चे का अध्ययन करना चाहिये, और स्वयं वैसा सरल बनने का प्रयास करना चाहिये।

एक जगह एक अस्सी वर्ष के दादाजी की मृत्यु हो गई। सभी उनके अंतिम संस्कार के लिये आ गये। उनका पड़पोता जो छोटा सा था वहाँ घूम रहा था और इस तरह की क्रियायें कर रहा था कि सभी लोग न रो पा रहे थे, न हंस पा रहे थे। मैं ये नहीं कह रही कि आप ऐसे समय में भी हंसे। बल्कि मैं ये कहूँगी कि ऐसे समय आप तत्त्व चिंतन करें। आप उस व्यक्ति से संबंधित उसके गुणों का चिंतन करें, और अपनी गलतियाँ सुधारने का भाव बनायें।

बच्चे जैसे सरल होना चाहिये और बड़ों जैसे समझदार होना चाहिए। जिससे कि मन स्वस्थ, स्वच्छ और सुंदर होता है। थोड़ा सा समय बच्चों के साथ भी गुजारना चाहिये। क्योंकि हम जहाँ भी रहते हैं और जिसके साथ रहते हैं उनके परमाणु भी अवश्य जीवन में आते हैं। बच्चों सी सरलता जो हमारी सुप्त हो गई है, वह हमारे अंदर आनी शुरू हो जाती है। यदि ग्रहण करने के भाव हों, तो वरना बच्चे के कारण से लड़ाई झगड़े करके उल्टा और हो जाता है।

यदि मन प्रसन्न हो, तो बगीचे के फूल भी मुस्कराते हुये नजर आते हैं। आकाश के चांद में भी मुस्कराहट दिखती है। गाड़ी भी लहराती हुई नजर आती है। रिश्तेदारों की फोटो को ही देखने पर चेहरा मुस्कुराने लगता है। मन प्रसन्न होता है। मंदिर में भगवान के दर्शन करने पर भगवान भी मुस्कुराते हुये दर्शन देते हैं। अपना मन प्रसन्न रखो, सारी प्रकृति मुस्कुरायेगी। सारा संसार मुस्कुरायेगा। सारा परिवार मुस्कुरायेगा। सारे रिश्तेदार मुस्कुरायेंगे।

जैसे बगीचे में फूल खिलते हैं, वे किसी से कुछ नहीं कहते मात्र दिखते हैं, लोग खिंचकर उनके पास पहुँच जाते हैं। क्योंकि वे मुस्कुरा रहे हैं। वे खुशबू दे रहे हैं। हमें उन्हें कोई मूल्य नहीं चुकाना और वे हमें सुकून दे रहे हैं। चर्चा-परिचर्चा नहीं, कोई बातचीत नहीं। केवल मुस्कुराहट ही खींच लेती है। फिर तो ये इंसान के चेहरे की मुस्कुराहट जो मीठी वाणी और सम्मान के सुंदर उपहार के साथ है। वे इंसान को कैसे नहीं खींचेंगे। जैसे—दीपक से दीपक जलते चले जाते हैं। ऐसे

ही मुस्कुराहट से मुस्कुराहट के फूल खिलते चले जाते हैं।

जीवन में हंसना और मुस्कुराना समय-समय पर आवश्यक है। जीवन के हर मोड़ पर ना हंस सकते हैं, ना मुस्कुरा सकते हैं। हंसना और मुस्कुराना दोनों में अंतर है। जब हास्य कर्म का उदय होता है, तब हंसने की क्रिया किसी निमित्त से होती है और मुस्कुराना, प्रसन्न रहना यह आत्मा का एक गुण है। जैसे 24 तीर्थंकर की सभी प्रतिमायें मुस्कुरा रही हैं। जब हम प्रभु के दर्शन करें, तो वही मुस्कुराहट हमारे चेहरे पर भी होना चाहिए। प्रभु इसलिये मुस्कुरा रहे हैं कि उन्हें आत्मा का आनंद आ रहा है और हम इसीलिये मुस्कुराये कि प्रभु के दर्शन से हमें आनंद आ रहा है। उनके गुणों का बखान करें, चिंतन करें, विनती पढ़ें और प्रसन्न होयें।

जब लोग कहीं यात्रा पर जाते हैं, यहाँ घूमने जाते हैं, फिर वे वहाँ हंसते हुये, खिलखिलाते हुये यात्रा का आनंद लेते हैं। कहाँ हंसना है, कहाँ मुस्कुराना है, इस बात का भी ज्ञान आवश्यक है। यदि किसी पागल को देखकर मुस्कुराये तो वह पीछे पड़ जायेगा और किसी गुणवान को देखकर मुस्कुराये, तो गुणवान की संगति से गुण प्राप्त होंगे।

हंसने के लिये हंसिये, किन्तु किसी की गरीबी पर, किसी की कुरुपता पर, किसी की असफलता पर, किसी के हारने पर, किसी के गिरने पर, किसी की बीमारी पर, और किसी की हंसी उड़ाने के लिये कभी मत हंसना।

वस्तुओं के प्रदान का
धर्म पर श्रद्धान का
मिलने में वाणी के वरदान का
बड़ा ही महत्व है

रस्सी को कसने का
शहरों में बसने का
हंसी उड़ाने में नहीं हँसने का
बड़ा ही महत्व है

दरवाजे की आहट
परीक्षा में घबराहट का
चेहरे पर मुस्कुराहट का
बड़ा ही महत्व है

सिर में खोपड़ी का
सरनेम में नोपड़ी का
रहने के लिए झोपड़ी का
बड़ा ही महत्व है

मौन प्रकृति को समझने के लिये मौन लेना आवश्यक है

समझदार, बुद्धिमान, ज्ञानवान, विवेकशील, अनुभवी, प्रतिभा संपन्न मानव को पुण्य के उदय में संसार को और स्वयं को समझने के लिये ज्ञान और उसके उपयोग का साधन मिला है, वाणी है। बुद्धि से वाणी में विशेषता आती है और ज्ञान के माध्यम से कई अनसुलझे रहस्य की कड़ियाँ खुलती चली जाती हैं। सबसे ज्यादा जानकारी मानव के मस्तिष्क में होती है और उसे व्यक्त करके आगे बढ़ाने की शक्ति भी मानव के पास होती है।

जन्म के बाद बालक के मुख से शब्द बनके निकलने वाली वाणी में दो वर्ष का समय लग जाता है। भाषा और बोली तो देश, समाज और परिवार से मिल जाती है पर इसमें लगने वाला ब्रेक अर्थात् मौन कोई और नहीं हमें ही लगाना पड़ता है। संसार चलने वाली गाड़ी में तो ब्रेक को आवश्यक नहीं समझता है। जबकि संयम से अंदर की शक्तियाँ जाग्रत होती हैं।

मौन एक महान शक्ति है, जो स्वयं से जोड़ती है, जो वाणी के माध्यम से आत्मा की शक्ति बाहर जा रही थी मौन के माध्यम से वो शक्ति अंदर की ओर बहने लगती है और आत्मा से जुड़कर नई शक्ति पैदा करती है।

अक्सर ऐसा होता है कि हर व्यक्ति बोल कर अपनी बात को हमें समझा देता है इसीलिये मौन वस्तुओं से हमारा संबंध नहीं हो पाता है। संसार में मौन रहकर कौन-कौन हमारे ऊपर कितने उपकार करता है, हमें पता ही नहीं चल पाता है। सारा संसार हमें सुखी करने में कितनी मेहनत करता है, हम जान ही नहीं पाते हैं। कारण केवल एक ही है कि मौन प्रकृति को समझने के लिये हमें भी मौन होना पड़ेगा।

सूरज के बिना हमारा जीवन असंभव है। बारिश के मौसम में जब कुछ दिनों तक सूरज नहीं दिखता, तब कितनी बीमारियाँ फैल जाती है, चारों तरफ कितनी वस्तुएं सड़ने लगती हैं, बदबू अपना असर अलग दिखाने लगती है। जब कुछ दिनों

सूरज नहीं निकला तो इतनी परेशानी हो गई। सोचो संसार के लिये सूरज की कितनी अहमियत है। इस बात पर मौन होकर चिंतन मनन करना आवश्यक है। सुबह से शाम तक बिना विश्राम किये सूरज हमें रोशनी देता है अग्नि देता है लेकिन आज तक हमने सूरज को एक बार भी धन्यवाद नहीं दिया होगा। ड्रायर में कपड़े सुखाने के पैसे लगते हैं पर धूप में आपने आज तक कितने सुखाये, कितना सामान सुखाया, क्या सूरज ने आज तक बदले में कुछ माँगा? नहीं। क्या सूरज ने आज तक किसी के घर में बिजली का बिल भेजा। आज जो मौन होकर आपकी सेवा करे, आप उसका अहसान नहीं करते हैं।

समुद्र से पानी भर भर के बादल आपके घर तक पहुँचाने का काम करते हैं, आपने कभी सोचा ही नहीं होगा। बिना कुछ लिये, कितना जल दिया, इसकी कीमत आप नहीं करते। कीमत आप तब करते हैं, जब गर्मी में पानी की कमी हो जाती है। तब लगता है पानी व्यर्थ नहीं बहाना है। तब लगता है जल हमारे बिना रह सकता है, पर हम जल के बिना नहीं रह सकते जल ही जीवन है। उस समय तो कोई घी के दाम में भी पानी को बेचे तो लोग खरीदने को तैयार हो जायेंगे। या कोई कहे कि आप एक किलो घी दो, हम एक किलो पानी देंगे, तो भी तैयार हो जायेंगे। क्योंकि घी के बिना जिन्दगी जी सकते हैं, पर पानी के बिना नहीं, इसीलिये पानी की एक-एक बूंद की कद्र करनी चाहिए।

वृक्ष तो हमारी आँखों को देखने में सुंदर लगते हैं, पेट के लिये अनाज और फल देते हैं, घर के बनाने को लकड़ियाँ देते हैं। धूप से बचने के लिये छाया देते हैं और हमारे अंतिम समय तक साथ जलते हैं। कितना साथ निभाया वृक्षों ने, किन्तु हमने उन्हें भी कभी धन्यवाद नहीं दिया। उनके प्रति अपनी कृतज्ञता कभी ज्ञापित नहीं की। पेड़ों का उपयोग तो किया पर कभी पेड़ लगाने में सहयोग नहीं किया। धरती को उजाड़ने में तो कारण बने, पर धरती को हरा भरा नहीं कर पाये। जब मौन लेकर हम चिंतन मनन करेंगे, तब हमें ये सब विचार आने प्रारंभ होंगे कि सारा संसार हमारी कितनी सहायता कर रहा है, तब जाकर हम अच्छा जीवन, सुखमय जीवन व्यतीत कर पाते हैं।

किन्तु अभिमानी मानव किसी के उपकार को न मान कर, अपनी शक्ति और मेहनत का फल बताता है। शक्ति और मेहनत करते हुये भी जब शरीर जबाव देता है, तब कारण ढूंढते हैं क्या हुआ, कैसे हुआ। हर वस्तु की अहमियत उसके दूर हो जाने के बाद पता चलती है।

अभिमानी मानव मौन प्रकृति और बेजान वस्तुओं की कीमत नहीं जानता है।

प्रतिदिन शांत होकर मौन लेकर, एक-एक विषय पर चिंतन मनन करना चाहिये। आत्मा परमात्मा और सारा संसार हमारे चिंतन का विषय बन सकता है। बड़े धैर्य और धर्म के साथ जीव पुद्गल आदि छह द्रव्यों को और जीव अजीव आदि सात तत्त्वों को समझना चाहिये तथा कौन सा द्रव्य हमारे ऊपर क्या उपकार करता है? समझना चाहिये। तत्वार्थ सूत्र में आचार्य उमास्वामी महाराज कहते हैं—

परस्परोग्रहो जीवानाम्

अर्थात् परस्पर एक दूसरे पर उपकार करना जीव द्रव्य का उपकार है। धर्म द्रव्य हमें चलने में सहायक है। पुद्गल द्रव्य हमें तपस्या करने में सहायक है। अधर्म द्रव्य हमें ठहरने में सहायक है। काल द्रव्य हमें आयु कर्म के बंधन से मुक्ति देता है। और आकाश द्रव्य हमें रहने को स्थान देता है। मगर सभी बिना कुछ चार्ज लिये हमारे जीवन में सहायक बनते हैं। ऐसे ही जीव जब भी किसी का कोई कार्य करे, उसे उसमें बदले की आशा नहीं होना चाहिये। उसका नाम ही उपकार है और यदि बदले की आशा में किया तो उसका नाम व्यापार है। अर्थात् जहाँ केवल देना होता है, उसे उपकार कहते हैं। जहाँ लेने के उद्देश्य से देना हो, उसे व्यापार कहते हैं। थोड़ा निःस्वार्थ होकर जिओ मेरे भाई, जो थोड़ा छूने पर मधुर ध्वनि दे, उसे सितार कहते हैं।

दिये बिना सोना नहीं
देकर के रोना नहीं।

जिनमें अकेले चलने के हौसले होते हैं
एक दिन उनके साथ काफिले होते हैं।

कोई जागे न जागे, ये मुकद्दर उसका
मेरा काम है, आवाज लगाते रहना।

इंतजार करने वाले को, उतना ही मिलता है
जितना कोशिश करने वाले छोड़ देते हैं।

आप अपना भविष्य नहीं बदल सकते पर अपनी आदतें तो बदल सकते हैं
यकीन मानिये आपकी आदतें आपका भविष्य बदल देगी।

आप अपनी पहली सफलता के बाद आराम मत करो वरना लोग ये कहने से नहीं चूकेंगे कि पहली सफलता आपकी एक तुक्का थी।

प्रभु भक्ति की छतरी लगाये

पंचम काल, दुःखमा काल, कर्म भूमि में जन्म लिया है। बिना प्रयास किये स्वयं ही दुःख दौड़ा चला आता है। बिना दुःख के जीवन की कल्पना असंभव है। दुःख तो हमारे न चाहते हुये भी हमारा साथी बन कर साथ घूम रहा है। हम इससे पीछा छुड़ाना चाहते हैं और ये चिपकता चला जा रहा है।

बचपन में दुःख कम थे इसीलिये खुल कर हंस लेते हैं, जैसे-जैसे बड़े हुये, तो दुःख भी बड़े होते चले गये। अब तो हंसने की बात पर भी हंसना नहीं आता है। चिन्ता टेंशन की बीमारी लग गयी है। मन माला में भी नहीं लगता। हम दुःख को सामने वाले से लड़ कर भगाना चाहते हैं। लेकिन उल्टा होता है, वह दुगना होकर वापस आ जाता है। हम दवाई खाकर भगाना चाहते हैं, वह दुगनी बीमारी पैदा कर देता है। समस्या जहाँ की तहाँ खड़ी रहती है और दुःख कम नहीं होता।

हम चाहते हैं कि सारी दुनिया हमारे इशारे पर चले, सबसे ज्यादा दुःख यहाँ से आते हैं। हम आवश्यकता से अधिक भोजन करते हैं। दूसरे दुःख यहाँ से आते हैं। हमें जहाँ बोलना चाहिये वहाँ हम चुप रहते हैं, और जहाँ चुप रहना चाहिये वहाँ हम बोलते हैं, तीसरे दुःख यहाँ से आते हैं। जो चीज हमारे हाथ नहीं है, हम उसे अपनी इच्छानुसार बदलना चाहते हैं। पांचवा दुःख यहाँ से आता है। बात-बात में हम सामने वाले पर व्यंग्य करते हैं, उसकी निन्दा बुराई करते हैं, छटवां दुःख यहाँ से आता है। सबकी प्रशंसा करें, सबके प्रति सम्मान की भावना रखें, छोटों को स्नेह और प्रेम दें, आधे दुःख इसी बात से भाग जायेंगे और जो आधे बचेंगे उन्हें हम प्रभु भक्ति करके भगाने का प्रयास करेंगे।

गंदगी भरी है अंदर और हम ऊपर सफाई करें तो बदबू कैसे जायेगी। कर्म का फल है दुःख, दुःख भगाना है, तो कर्मों की व्यवस्था करो, दुःख की नहीं। भगवान की इतनी भक्ति करो कि चमत्कार को होना पड़े। जैसे बारिश हो रही है, छतरी

नहीं है, तो भीगोगे, किन्तु छतरी होगी तो शायद पाँव ही भीगेंगे सिर नहीं। ठीक इसी तरह यदि आपने भक्ति की छतरी लगाई तो आप 80% दुःखों से बच सकते हैं।

आप कहेंगे हम माला फेरते हैं, पूजा करते हैं। मगर स्वयं में झांककर देखें, तो पता चलेगा कि माला में भगवान याद नहीं आते, पूजा में भी मन भटकता रहता है। ऐसी भक्ति से कर्म नहीं भागेंगे। मन से वचन से (जोर से बोलकर) काया से करनी चाहिये। तब भक्ति की पूर्णता होगी। अंग्रेज आये थे, तो हंसते हंसते, जब उन्हें भगाया लाखों लोगों को अपनी जान देनी पड़ी। बड़ी मुश्किल से गये। ठीक ऐसे ही कर्म को हम हंसते-हंसते बुला लेते हैं और भगाने में रोना पड़ता है, मेहनत करनी पड़ती है।

भक्ति सम्पदा नामक किताब का संकलन केवल इसीलिये किया है, जो कष्ट हैं उससे संबंधित स्तोत्र, मंत्र जाप्य आदि किये जायें तो निश्चित ही आपको लाभ की प्राप्ति होगी। यदि भगवान की भक्ति निःस्वार्थ भाव से की जाये, तो भी कर्म भागते हैं। किसी भी तरह करो, कर्म तो भागेंगे ही। भक्ति मार्ग में आगे बढ़ें।

तापसी में भतृहरि का
सांपों में सृप सरी का
प्रभु भक्ति की छतरी का
बड़ा ही महत्व है

मंत्रों में ओम का
प्राणायाम में अनुलोम का
लेने में मौन का
बड़ा ही महत्व है

पानी में लोटने का
कर्मों को झकझोरने का
दुख के रास्ते बंद करने का
बड़ा ही महत्व है

काम करने में अटेंशन का
वस्तुओं में मेंशन का
नहीं लेने में टेंशन का
बड़ा ही महत्व है

किरणों का खेल है दुनिया में

अक्सर मनुष्य उसी चीज पर विश्वास करता है, जिसे वह आँखों से देख सकता है, किन्तु आँखों से देखने वाली दुनिया से बड़ी दुनिया आँखों से नहीं दिखने वाली किरणों की है। जितनी भीड़ संसार में दिखने वाली वस्तुओं की है उससे कहीं ज्यादा उन वस्तुओं से निकलने वाली किरणें हैं। भगवान महवीर के केवलज्ञान में सब कुछ प्रत्यक्ष झलकता है।

प्रथम दृष्टि से हम विचारों के विषय में जानते हैं। हम जो सोच रहे हैं, आपको लगता है कि सामने वाले को पता नहीं चला, किन्तु यदि आभास करने वाला व्यक्ति हो, तो निश्चित ही किरणें तुम्हारी बात सामने वाले को बता देती हैं। घरों में सास बहू से कुछ नहीं कहती और बहू सास से कुछ नहीं कहती, फिर भी पता चल जाता है कि उसके मन में क्या है।

उदाहरण के लिये—एक बुढ़िया सिर पर पोटली रखकर कड़ी धूप में जा रही थी। वहाँ से एक घुड़सवार निकला, बुढ़िया ने उससे कहा—बेटा ये पोटली घोड़े पर रख लो और आगे गाँव में उस दुकान पर दे देना। घुड़सवार ने गुस्से में जवाब दिया कि मैं तुम्हारा नौकर हूँ, जो तुम्हारा काम करूँ। और आगे बढ़ गया।

आगे जाकर घुड़सवार ने सोचा कि, बुढ़िया से पोटली ले लेता और आगे चला जाता, उसे न देता तो कौन पूछ रहा था। ऐसा विचार करके घुड़सवार लौट कर आया। इधर बुढ़िया के मन में आया कि अरे अच्छा हुआ कि वो पोटली नहीं ले गया, वरना ले जाता और मैं रह जाती।

घुड़सवार ने आकर बुढ़िया से बड़े प्रेम से बोला अम्मा, मुझसे गलती हो गई, जो मैं पोटली नहीं ले गया। लाओ अम्मा तुम्हारी मदद करूँ, पोटली आगे देता जाऊंगा। अम्मा ने कहा—चल बेटा जो तेरे कान में कह गया, वो मेरे कान में कह गया, अब ये पोटली मैं नहीं दूंगी। जा चला जा। घोड़े वाले के विचार अम्मा तक पहुँच गये। यह सब विचारों का खेल है। हमारे शरीर से विचार निकल कर उस तक पहुँचने

के कारण संभव हुआ। द्रव्य संग्रह विचार पुद्गल है।

सद्दो बंधो सुहमो, थूलो संठाणभेदतमछायाउज्जोदारवसहिया, पुग्गलदव्वस्स पज्जाया।

शब्द, बंध, सूक्ष्म, स्थूल, संस्थान, भेद, अंधकार, छाया, उद्योत, आतप, सब पुद्गल की पर्याय है स्थूल पुद्गल आँखों से दिखता है, पर सूक्ष्म पुद्गल आँखों का विषय नहीं है। वह दृष्टि के अगोचर।

संसार की हर वस्तु किरणें फेंक रही है, नकारात्मक या सकारात्मक। हम उन किरणों के जाल के बीच में फंसे हुये हैं। वह दिखता भी नहीं है और फंसे भी हैं। उसका प्रभाव हमारे मन, वचन, काया तीनों पर पड़ता है। घर के जिस कमरे में कबाड़ पड़ा हो, उस कमरे में घुसने पर ऐसा लगता है, जल्दी काम निपटाओ और हटो यहाँ से। मन परेशान सा हो जाता है। ऐसा क्यों हो रहा है? पुरानी वस्तुयें और कबाड़ नकारात्मक ऊर्जा फेंक रही हैं, इसीलिये ऐसा हो रहा है। जिस कमरे में अधिक सामान न हो साफ-सुथरा हो, तो उस कमरे में बैठने का मन करता है, ऐसा क्यों? इसीलिये कि वहाँ की सकारात्मक ऊर्जा आपको सुख दे रही है।

जब सम्मेद शिखर जाते हैं, मधुवन से चढ़ते हुये पहाड़ के ऊपर पहुँचते हैं। वहाँ पहुँच कर तन, मन में ऐसा आह्लाद उत्पन्न होता है कि सारा आनंद यहीं है। ऐसा क्यों? इसमें ये दो कारण हैं—पहला अध्यात्मिक कारण कि यहाँ से तीर्थंकर एवं करोड़ों मुनिराज मोक्ष गये हैं। जिनकी ऊर्जा आज भी, किसी भी सिद्ध क्षेत्र पर जाओ, वहाँ अध्यात्मिक ऊर्जा अवश्य ही मिलेगी। दूसरा कारण पहाड़ पर नीचे का प्रदूषण ऊपर तक नहीं पहुँच पाता है। वहाँ की हवा शुद्ध होती है जो बीमार होता है, तो डॉक्टर (हिल स्टेशन) पहाड़ों पर रहने के लिये कहता है क्यों? इसीलिये कि तुम्हारी बीमारी प्रदूषण की है, अब थोड़ा शुद्ध वायु स्थान में रहकर आओ।

आँखों से नहीं दिखने वाली किरणें हमें बीमार भी कर सकती है और ठीक कर सकती है, उन किरणों को महसूस करना आना चाहिये।

लोग जहाजपुर आकर जैसे ही मंदिर क्षेत्र में प्रवेश करते हैं, वैसे ही उनका रोम-रोम पुलकित होने लगता है। अच्छा महसूस करने लगता है और जब भगवान के दर्शन करता है, तब तो उसकी आँखों में खुशी के आंसू आने लगते हैं। भगवान का आभामंडल इतना सकारात्मक और ऊर्जावान है कि भक्त थोड़ी देर के लिये स्वयं को भूल जाता है और मंदिर से बाहर जाकर फिर मंदिर के अंदर स्वयमेव खिंचा चला आता है। आपको दिख रहा है कि भगवान कुछ नहीं कर रहे जबकि भगवान की किरणें काम कर रही हैं।

वर्तमान में एक नई चिकित्सा चली है, जिसका नाम है 'रैकी' इसमें रैकी देने वाला अपना मन एकाग्र करके, रोगी व्यक्ति के लिये दुआयें करता है और अपने हाथों से किरणें देकर उस व्यक्ति को देता है, जिससे उस व्यक्ति की तबीयत ठीक हो जाती है। ऐसी किरणें सबके पास हैं, पर हमें उनका उपयोग करना नहीं आता है। ये सब सीखने का विषय है।

एक लैंस होता है, जिसमें यदि सूर्य की धूप को सेट करके उसकी रोशनी जिस पर भी डाली जाये, तो वस्तु जल जाती है। हालांकि बिखरी धूप में जलाने की ताकत नहीं है किन्तु किरणों को इकट्ठा किया जाये, तो अग्नि बन गई। वैज्ञानिकों ने सौर ऊर्जा के यंत्र निर्मित किये हैं जिससे लाइट पैदा की। मशीन चलाई, भोजन बनाया। धूप में चावल को भात नहीं बनाया जा सकता, लेकिन उस मशीन में रखे, जिसमें सूर्य की किरणें इकट्ठी होकर काम करेगी, तो चावल का भात बन जायेगा। किरणों को एकत्रित करने पर।

इसी तरह किरणें हर वस्तु और हर व्यक्ति में से निकल रही हैं। स्थूल के साथ सूक्ष्म को भी समझने का प्रयास करें। जब किसी को हिचकी आती है तो लोग कहते हैं कि कौन याद कर रहा है, सब प्रेम करने वालों का नाम लेते हैं। अर्थात् उसने याद किया, उसके विचारों के परमाणु निकले और आपके पास हिचकी के रूप में आये। किसी के हाथ में खुजली होती है, तो लोग कहते हैं कि धन मिलेगा। अर्थात् जो धन तुम्हारे पास आने वाला है, उस धन की किरणें निकल कर आपके हाथ में खुजली के रूप में आ रही हैं।

णमोकार मंत्र की जाप तीन तरह से की जाती है—मानसिक, उपांशु, बैखरी। अर्थात् मन में ही प्रभु का नाम लेना। कुछ अंदर कुछ शब्द बाहर आते हैं, तीसरा बोलकर करना। इसमें सबसे ज्यादा फल मानसिक जाप का है और सबसे ज्यादा शक्ति देती है। बैखरी में तो बिखर जाती है। मन के परमाणु सूक्ष्म हैं, पर शक्तिशाली हैं।

जिस वर्ण माला को हम लिखने-पढ़ने और बोलने में प्रयोग करते हैं। वे अक्षर भी प्रतिक्षण किरणें फेंक रहे हैं।

गणित में करण का
शिखर जी में चरण का
दुनिया में किरण का
बड़ा ही महत्व है

जीव के स्वभाव का
छोड़ने में विभाव का
किरणों के प्रभाव का
बड़ा ही महत्व है

दीवाली का संदेश
मिलकर रहिये, बांटकर खाइये

त्यौहार जीवन और जाति का प्राण है। त्यौहार से जीवन की नीरसता दूर होती है। हमारी सभ्यता, संस्कृति, धर्म और महापुरुषों के प्रति आस्था बढ़ती है। त्यौहार के माध्यम से बच्चे भी धर्म के माहौल में बह जाते हैं। उत्सव हमारे मन में सरलता, करुणा, आत्मशांति, अतिथि सेवा एवं परोपकार की भावनायें उत्पन्न करता है। यही कारण है कि विश्व में सबसे अधिक त्यौहार भारत में मनाएँ जाते हैं।

भारत में त्यौहार कई तरह से मनाये जाते हैं। जैसे अध्यात्मिक त्यौहार व्रत, उपवास, पूजा-पाठ करके। सामाजिक त्यौहार नये कपड़े पहनकर, एक दूसरे को तिलक आदि लगाकार मिठाइयां खाकर। होली का त्यौहार रंग खेलकर मनाया जाता है। राष्ट्रीय त्यौहार ध्वज लहराकर मनाया जाता है। किन्तु दीपावली त्यौहार सामाजिक भी है, धार्मिक भी है, सारा देश मनाता है इसलिये राष्ट्रीय भी है। सभी दृष्टिकोण से।

दीपावली सबको मिलाती है। अर्थात् दीपावली आते ही, घर से दूर जॉब करने वाले अपने घर जाने की तैयारी करते हैं और घर आकर पूरा परिवार मिलकर दीपावली मनाता है। इंसान में खुशियाँ बांटने से बढ़ती है, मिलकर रहने से खुशियां चौगुनी हो जाती हैं। आधुनिक पीढ़ी भी यह सब देखती है, तो वह अपनी संस्कृति से परिचित होती है कि परिवार एक साथ कैसे मिलता है, कैसे एक दूसरे के प्रति प्रेम सहयोग और समर्पण की भावना रखते हैं।

अपने परिवार में नजर फैलाकर देखें कि किसी और को भी हमारे प्रेम और सहयोग की आवश्यकता है। वे हैं गरीब परिवार, अपनों के साथ, उनका भी ध्यान रखा जाये तो उनकी दी हुई दुआयें, जीवन के किस मोड़ पर काम आयेगी पता नहीं। जो 10-15 हजार रुपये महीने में नौकरी करता है, वह दीपावली कैसे मनायेगा। यह सोचना आवश्यक है। अतः अपने परिवार के साथ दीवाली के समय उन्हें उपहार देना न भूलें। दीपावली निमित्त है, पर खुशियां बांटने का अच्छा मौका है।

दीवाली की मिठाई

नारी को अन्नपूर्णा की उपमा से विभूषित किया जाता है। नारी अपने हाथों से प्रेम सहित भोजन बनाती है वह भोजन स्वादिष्ट, स्वास्थ्यवर्धक और किसी औषधि से कम नहीं होता। होटल के भोजन में स्वाद हो सकता है, नारी के हाथ के भोजन में स्वाद और स्वास्थ्य दोनों होता है। अतः उत्कृष्ट गृहिणी मिठाइयां भी अपने घर पर ही बनाती है। चीनी की मिठास के साथ प्रेम और प्रसन्नता का मीठा भी होता है। उस मिठाई में भावना भरी होती है। अतः दीवाली की मिठाई घर पर ही बनाना चाहिये। नारी जानती है, घर में किसका स्वास्थ्य कैसा है। अतः वह वही सामान उसमें डालती है, जिसमें किसी को नुकसान न हो और अपने हाथ की चीज का तो आनंद ही कुछ और है। किसी को खिलाने में भी आनंद महसूस होता है। अतः दीपावली को पूर्ण आनंद के साथ मनायें।

बाग में माली का
कान में बाली का
पर्वों में दीवाली का
बड़ा ही महत्व है

प्रभु नाम लेने का
नाव को खेने का
गरीबों को उपहार देने का
बड़ा ही महत्व है

बैठने में चटाई का
भोजन में खटाई का
दीवाली पर मिठाई का
बड़ा ही महत्व है।

राम की सिया का,
चिह्न में साथिया का,
दिवाली में दिया का,
बड़ा ही महत्व है।

दृष्टिकोण से दीपावली त्यौहार भारत का सबसे बड़ा त्यौहार है। त्यौहार मनाने के निमित्त अलग-अलग हैं, पर दीवावली पर्व पर, सबकी आस्था अगाध है।

फूल में कली का,
तपस्या में बाहुबली का,
त्यौहारों में दीपावली का,
बड़ा ही महत्व है।

इसे लक्ष्मी का त्यौहार भी मानते हैं और माता लक्ष्मी सबको बहुत प्यारी है और माता लक्ष्मी को सफाई बहुत पसंद है। इसलिये दीपावली आने के पहले पूरे भारत में सफाई अभियान चलता है। मैं तो सोचती हूँ यदि दीवाली न होती तो घर की सफाई का क्या होता। अतः घर को भी सजाया संवारा जाता है।

कार्तिक कृष्ण अमावस्या के दिन दीपावली संदेश देने आती है कि छोटे-छोटे

से दीपक अमावस्या को पूरनमासी बना सकते हैं। दीपों का यह संदेश सबके घर में उजाला और हृदय में उजाला करने आता है।

वर्तमान समय में भौतिकता ने त्यौहारों का रूप परिवर्तन कर दिया है। अब लोग दीपक की जगह लाइट की लड़ियां लगाते हैं। जबकि एक दिन ही तो है, जब हम दीप ज्योति को प्रज्ज्वलित कर अपने इतिहास को याद करते हैं। मिट्टी के दीपक संदेश देते हैं दिया तेल बत्ती तीनों का प्रेम जब एक होता है, तो सुख की ज्योति जलती है। ऐसा चिन्तन किसी लाइट की लड़ियों को देखकर नहीं आ सकता है। एक-एक दीपक में तेल भरकर जब ज्योति जलाते हैं, तो अंदर में अलग तरह की खुशी होती है। फिर थाली में रखकर दीपक को घर के कोने-कोने में रखते जाते हैं, तो अंदर हृदय में आह्लाद होता है। ऐसा सुखद अनुभव, लाइट की लड़ी जलाने के लिये, लाइट की बटन दबाने में नहीं होता। इतनी लाइट होने के बाद भी मंदिरों में भगवान की आदती दीपक से उतारी जाती है। इसका एक कारण और भी है, गरीब कुम्हार न जाने कितने दिन पहले से दीपक बनाने की तैयारी करते हैं, जब उनके दीपक घर-घर में जायेंगे, तो कुम्हार के घर में उजाला होगा। अर्थात् गरीब कुम्हार के दीपक खरीदने से उसे व्यापार मिला, लक्ष्मी मिली, उसका परिवार प्रसन्न होगा।

कौन कहता है आप गरीब हैं

हमारी दृष्टि वहाँ है, जो हमें नहीं मिला, हमारी दृष्टि वहाँ नहीं है, जो हमें मिला है। जो मिला है यदि उसका सदुपयोग करें, हमसे बड़ा कोई धनवान नहीं है। मानव शरीर मिलना किसी वरदान से कम नहीं है। कई जन्मों का पुण्य इकट्ठा हो, तब कहीं हमें मानव शरीर प्राप्त होता है। इसकी कीमत करोड़ों से ज्यादा है अर्थात् सारा धन इकट्ठा कर लिया जाये और वैज्ञानिकों से कहा जाये कि एक मानव शरीर का निर्माण कर दो, तो वैज्ञानिक भी ऐसे शरीर का निर्माण नहीं कर सकते हैं। अर्थात् धन से ज्यादा कीमती मानव शरीर है, जिससे संसार की सारी उपलब्धियाँ हासिल की जा सकती हैं।

दिमाग हमारा कम्प्यूटर है। जैसे वर्तमान युग में कम्प्यूटर के माध्यम से करोड़ों काम हो रहे हैं, किन्तु बनाया किसने, मनुष्य ने। अपने दिमाग का जैसे सारा सिस्टम कम्प्यूटर में डाल दिया। जैसे डालोगे, वैसा निकालोगे, कम्प्यूटर एकदम दिमाग बनाया है। कम्प्यूटर में और मनुष्य के दिमाग में यही अंतर है कि मनुष्य झूठ बोल सकता है पर कम्प्यूटर झूठ नहीं बोल सकता। मनुष्य के अंदर भूलने की आदत होती है, यदि कम्प्यूटर में सुरक्षित नहीं किया तो कम्प्यूटर मैटर बाहर निकाल देता है। जैसे दिमाग से दुनिया भर के सवाल हल किये जाते हैं वैसे ही कम्प्यूटर कर सकता है। अर्थात् बैंक के काम, मेडीकल के काम, किताब प्रिंटिंग, डिजाइनिंग के काम, बच्चों के स्कूल के काम, बच्चों के खेल का काम, आज ऐसी कौन सी जगह नहीं है जहाँ कम्प्यूटर काम नहीं कर रहा है। अर्थात् कम्प्यूटर से ज्यादा तेज हमारा दिमाग है। जिसके पास दिमाग है वह गरीब कैसे हो सकता है।

इसके बाद हमारे पास कीमती चीज है आँख, जो कि बाहर के दृश्यों की फोटों खींच कर हमारे मन के अंदर भेजती है। अर्थात् कैमरा। जो काम कैमरा करता है वही काम आँख करती है। आँख हमें गड्ढे में गिरने से बचाती है और अच्छे रास्ते पर चलाती है। आँखों के माध्यम से शास्त्र, अच्छी किताबें पढ़कर हम विद्वान और

होशियार बन सकते हैं, ताकि हम अपना जीवन अच्छी तरह से चला सकें। इन आँखों के बिना जीवन में अंधेरा हो सकता है, प्रभु के दर्शन, गुरुओं की सेवा आहार भी नहीं हो सकता।

अतः आँख को संभाल कर रखना चाहिये। इन आँखों से बुढ़ापे तक काम लेना है। यदि आँखें खराब हो गईं तो अंधेरा ही अंधेरा नजर आयेगा। अतः मोबाइल चलाने की एक समय सीमा होनी चाहिये। वरना बाद में पछताने से कुछ नहीं पायेगा। कैमरा 5 लाख 10-20-25 लाख रुपये के भी आते हैं। आँख आप के सबसे कीमती कैमरा हैं। उस कैमरे से ज्यादा इस कैमरे को संभाल कर रखना चाहिये। उस कैमरे के खराब होने पर नया खरीदा जा सकता है, पर नई आँखें तो अगले जनम में ही मिल सकती हैं, इस जन्म में नहीं। इस जन्म में आँखों से अच्छा देखोगे, तो अगले जन्म में आँखें और अच्छी मिलेंगी, वरना इतनी भी नहीं मिलेंगी। इच्छा आपकी है। इतनी कीमती आँखें मिली हैं, फिर आप गरीब कैसे हो सकते हैं?

हृदय खून साफ करने का काम करता है और इसी हृदय में परमात्मा भी रहते हैं। खून साफ किसी हॉस्पीटल में नहीं हो सकता और यदि हो भी गया, तो उस स्थान पर परमात्मा नहीं रहता है। अतः हृदय हमारा कितना कीमती है। यदि कोई हार्ट की सर्जरी करवाये अर्थात् थोड़ा सा ठीक करवाये, तो लाखों रुपये लगते हैं। अर्थात् जिसको ठीक करने में लाखों लगते हैं उसकी कीमत करोड़ों से ज्यादा की होगी। जब आपके पास करोड़ों से ज्यादा कीमत का हृदय है, तो आप गरीब कैसे हो सकते हैं?

पेट एक पूरी फैक्ट्री का काम करता है। आप भोजन करते हैं, स्वास्थ्य के लिये स्वाद के लिये नहीं। आपको नहीं पता कि पेट में जाने के बाद भोजन को और पकाया जाता है, जैसे महिलायें मशीन में पानी, सर्फ, नील, कपड़े डाल देती हैं और बटन चालू कर देती हैं, अब मशीन कितनी मेहनत कर रही है, आपको नहीं पता। ठीक ऐसे ही, भोजन के पेट में जाते ही उसका काम शुरू हो जाता है। तुम्हारे घर के कपड़े की मशीन को, तो आराम मिल जाता है, पर आपके पेट की मशीन को आराम नहीं मिलता। उपवास व्रत करके इसे भी आराम देना चाहिये, नहीं तो ये मशीन जल्दी खराब हो जायेगी।

पेट में भोजन जाने के बाद उसका खून बनता है, हड्डी, चर्बी और भी शरीर में जितनी चीजों की आवश्यकता होती है, पेट उन वस्तुओं का निर्माण करता है और उस स्थान तक पहुँचाता है। कितना बड़ा काम है ये। आपने कभी चिन्तन नहीं किया। खाने का चिन्तन तो किया, पचाने का नहीं किया। संसार में जितने

वैज्ञानिक हैं उन सबमें बहुत खोज की पर खून की एक बूंद का निर्माण नहीं कर सके। आज तक वे ऐसी मशीन नहीं बना पाये कि उसमें दाल, चावल, सब्जी, दूध, फल डालो और खून, हड्डी, चर्बी आदि बन के बाहर आ जाये। अर्थात् जिसकी कोई नहीं कर सकता ऐसा पेट आपके पास है, फिर आप गरीब कैसे हो सकते हैं।

हमारे शरीर में दो हाथ हैं, जो सामान उठाने से लेकर अनेक कार्य कर सकते हैं। वैज्ञानिक ने हाथ के जैसे जेसीबी मशीन तैयार कर दी है। अर्थात् हमारे हाथ जेसीबी के समान हैं। इन हाथों से स्व और पर कल्याण के अनेक कार्य कर सकते हैं। यहाँ तक कि जेसीबी चलाने के लिये भी हाथ चाहिये। संसार के सभी अच्छे कार्य हाथों से संपन्न होते हैं। जेसीबी से भी ज्यादा कीमती आपके हाथ हैं फिर आप गरीब कैसे हो सकते हैं।

हमारे पास दो पैर हैं, जिससे हम मन चाहे स्थान पर जा सकते हैं। पैरों से चलकर हम अपनी मंजिल तक पहुँच सकते हैं। आज तेज चलने वाली गाड़ी रेल का निर्माण हो चुका है, पर आदमी मंजिल पर नहीं पहुँच पा रहा है। हमारी मंजिल है सुख, शांति और वह गाड़ी में बैठकर नहीं बल्कि पैदल चलने पर ही मिलेगी। मिट्टी का शरीर है मिट्टी से अर्थात् जमीन से जितना जुड़े रहेंगे उतनी शांति रहेगी, जितना दूर रहेंगे उतनी बीमारी और अशांति होगी। आज लोगों के पैर जमीन पर होते ही नहीं हैं। पलंग से उतरा तो चप्पल पहनता है और जब तक वापस पलंग पर नहीं बैठता तब तक चप्पल पैर में ही रहती है। पहले के लोग मिट्टी के मकान में रहते थे और मिट्टी मौसम के अनुकूल होती है। आप कभी मौका मिले तो प्रेक्टीकल कर लेना। मिट्टी के मकान सर्दी में गरम रहते हैं और गर्मी में ठंडे, इससे स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है और चप्पल की जरूरत भी नहीं पड़ती। आजकल लोगों ने अपने सारे घर में पत्थर लगा लिया है जो गर्मी में गरम और सर्दी में ठंडा होता है। ये आँखों को तो अच्छा लगता है, पर स्वास्थ्य को नहीं। कोई मिट्टी में गिरे तो हड्डी नहीं टूटेगी और पत्थर पर गिरे तो हड्डी नहीं बचेगी।

आज गाड़ी लाखों करोड़ों में खरीदी जाती है, वही पैर चलने का काम करते हैं। पैरों से चलने पर शरीर मजबूत होता है जबकि गाड़ी में चलने पर कमजोर। अतः गाड़ी से ज्यादा कीमती आपके पैर हैं, फिर आप गरीब कैसे हो सकते हैं। सबसे सुंदर उपहार के रूप में मुँह मिला है, भाषा मिली है जिससे हम अपने भाव व्यक्त कर सकते हैं। लोग गाना सुनने के लिये सीडी प्लेयर इस्तेमाल करते हैं। जबकि वो स्वयं गाये तो कहीं ज्यादा प्रसन्नता मिल सकती है। हमारा गला ही प्लेयर है इसे भी चलाने का मौका दें, स्वयं को। इससे भक्ति के गीत गाये और प्रभु का

गुणगान करे। ताकि ये प्लेयर मिलने की उपयोगिता होगी। इतना अच्छा आपको प्लेयर मिला है। फिर आप गरीब कैसे हो सकते हैं।

इसके अलावा आपके पास और बहुत कुछ है जिसका वर्णन मैं यहाँ नहीं कर रही हूँ। आप स्वयं ही उसे चिन्तन का विषय बनायें और चिन्तन करें मेरे पास इतना सब होते हुये हम दुःखी क्यों हैं। हम पैसे को ही धन क्यों मानते है, हमारे पास ज्ञान धन, परिवार धन है, रिश्तेदारी धन है, सबको धन में ही शामिल करें और धन जीवन चलाने के लिये है, जीव नहीं है। धन बहुत कुछ है सब कुछ नहीं है। इंसान धन से नहीं बल्कि अच्छे विचारों के धन से गरीब है। अच्छे विचार मन को जितना प्रसन्न कर सकते हैं, उतना धन नहीं कर सकता। हम किसे ज्यादा महत्ता देते हैं ये आपके ऊपर है।

पतन को थाम दे उस उत्थान का मोल अधिक है।
फिर वही एक दिन मिट्टी में मिला होता है॥
वजन इंसान का सोने चांदी से तौलने वालों,
आदमी धन से नहीं मन से बड़ा होता है॥

प्रकृति में समीर का
कवियों में कबीर का
होने में हर व्यक्ति के अमीर का
बड़ा ही महत्व है

खींचने में लकीर का
मनुष्य में फकीर का
मिलने में मानव शरीर का
बड़ा ही महत्व है

जंगल में ट्री का
रहने में कंट्री का
शरीर रूपी फैक्ट्री का
बड़ा ही महत्व है

पानी में मीन का
देखने में सीन का
शरीर रूपी मशीन का
बड़ा ही महत्व है

पर्वत में सुराग का
भावों में विराग का
मनुष्यों के दिमाग का
बड़ा ही महत्व है

एकत्व, एकांत और अकेलेपन में अंतर

भीड़ में जीने वाला मानव कभी-कभी अकेला भी रहता है। हाँ अकेले रहने की इच्छा से नहीं रहता। ऐसा समय आता है कि अकेले रहना पड़ता है, खुशी से रहने को तैयार नहीं होते। मान लीजिये घर में तीन लोग हैं दो लोगों को बाजार जाना है। तीसरे को अकेले रहना पड़ेगा। तब वह उनसे कहता है कि कितनी देर में लौट कर आओगे, मेरे लिये क्या लाओगे। उत्तर मिला कि एक दो घंटे तो लग ही जायेंगे। अकेले रहने वाला योजना बनाता है कि दो घंटे क्या करना है। कितनी देर मोबाइल चलाना है, कितनी देर टीवी देखना है, कितनी देर फोन पर बातें करनी हैं। दो घंटे से पहले सारा काम निपट गया, अब क्या करें? बैठे-बैठे सोचना शुरू कर देते हैं, पुरानी फाइलें खुल जाती हैं। किसने मुझे क्या कहा था, किसने अपमान किया था। दिमाग में बुरे विचार घूमने लगते हैं। परेशान होकर उन्हें फोन लगाते हैं जो बाजार गये हैं, वे कितनी देर में आयेंगे। दो घंटे तो हो गये। बार-बार फोन करके उन्हें परेशान कर देते हैं। क्योंकि अकेले में वह परेशान हो रहा है। इसका नाम है अकेलापन।

ऐसा महसूस करना मेरा कोई नहीं है। न किसी बड़े की छाया सिर पर है न किसी छोटे का सहारा है। कई बार सबके साथ रहने के बाद भी अकेलापन महसूस करते हैं। भीड़ में रहने के बाद भी अकेलापन दिमाग में छाया रहता है। ऐसा समय इंसान की आत्मा को परेशान कर देता है और वह टीवी, मोबाइल, पड़ोसियों से बातचीत करके उस अकेलेपन को दूर करने का प्रयास करता है।

अज्ञानी व्यक्ति ही इस अकेलेपन का शिकार है। ज्ञानी व्यक्ति अकेलेपन को एकांत में बदल देता है। अर्थात् ज्ञानी व्यक्ति चाहता है कि उसे एकांत मिले और वह उस एकांत के एक-एक समय का सदुपयोग करे। अज्ञानी को अकेलापन काटता है और ज्ञानी को एकांत सुहाता है। अज्ञानी के अकेले के योजनाएँ अलग होती हैं। एकांतवास का मौका मिलते ही ज्ञानी व्यक्ति शास्त्रों को खोलकर बैठ जाता है। ध्यान और सामायिक करके मन की, आत्मा की शुद्धि करता है।

ज्ञानी व्यक्ति कहता है एकांतवास झगड़ा न झोसा। अकेलेपन को एकांत में बदलना आ गया यानी जीवन जीने का रास्ता मिल गया। अकेले होने पर रोये न बल्कि चिंतन करें–

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
या कबहूँ इस जीव को, साथी सगा न कोय।

भगवान जब महल और परिवार को छोड़कर जाते हैं तब जंगल में अकेले ही होते हैं। तुम तो घर में बैठे हो, दरवाजा बंद कर सकते हो, पर भगवान घनघोर भयानक जंगल में रहते थे, जहाँ पर खूंखार जानवर आसपास घूमते थे। पर निर्भय निडर होकर शरीर की नहीं अपने भावों की रक्षा करते थे। वहाँ ध्यान के माध्यम से एकांत में एकत्व भावना का चिंतन करते थे। न कोई मेरा, न मैं किसी का। आत्म स्वभाव पर भाव भिन्न। आत्मा का स्वभाव परभावों से भिन्न है और प्रसन्न मुद्रा में ध्यान लगाते थे। बारह भावनाओं का चिंतन एकांत में रहने की शक्ति देता है। और एकांत को एकत्व बना देता है।

कमजोर व्यक्ति ही साथ की माँग करता है। संगी साथी खोजता है। भीड़ की तरफ भागता है। लेकिन जो स्वयं की खोज में लगा है, वह संगी साथी नहीं खोजता है। स्वयं की खोज में नितांत अकेले होने की आवश्यकता है। जहाँ एकांत हो गया, वहाँ समाज की भी आवश्यकता महसूस नहीं होती और सारा संसार सारी प्रकृति भी उसे शक्ति देने को तैयार हो जाती है। देवी-देवता भी उस व्यक्ति की सेवा में हाजिर हो जाते हैं। पर एकांतवासी सबका साथ लेने से इंकार कर देता है।

अभी भी जो जहाँ बैठा है, सब अलग-अलग हैं, अकेले-अकेले हैं। साथ रहने का भ्रम मात्र है। जन्म-मरण अकेले होता है। सांस हमारी अपनी चल रही है, मन हमारा अपना अकेले काम कर रहा है। हम सब परिधि पर साथ हैं, पर केन्द्र पर सब अकेले ही हैं। ध्यान करने पर कुछ लोग साथ बैठ सकते हैं, पर ध्यान में तो अकेले ही जाना होगा। सबका विचार चिंतन अलग ही करेगा। जो संसार का सहारा लेता है, उसे संसार की शक्तियाँ नहीं मिलती, जो स्वयं का सहारा लेता है, सारा संसार उसे शक्तियाँ देने को तैयार हो जाता है।

ध्यान की गहराई में जाने पर सुख के खजाने मिलते हैं। जैसे सागर की गहराई में जाओ, तो हीरा मोती मिलते हैं और ऊपर-ऊपर रहो तो कचरा ही मिलता है। ऐसा मन जब संसार के स्तर से, इंद्रियों के स्तर से ऊपर जीता है; तब भोगों का, विषय कषायों का कचरा मिलता है और जब ध्यान की गहराई में जाता है, तब

उसे आनंद के हीरे मोती मिलते हैं। एकत्व भावना प्रारंभ होते ही सुख, शांति, आनंद मिलना प्रारंभ हो जाता है। एकत्व भावना अवश्य भाये।

रेल में पांत का
पेट में आंत का
जीवन में एकांत का
बड़ा ही महत्व है।

किताब में अध्याय का
परमेष्ठी में उपाध्याय का
एकांत में स्वाध्याय का
बड़ा ही महत्व है।

शरीर में पांव का
नदी में नाव का
चिंतन करने से 12 भावनाओं का
बड़ा ही महत्व है

शरीर की परछाई का
बेटी की बिदाई का
सागर की गहराई का
बड़ा ही महत्व है

फलों में केले का
देखने में मेले का
ध्यान में अकेले का
बड़ा ही महत्व है

देखने में नजारा का
कमजोरी में बिचारा का
जीवन में सहारा का
बड़ा ही महत्व है

दिन में मंगल का
पहलवानों में दंगल का
ध्यान करने में जंगल का
बड़ा ही महत्व है

सावन में पावन नहीं बने, भादों में भद्र नहीं बने, तो क्वार में कोरे रह जाओगे

धर्म का सीजन चातुर्मास होता है। काल का प्रभाव, मौसम का प्रभाव हमारे ऊपर निश्चित पड़ता है। थोड़ा निमित्त मिलते ही मन उस ओर परिवर्तित हो जाता है। सर्दी में खाना, गर्मी में पीना और बरसात में त्याग करना। अर्थात् सर्दी के मौसम में पाचन क्रिया ठीक होती है इसीलिये अच्छे से किया जाता है। गर्मी में शरीर पानी या पेय पदार्थ ज्यादा माँगता है इसीलिये पेय पदार्थ ही प्रयोग किये जाते हैं। किन्तु बरसात में पाचन क्रिया मंद हो जाती है, इसीलिये भोजन कम पचता है। बारिश के मौसम में सांसों के माध्यम से और रोम-रोम से पानी हमारे अंदर प्रवेश करता है, इसीलिये पेय पदार्थ की भी आवश्यकता नहीं होती। अतः इस मौसम में जितना त्याग किया जाये, आत्मा के लिये और शरीर के लिये उतना श्रेष्ठ होता है।

जैन धर्म वैसे ही त्याग प्रधान धर्म है। त्याग नाम लेते ही लोग डर जाते हैं, किन्तु साहसी, हिम्मत वाले, समझदार व्यक्ति पहले उसे समझता है, उसके महत्व और लाभ से परिचित होता है और श्रद्धा के साथ उसे जीवन में उतार लेता है। त्याग करने से जीवन में दृढ़ता आती है, Will Power बढ़ता है, आत्मशक्ति जाग्रत होती है। इसीलिये त्याग से जीवन को मजबूत बनाना चाहिये। त्याग से संघर्षमयी जीवन जीने में आसानी होती है। जब वक्त आता है और त्याग के संस्कार हो, तो दुःखी नहीं होना पड़ता। भौतिक सुखों की आदत अधिक होगी, तो आप संतों के चरणों में बैठने का आनंद भी नहीं ले सकते।

भगवान राम जब वनवास गये, तो वहाँ भी वे दुःखी नहीं हुये क्योंकि साधना करने का अभ्यास वे सदा ही करते रहे और जब दीक्षा ली, तो तपस्या में भी स्थिरता बनी रही क्योंकि दुःखों में जीवन जीने का अभ्यास होना चाहिये।

सुख में प्राप्त किया ज्ञान दुःख आने पर भूल जाते हैं। अतः दुःख में रहकर जो शांति से रहे वह सबसे बड़ा ज्ञान है और त्याग का प्रारंभ भोजन से करें। सबसे

कठिन काम है जिह्वा इंद्रिय और कामेन्द्रिय को वश करना। जिह्वा के स्वाद के कारण इंसान होटल का गंदे तरीके से बनाया अशुद्ध भोजन नहीं छोड़ पाता। बाजार की वस्तुएँ नहीं छोड़ पाता। गुटखा, बीड़ी, सिगरेट नहीं छोड़ पाता, जबकि उसे मालूम है कि ये सब अशुद्ध भोजन शरीर और आत्मा दोनों को नुकसान पहुँचाने वाले हैं, जबकि वो जानता है इन चीजों से अनेक बीमारियाँ उत्पन्न होने वाली हैं। क्योंकि उसकी जिह्वा इंद्रिय उसके वश में नहीं है। जिह्वा इंद्रिय पर वो संयम नहीं रख पा रहा है।

प्रभु ने अपनी इंद्रियों को अपने वश में किया, उनमें संयम की लगाम लगाई, जिससे कर्मों का क्षय किया और वे भगवान बन गये। हम सारी जिंदगी दूसरों पर विजय प्राप्त कर विजेता बनना चाहते हैं। किन्तु सबसे बड़ा विजेता वो है जिसने अपनी इंद्रियों को अपने वश में कर लिया। उसे जितेन्द्रिय कहा गया।

आप अधिक नहीं छोड़ पा रहे हैं, तो कम से कम, सावन में त्याग कर पावन बनें और भादों में व्रत, उपवास, पूजा, भक्ति करके भद्र बनें, तो क्वार (आसौज) में मन से धर्म करने को तैयार हो जायेंगे। वरना ऐसा लगता है कि हम भोजन को नहीं खा रहे, भोजन हमें खा रहा है। अतः जीने को खाये, खाने को न जिये।

दवाईयों में डाबर का
नहाने में शावर का
इंसान की विल पॉवर का
बड़ा ही महत्व है

वस्तु में मन भावन का
मन को बनाने में पावन का
महीनों में सावन का
बड़ा ही महत्व है

ठीक होने में विवादों का
रस के स्वादों का
महीना में भादो का
बड़ा ही महत्व है

राजनीति में नेता का
युग में त्रेता का
इंडिया के विजेता का
बड़ा ही महत्व है

समय में वर्ष का
अस्पताल में नर्स का
जीवन में संघर्ष का
बड़ा ही महत्व है

भजन क्यों और कैसे पढ़ें

शरीर और आत्मा, इन दो चीजों में से हम शरीर को तो भली भांति जानते हैं, पर आत्मा के गुण धर्म को नहीं जानते। शरीर की देखरेख के प्रति सावधान हैं, पर आत्मा की देख रेख के प्रति सावधान नहीं हैं। शरीर की बीमारी को तो बीमारी मानते हैं, पर आत्मा की बीमारी (क्रोध, मान, माया, लोभ) को बीमारी नहीं मानते हैं। आत्मा के स्वस्थ होते ही मन अपने आप स्वस्थ हो जाता है। जिस घर में रहते हैं, उसे स्वच्छ साफ रखना चाहिये, पर सारे दिन घर में ही नहीं लगे रहना चाहिये। ठीक ऐसे शरीर रूपी घर में रहते इसे स्वच्छ साफ रखना चाहिये, पर सारे दिन शरीर (मोह) के स्तर पर नहीं जीना चाहिये। जीवन का स्तर आत्मा के हिसाब से होना चाहिए। उपवास, व्रत, दान, स्वाध्याय, देवपूजा, गुरु उपासना सब कुछ आत्मा और भावों की निर्मलता के लिये किया जाता है।

आपसे कहे आत्मा का ध्यान करो, तो आप नहीं कर पायेंगे। जब तक आत्मा के गुणों ने नहीं जानेंगे। इन भजनों को अकेले में बैठकर लयपूर्वक धीमे-धीमे पढ़ें। हर शब्द पर ध्यान अवश्य दें। ऐसा बार-बार करें। जब भजन याद हो जाये तो आँख बंद करके धीरे-धीरे पढ़ें। इससे आपका मन एकाग्र होगा। मन की चंचलता कम होगी। चिन्तायें हटेंगी। आत्म पथ पर कदम आगे बढ़ेगा, सम्यग्दर्शन की भूमिका बनेगी। संसार शरीर भोगों से बैराग्य होगा। जीवन जीने में आनंद मिलेगा।

इस विधिपूर्वक भजन पढ़ने से धर्म ध्यान के चार भेदों में से एक भेद 'पदस्थ ध्यान' नामक धर्मध्यान होगा। भगवान की आज्ञा का पालन होगा।

प्राचीन पंडित जी गृहस्थ में रहते हुये अध्यात्मिक थे। घर में रहकर भी अध्यात्मिक भावों से अध्यात्मिक भजनों की रचना की। समय के साथ भाषा के अनुसार साहित्य का निर्माण होता है। अतः उन भजनों को वर्तमान की भाषा और लय में अनुवादित किया है। ताकि सरल और सहजता से सबको पढ़ने के लिये प्राप्त हो। उस समय की लिखी तर्ज पढ़ना भी कठिन होता है। अतः थोड़ी सरल नई लय को लेकर भजन बनाये हैं। इन भजनों को कम और स्वयं के सुनने के लिये ज्यादा बनाये गये हैं। कुछ भजन सुनाने को होते हैं, जो दूसरों के लिये होते हैं। पर ये भजन अपनी आत्मा में उतरने के लिये हैं। अतः भजनों को पढ़कर जीवन सफल बनायें।

सुबह-2 मंजन का
भगवान की पूजन का
गाने में भजन का
बड़ा ही महत्व है

घड़ी में टिक-टिक का
नहीं होने में चिक-चिक का
होने में अध्यात्मिक का
बड़ा ही महत्व है

सर्दी में गुड़ का
शहरों में हापुड़ का
आत्मा के गुण का
बड़ा ही महत्व है

बीमारी के मर्ज का
नहीं करने में हर्ज का
भजन के तर्ज का
बड़ा ही महत्व है

बाल के अग्र का
ज्ञान में समग्र का
मन के एकाग्र का
बड़ा ही महत्व है

चाँवल में चुनने का
बुनाई में बुनने का
भजन को सुनने का
बड़ा ही महत्व है

इंसान की प्रज्ञा का
विशेष ज्ञान में विज्ञा का
भगवान की आज्ञा का
बड़ा ही महत्व है

अध्यात्मिक भजन क्यों पढ़ें

एक छोटा बालक माँ की ऊंगली पकड़ के चलता है। कई दिन तक चलता है। माता-पिता धीरे-धीरे उसका हाथ छोड़कर दो चार कदम चलना सिखाते हैं और एक दिन बच्चा एक दिन अपने पैरों पर चलना शुरू कर देता है। गाड़ी चलाते हुये सबसे बच कर चलता है; लेकिन मनुष्य का मन भी एक गाड़ी है। मनुष्य का मन एक बच्चा है, जो हमेशा दूसरों की उगली पकड़ कर ही चलता है। चाहे वह 90 साल का हो पर अपने पैर से आज तक नहीं चला। उसको मन से सोचने के लिये सदा कोई न कोई दूसरा ही चाहिये। उसके बिना वो चलता ही नहीं है।

सोचने के लिये बच्चे माँ, पिता, पत्नी, पति, मित्र, ग्राहक, रिश्तेदार भगवान या गुरु कोई न कोई होता है। अथवा अपने का दर्द या दूसरे के शरीर का दर्द विषयों की इच्छापूर्ति। धन से संबंधित हिसाब-किताब वाहन आदि-आदि। एक विचार से बाहर आता है, दूसरे विचार में पहुँच जाता है। ट्रेन के डिब्बे की तरह विचार एक के पीछे एक चले आते हैं और जीवन गाड़ी इन्हीं डिब्बों को खींचती हुई चलती रहती है और एक दिन मृत्यु के स्टेशन पर जाकर खड़ी हो जाती है। जाना था आत्म स्टेशन पर पहुँच जाते हैं, गतियों के स्टेशन पर। जन्म-मरण करके घूमते रहते हैं।

इंसान 2-4 घंटे के लिये अकेला छोड़ दिया जाये, तो वह परिवार के ऊपर नाराज होता है। अकेले में घबरा जाता है। उतनी देर उसका मन लड़खड़ा कर गिरने लगता है। उसकी वैसाखियाँ दूर होती हैं, वह परेशान हो जाता है। जबकि वह चलने में समर्थ है, पर आज तक चलना नहीं सीखा।

अध्यात्मिक ज्ञान हमें स्वयं से जोड़ता है। आत्मा का ज्ञान हमें अपने पैरों पर चलना सिखाता है। आत्मा का ज्ञान एकांत पाने की आकांक्षा करता है। एकांत से डरता नहीं बल्कि आत्मा के ध्यान में लम्बी छलांगें लगाता है। आज तक सारे संसार को जाना है, पर स्वयं को नहीं जाना। जन्म लेते ही दूसरों से परिचय किया है, पर स्वयं से परिचय नहीं किया। आत्मिक ज्ञान स्वयं को जानने का मार्ग है, स्वयं

से परिचय की अवस्था है ध्यान। सारा संसार बाहर की ओर भाग रहा है, पर ज्ञानी अंदर की ओर भागता है। बाहर भागने में लड़ाई, द्वेष, ईर्ष्या, राग, मोह, क्रोध, मान, लोभ इनसे परिचय होता है, पर अंदर भागने में शांति, प्रेम, आनंद और सच्चे ज्ञान से परिचय होता है।

ज्ञानी हमेशा जीवन का निर्णय स्वयं के स्तर पर लेता है पर अज्ञानी हमेशा जीवन का निर्णय दूसरों के स्तर पर लेता है। कैमरा सदा दूसरों की फोटो खींचता है, पर स्वयं की नहीं खींच सकता। ठीक इसी तरह एक इंसान चर्म चक्षु से शरीर की आँखों से सदा दूसरों को देखता है स्वयं को नहीं। आपका प्रश्न हो सकता है हम आईने में अपना रूप देख सकते हैं। ध्यान दें! आईने शरीर का रूप दिखाता है आत्म का स्वरूप नहीं। अतः अंदर आत्मा को जानने के लिये बाहर की आँखें बंद करनी होंगी। मन को स्वयं की खोज में लगाना होगा, मन, वचन, काय, एकाग्र करके ध्यान में स्थिर होना होगा, तभी हम अपने स्वरूप को देख सकते हैं। तन का रूप, आत्मा का स्वरूप दोनों अलग हैं। तन को ऊपर की आँखों से देखते हैं और आत्मा को मन की आँखों से देखते हैं। जब तक मन की तीसरी आँख नहीं खुलेगी तब तक आत्मज्ञान जाग्रत नहीं होगा।

परख सकती नहीं रत्नों, हर इंसान की आँखें
दिखाई क्या उसे देगा, जो न हो ज्ञान की आँखें।

भौतिक ज्ञान की व्यवस्था के लिये संसार में स्कूल, कॉलेज हैं पर अध्यात्मिक के स्थान कम रह गये हैं। उसी उद्देश्य को लेकर यह किताब लिखी गई है। हर काल में भाषा का परिवर्तन होता है। पंडित भूधरदास, बुधजन, द्यानतराय, भागचन्दजी अध्यात्मिक कवि हुये हैं जिन्होंने अनेक अध्यात्मिक भजन लिखे हैं। पंडित दौलतराम जी की लिखी छहढाला हर तरह के ज्ञान से भरी है। प्राचीन भाषा के भजनों को वर्तमान की हिन्दी भाषा में अनुवाद करने का प्रयास किया है।

क्रोध ईर्ष्या ये बेहोशी के लक्षण
प्रेम क्षमा ये होश के लक्षण।

मंगल में मंगली का
जानवर में जंगली का
मां की उँगली का
बड़ा ही महत्व है

ध्यान में आज्ञा विचय का
कर्म के चय का
स्वयं से परिचय का
बड़ा ही महत्व है

मरकर ही रूप बदलता है

स्वरूप, बहुरूप दोनों शब्द रूप की ओर इशारा कर रहे हैं। एक बाहर का इशारा कर रहा है, एक अंदर (आत्मा) की ओर इशारा कर रहा है। स्व यानी आत्म रूप यानी उसका आकार Original face आज तक देखा ही नहीं है। हम तो नये-नये चेहरे बनाकर उसी में जीते हैं।

बहुरूपिया उसे कहते हैं, जिसमें व्यक्ति तो एक होता है, पर उसी शरीर में अनेक रूप तैयार कर लेता है। एक रूप धारण करके थोड़ी देर में उसे उतार कर अपने रूप में आ जाता है। फिर कभी दूसरा रूप बनाता है। रूप कितने भी बना ले पर असली रूप को वह भूलता नहीं है। पिक्चर नाटक में लोग कभी डॉक्टर बनते हैं कभी डाकू बनते हैं कभी सेठ बनते हैं, कभी साहूकार बनते हैं, पर नाटक खतम होते ही अपने स्वरूप में वापस आ जाते हैं।

ठीक ऐसे यह आत्मा कभी पशु का रूप रखती है, कभी नारकी का रूप रखती है, कभी देवता का रूप रखती है, कभी मनुष्य का रूप रखती है। इन रूपों में रहते हुये आत्मा अपने को याद नहीं रखती। उसने रूप को ही स्वरूप समझ रखा है। अपने इस रूप को असली रूप समझती है। उसे ये मालूम ही नहीं है कि मेरा स्वरूप ये नहीं कुछ और ही है। जब देव, शास्त्र, गुरु के रूप को देखते हैं, तभी उसे अपना स्वरूप समझ में आता है।

एक बार एक शेर का बच्चा सियालों के झुंड में मिल गया और अपने आप को सियाल समझने लगा। एक दिन पास के जंगल का शेर वहाँ आया और उसने दहाड़ लगाई तो सियाल भाग गये। शेर के बच्चे ने अपने जैसा जानकर उसने भी दहाड़ लगाई तो उसे पता चला कि मैं तो जंगल का राजा शेर हूँ। ठीक ऐसे ही हम परमात्मा स्वरूपी चार गतियों के झुड में शामिल हैं, जब अरिहंत प्रभु का दर्शन करते हैं और गुरु की वाणी सुनते हैं, तो हमें भी अपने स्वरूप का ज्ञान होता है।

जिस गति में जाते हैं, उसके अनुरूप ही हमारी क्रियाएँ होती हैं। अपने स्वरूप के अनुरूप हमारी क्रियाएँ नहीं होतीं। कुत्ता बनते हैं, तो भौंकना शुरू कर देते हैं। गधा बनते हैं, तो रेंकना शुरू कर देते हैं, बिल्ली बनते हैं तो म्याऊं-म्याऊं करना शुरू करते हैं। मनुष्य बनते हैं तो जिस प्रदेश में जन्म लिया वहाँ की भाषा बोलना शुरू कर देते हैं। क्योंकि आज तक हमने अपना असली रूप देखा ही नहीं है।

मनुष्य पर्याय अपना स्वरूप देखने को मिली थी, तो इसमें मृगतृष्णा ने ऐसे बुद्धि पर डाका डाला कि प्रत्येक क्षण बाहर पदार्थों को इकट्ठा करने में लगा दिया। सारी ताकत, सारी शक्ति, सारा दिमाग 24 घंटे केवल नोटों का हिसाब करता है कभी आत्मा के ध्यान की इच्छा ही पैदा नहीं हुई। नाटक के ऐसे कलाकार बने कि असली रूप में वापस ही नहीं आये। मरकर ही रूप परिवर्तित होता है।

सारा संसार एक रंगमंच है और सभी जीव इस नाटक के पात्र हैं। जिसको जो भूमिका मिली है सारी जिन्दगी निर्वाह करता है और समय पूरा होते ही चला जाता है। नाटक को नाटक की भांति किया जाता है और नाटक को नाटक की भांति देखा जाता है। उसे असली नहीं समझा जाता। लेकिन संसार में लोग इसे नाटक मानते ही नहीं हैं, वे सच समझ बैठते हैं। इसीलिये दुःखी होते हैं। यदि जीवन को नाटक समझें तो कष्ट आधा रह जायेगा।

एक ब्रह्म गुलाम नामक व्यक्ति जो कि अनेक रूप बनाकर लोगों का मनोरंजन करता था। उसकी विशेषता थी कि वह जिस रूप को बनाता था, उस रूप के जैसे सारी क्रियायें होती थीं। एक बार राजा ने कहा कि शेर का रूप बनाओ, तो ब्रह्म गुलाम ने कहा कि महाराज इस रूप को बनाने में खतरा है इसीलिए मैं इस रूप को नहीं करूंगा। राजा के पुत्र ने भी जिद पकड़ ली। ब्रह्म गुलाल ने अभयदान माँगा और रूप बनाने की स्वीकृति दी। राज दरबार में शेर के रूप में ब्रह्म गुलाम दहाड़ता हुआ खिड़की से कूदा और राजा के पुत्र के ऊपर झपटा। पुत्र की मृत्यु हो गई।

चारों ओर शोक फैल गया। राजा दुःखी रहने लगा। ब्रह्म गुलाल को कुछ कह नहीं सकता। आखिर एक दिन राजा ने ब्रह्म गुलाल को बुलाकर कहा कि मुनि का वेश बनाकर मुझे उपदेश दो। ब्रह्म गुलाल ने कहा महाराज सारे रूप बनाकर छोड़े जा सकते हैं, पर मुनि रूप स्वरूप में जाने का मार्ग है, इससे वापस नहीं आ सकते हैं। राजा ने फिर कहा कुछ भी हो, मुझे संबोधित करो। ब्रह्म गुलाल घर गया। परिवार को समझा कर स्वयं को आत्मा के स्तर पर जीने के लिये तैयार कर दीक्षा ले ली। और आकर संबोधित किया।

इसी तरह संसार के सभी रूपों को छोड़कर हमें अपने स्वरूप में दिन में कम से कम एक बार तो आना ही चाहिये। ताकि हम पर को पर मान सके।

नारी पैसा क्यों कमाने लगी

नारी संसार के चक्र की धुरी है। जिसके बिना ये सृष्टि नहीं चल सकती। संसार के हर व्यक्ति का विचार नारी के आसपास घूमता है। वह नारी माता के रूप में हो या पत्नी के रूप में या बहन के रूप में। सृष्टि के निर्माण का बीज नारी की कोख में पलता है। सृष्टि की रचना में नारी की महत्वपूर्ण भूमिका है। नारी आधार शिला है, जिस परिवार में होती है, समाज, धर्म और देश टिका होता है। नारी ही शिशु के जीवन की प्रथम पाठशाला होती है। नारी ही बच्चों के रूप में भविष्य का निर्माण करती है।

नारी कोमलता और मृदुता की मूर्ति मानी जाती है। नारी ममता, दया और करुणा का भंडार मानी जाती है। नारी की शीतल छाया के आँचल में शिशु को संरक्षण होता है। शिशु के संस्कारों की जननी भी माँ ही होती है। संसार के अनेक गीत माँ की ममता के गुण गाते हैं। पूत कपूत हो सकता है, पर माता कुमाता नहीं हो सकती। ऐसी माता नारी के रूप में बच्चों के लिये उसका सब कुछ होती है।

नारी के कितने रूप

माँ के रूप में नारी घर में बच्चों की माँ है, सास-ससुर के लिये उसकी बहू, पति के लिये पत्नी है, देवरानी है, जेठानी है, न जाने कितने रूपों के फर्ज अदा करती है एक नारी। ममता और करुणा के साथ नारी अपने घर को स्वर्ग बना देती है। सुबह से रात तक उसका उद्देश्य उसके परिवार की खुशी होती है। उसका प्रयास, पुरुषार्थ, मेहनत, सोच, सब कुछ न्यौछावर कर देती है।

किन्तु पुरुष प्रधान समाज में पैसा कमाने वाले पुरुष को अधिक सम्मान दिया जाता है। उसकी हुकूमत चलती है। घर में रहने वाली नारी को उतना सम्मान प्राप्त नहीं होता और कई बार तो, यहाँ तक कह देते हैं तुम घर में पड़ी-पड़ी करती क्या हो। जबकि देखा जाये तो पुरुष से ज्यादा कार्य एक स्त्री घर में करती है। पुरुष

तो आठ घंटे दुकान चला के अथवा आठ घंटे नौकरी करके फ्री हो जाता है पर स्त्री 24 घंटे ड्यूटी पर रहती है। पूरे परिवार की जिम्मेवारी किसी दुकान की जिम्मेवारी से कम नहीं है। सास-ससुर की सेवा, बच्चों की शिक्षा, भोजन, वस्त्र आदि का ध्यान। भोजन किसको क्या खाना है, ये ध्यान रखना। किसको कौन सी दवाई देनी है, ये ध्यान रखना। बच्चों को कुछ हो जाये, तो उसका ध्यान रखना। परिवार भी एक संस्था है उसकी मुखिया एक स्त्री होती है। अपने परिवार के लिये न्यौछावर होती है, बदले में प्रेम, सम्मान और सुरक्षा चाहती है। पर जब नहीं मिला तो नारी भी पुरुषों के समान पैसे कमाने, घर से बाहर निकल गई। पढ़ाई करने और पैसे कमाने घर की देहरी लांघ गई। उसका परिणाम ये हुआ कि धर्म, संस्कार, मर्यादाओं को तोड़ मुक्त और स्वछंद हो गई। उसके पैसे कमाने की लालसा ने परिवारों को तहस-नहस करके रख दिया। एक महिला 24 घंटे में 8 घंटे तक काम प्रसन्नतापूर्वक कर सकती है। वह नौकरी में 8 घंटे काम करके लौटती, थकी हारी घर का ताला खोलती है। बच्चों को पड़ोस से लेकर आती है, जो माँ का इंतजार कर रहे होते हैं। अब क्या वह बच्चों को संस्कार दे पायेगी, उनके हिसाब का भोजन बना पायेगी। नारी पैसा केवल इसलिये कमा रही है कि इच्छाओं की पूर्ति हो सके और किसी के सामने हाथ न फैलाना पड़े। अर्थात् सम्मान का जीवन जिये। बात सही है, हर जीव प्रेम और सम्मान चाहता है, पशु पक्षी भी प्रेम और सम्मान के भूखे हैं। फिर तो नारी सम्मान की हिस्सेदार है। नारी ने नारी को सम्मान नहीं दिया। पुरुष ने नारी को सम्मान नहीं दिया, तो नारी ने धन का रास्ता खोज लिया। दुःख में कोई जीना नहीं चाहता, सुख का रास्ता खोज ही लेता है।

महिलाएँ दो तरह की प्रथम : जॉब करने वाली

जॉब करने का फैशन आज इस तरह फैला है कि घर में भरपूर धन होते हुये भी, घरवालों के मना करने पर भी, लड़कियां अपनी जिद से जॉब करने जाती हैं और बेरोक-टोक स्वछंद जीवन जी के संस्कारों को नष्ट करती हैं। शादी होने के बाद परिवार में रहना अच्छा नहीं लगता। पति पर अपना रुतबा रखती हैं। सास पर अपना रौब जमाती हैं। मन का काम न होने पर क्लेश करती हैं। जिस परिवार को स्वर्ग बनाना था, वह उसे नरक बना देती हैं। पैसा कमाने के अहंकार से वह पूरे परिवार के जीवन को खराब कर देती हैं।

अपने कोमल व्यवहार से सबके हृदय को जहाँ प्रसन्न करना चाहिए था। जहाँ ममता लुटानी चाहिये थी, वहाँ क्रोध की अग्नि से सबके हृदय को जला देती हैं।

घर में सब कुछ होते हुये भी सुख और शांति नहीं रख पाती। बच्चों में भी अनेक कुसंस्कार जन्म लेते हैं।

नारी को सम्मान दीजिये

घर में रहने वाली महिलायें, ये दूसरी तरह की होती हैं। जिस घर में नारी हो, उस घर और परिवार वालों का मन स्वस्थ और तन स्वस्थ रहता है। बच्चे स्कूल जाकर पढ़ाई अच्छी तरह से करते हैं। पुरुष दुकान भी स्थिर मन से चलाता है। सास-ससुर और परिवार के लोग भी सुख का अनुभव करते हैं। मात्र एक नारी के घर में रहने से सारा परिवार सुव्यस्थित और सुखी रहता है।

नारी के घर में रहने पर सभी को भोजन स्वास्थ्य के अनुसार मिलता है, मौसम के अनुसार मिलता है। मनपसंद भोजन मिलता है। सभी को भोजन बड़े प्यार से कराया जाता है। भोजन दुनिया की सबसे बड़ी चीज है। भोजन की गड़बड़ी से बीमारियाँ होती हैं, धन कमाने के चक्कर में भोजन गड़बड़ होता है और भोजन के चक्कर में स्वास्थ्य खराब हो जाता है। फिर स्वास्थ्य ठीक करने में धन खर्च करते हैं। अतः घर में रहने वाली नारी को पूरा सम्मान दीजिये। घर में रहने वाली सास, देवरानी, जिठानी आपस में इतने अधिक मिलकर रहें कि जॉब करने वाली महिलाओं को ईर्ष्या होने लगे कि हम घर में क्यों नहीं रहते। जॉब करने से ज्यादा अच्छा घर में रहना श्रेष्ठ है।

शांतिधारा की झारी का
पुलिस की लारी का
धरती पर नारी का
बड़ा ही महत्व है

देश की जनता का
कर्म के हन्ता का
मां की ममता का
बड़ा ही महत्व है

बसंत में बहार का
डोली के कहार का
नारी के मधुर व्यवहार का
बड़ा ही महत्व है

बुराई को निकालने का
बुरे लोगों को टालने का
नारी के द्वारा घर संभालने का
बड़ा ही महत्व है

मान का भोजन, प्रशंसा

प्रशंसा शब्द बड़ा मीठा है। जहाँ सुनने मिल जाये कानों में रस घुल जाता है। देखना यह है कि प्रशंसा किसकी होती है और खुश कौन होता है। वर्तमान समय में फैशन का व्यसन अत्यधिक जोर पर है। हर व्यक्ति नये तरह से बाल संवारना पसंद करता है। हर व्यक्ति नये तरह के कपड़े पहनने में रुचि रखता है। कारण? प्रशंसा होगी, जब कोई कहेगा कि अरे ये तो बिल्कुल लेटेस्ट डिजाइन है, बहुत सुंदर लग रही है। बस फूल के गुप्पा हो गये। प्रशंसा हुई कपड़ों की, प्रसन्न हुई आत्माँ किसी ने कहा मैडम आप बहुत सुन्दर लग रही हैं, हो गये खुश। प्रशंसा हुई शरीर की, खुश हो गई आत्माँ जब कोई सोने के हार के रूप की तारीफ करता है तो, रोम-रोम पुलकित हो जाता है। उस समय अध्यात्मिक चिंतन जाग्रह नहीं होता।

अरे यह प्रशंसा तो, पुद्गल की हो रही है और मैं पुद्गल नहीं हूँ। मैं जीव हूँ, चेतन आत्मा हूँ, ये शरीर वस्त्र, ज्वैलरी सब पुद्गल हैं। ये मेरे पड़ोसी हैं, पड़ोसी की प्रशंसा में मैं क्यों खुश होऊँ। ऐसा विचार तो आता ही नहीं है। शरीर, कपड़े, मकान, दुकान, सोना, चांदी, गाड़ी, बंगला में मेरापन का भाव जोड़ दिया है। ये मेरे हैं, इसलिये उनकी प्रशंसा में प्रसन्नता होती है। उनके इकट्ठा करने में अहंकार पुष्ट होता है। मान कषाय को भोजन मिलता है। इसलिये सारी मेहनत इसी के लिये करता है। सारी जिन्दगी अहंकार के पोषण में लगा देता है, कुछ बनने के चक्कर में खत्म कर देता है। कभी आत्मा की याद भी नहीं आती।

जब जेब गरम होती है, तो अहंकार की हवा से फूल जाता है। जब जेब खाली हो जाती है, तो हवा निकलते ही अपने आपको दीन-हीन समझने लगता है। बाहर की वस्तुओं से बड़ा बनता है, वस्तुओं के जाते ही छोटा हो जाता है। जहाँ तक पहुँचने के लिये जन्म लिया था वहाँ की यात्रा, तो प्रारंभ ही नहीं कर पाता और जीवन यात्रा पूरी हो जाती है। मात्र अहंकार की कार में बैठ कर संसार दर्शन करता रहता है।

प्रशंसा करने से अहंकार कम होता है

प्रशंसा करना एक बहुत बड़ा गुण है। प्रशंसा करना धर्म है। प्रशंसा करने से उच्चगोत्र का बंध होता है। प्रशंसा करने से गुण ग्रहण की दृष्टि का समावेश होता है। प्रशंसा तभी की जा सकती है, जब सामने वाले के प्रति भाव शुभ होंगे। शुभ भाव होना पहला धर्म। प्रशंसा आँखों से देखी हो तो आँखों में पवित्रता, प्रशंसा करते समय कषाय की भावों में कमी होती है। प्रशंसा करने वाले को ईर्ष्या आदि भी नहीं होगी। अर्थात् प्रशंसा करने से पहले ही हमारा मन शुभ भावों से भर गया इसलिये, प्रशंसा दिन में 10 बार तो अवश्य करनी चाहिये।

मान कषाय में कमी

मान कषाय युक्त व्यक्ति सदा अपनी प्रशंसा चाहता है, जब हम दूसरे की प्रशंसा करते हैं तो हमारे मान कषाय में भी कमी आती है। मान कषाय के कम होने पर क्रोध में भी कमी आयेगी। जब आप सबकी प्रशंसा करेंगे, तो वातावरण ऐसा निर्मित होगा कि क्रोध करने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। अतः मान कषाय को कम करने के लिये प्रशंसा करना प्रारंभ करें, फिर देखिये इसका जादू सुख की बरसात करेगा।

प्रशंसा किसकी करें

संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जिसमें गुण न हो। हर वस्तु गुणवान है। (त. सू.) में उमास्वामी आचार्य ने भी कहा है–

गुणपर्ययवद् द्रव्यम

अर्थात् जिसमें गुण और पर्याय होती है, उसे द्रव्य कहते हैं। चाहे वह जीव द्रव्य हो या पुद्गल तथा धर्म, अधर्म, आकाश और काल सबमें गुण हैं। हमें गुण देखने की नजर चाहिये। हमारे अंदर का राग द्वेष अपनी दृष्टि में विकार पैदा कर गुणवान द्रव्य में भी अवगुण दिखाता है। हमें द्रव्य में परिवर्तन नहीं करना, बस अपनी दृष्टि अपने देखने के नजरिये को बदलना है। सबमें गुण दिखने प्रारंभ हो जायेंगे।

गुणवानों की प्रशंसा करने योग्य है। पर निन्दा किसी की नहीं करनी चाहिये। गुणवानों की प्रशंसा जो न कर पाये उसका मुख मिलना व्यर्थ है। पुद्गल की प्रशंसा तो सारी दुनिया करती है। पर जीव की प्रशंसा करने में संकोच करती है। अजीव पुद्गल की प्रशंसा दिल खोल कर करते हैं। धन की प्रशंसा, कोठी, बंगला, गाड़ी की प्रशंसा, भोजन की प्रशंसा करने में जिह्वा थकती नहीं है। यदि भाई की प्रशंसा करने को कहो तो शब्द ढूंढने पड़ते हैं। मित्र की, पत्नी की, माता-पिता की किसी

महापुरुष की प्रशंसा करनी चाहिये। देव शास्त्र गुरु की प्रशंसा को भक्ति कहते हैं। जिससे पाठ भक्ति भजन के रूप में की जाती है। कौन व्यक्ति किसकी प्रशंसा कर रहा है, इससे पता चलता है कि उसका प्रेम, उसकी रुचि किसमें है?

जैसे महिलायें भोजन की, कपड़ों की और अपने बच्चों की प्रशंसा खूब करती हैं, अर्थात् उनके जीवन में इनकी भूमिका महत्वपूर्ण है। उनका ज्यादा से ज्यादा समय इसी में गुजरता है। पुरुष राजनीति और व्यापार, धन आदि की चर्चा ज्यादा करते हैं अर्थात् उनका प्रेम रुचि उसमें अधिक है। बच्चों की रुचि खेलने में अधिक होती है। युवाओं की रुचि फैशन में अधिक होती है। इसलिये मोबाइल पर यही सर्च करते रहते हैं, बाल कैसे बनायें, नये फैशन के कपड़े कौन से हैं?

जिसकी तारीफ नहीं करनी थी, उसकी प्रशंसा करी और जिसकी करनी थी, उस तरफ देखा भी नहीं। अर्थात् आत्मा के गुणों की प्रशंसा नहीं की। हर व्यक्ति में बुराई नजर आती रही, दुश्मन की वस्तु में भी अच्छाई नहीं दिखी। जब तक गुणों का ज्ञान नहीं होगा, तब तक प्रशंसा करोगे कैसे? इसलिये गुणों के गुण जानना प्रारंभ करें, ताकि प्रशंसा करते वक्त शब्दों को ढूंढने की जरूरत न पड़े।

प्रशंसा का परिणाम

जिस व्यक्ति में प्रशंसा करने का गुण होता है, वह कभी अकेला नहीं रहता। अर्थात् कठोर, कर्कश वाणी न होने से और गुण प्रशंसक होने से हर व्यक्ति उसकी तरफ खिंचा आता है। उसे किसी वस्तु का अभाव नहीं होता। प्रशंसक के प्रशंसक बहुत होते हैं। प्रशंसक को गिफ्ट देने वाले और सहायता करने वाले बहुत होते हैं। पत्नी की प्रशंसा करता है तो भोजन वस्त्र अच्छे मिलते हैं। बच्चों की करता है, तो सेवा होती है। मित्रों की करता है, तो यात्रा में वे अपने साथ ले जाते हैं। देव, शास्त्र गुरु की प्रशंसा करता है, तो भक्तों के बीच में उठना बैठना हो जाता है। क्लेश और अशांति भी नहीं होती। अतः प्रशंसा करना हर दृष्टि से उत्तम है। पर मूर्ख की प्रशंसा मत कर देना वरना वह तुम्हारे पीछे लग जायेगा। इन बातों का ध्यान रखना भी आवश्यक है।

करने में अनुशंसा का
पूरी होने में मंशा का
गुणों की प्रशंसा का
बड़ा ही महत्व है

देने में दान का
रहने में मकान का
छोड़ने में अभिमान का
बड़ा ही महत्व है

मन का भोजन मान

दशधर्म में दूसरा धर्म उत्तम मार्दव है। जब मान कषाय विदा लेती है तब मार्दव धर्म प्रगट होता है। मार्दव धर्म मृदु है, कोमल है, मुलायम है। परिणामों को कठोरता रहित करने वाला धर्म मार्दव है। लेकिन जब तक मान मषाय होगी तब तक मार्दव धर्म प्रगट नहीं हो सकता। इसलिये क्रोध की अग्नि को शांत करते ही मान बिदाई लेने लगता है, जब क्रोध नहीं रहेगा तो मान की रक्षा कौन करेगा, अतः क्रोध के अभाव में मान टिक नहीं पाता है।

क्रोध को पहचानना अत्यधिक सरल है। क्रोध की स्थिति में व्यक्ति ऊँचा बोलता है आँखें लाल करता है, हाथ-पाँव पटकता है। चिल्लाता है, तोड़ता-फोड़ता है, मारता-पीटता है। इसलिये एक छोटा-सा बच्चा भी समझता है कि ये क्रोध कर रहे हैं। पर मान को पहचानना बड़ा कठिन है। अनंतानुबंधी मान तो रोम-रोम से टपकता है पर अन्य तीन को समझना बड़ा मुश्किल होता है। लेकिन बिना पहचाने बिना परिचय के कैसे छोड़ा जा सकता है? मान को समझ कर जब छोड़ेंगे, तो जो बचेगा वह मार्दव धर्म होगा। मान हमारी आत्मा को कहाँ-कहाँ से सताता है, पीड़ा देता है, इस बात को समझना आवश्यक है। कुछ कहानी, कुछ उदाहरण के माध्यम से भी मान को समझने की कोशिश करेंगे।

मन से मान की अभिव्यक्ति

मन और मान में एक अ की मात्रा का अंतर है। अर्थात् मान को व्यक्त करने में मन का पूरा संबंध है। मन का भोजन मान है, यदि ऐसा भी कह दिया जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। पेट को भोजन न मिले तो चल जायेगा, एसी, कूलर न भी मिले, तो चल जायेगा, सोने को पलंग न भी मिले, तो चल जायेगा, पर कानों को प्रशंसा और बड़ाई के शब्द सुनने न मिलें तो नहीं चलेगा। यदि प्रशंसा मिल रही है, तो सर्दी गर्मी बरसात सब सहन हो जायेगी।

इंद्रियों का राजा मन है

पांचों इंद्रियों का संचालन करने वाला मन ही मान कषाय का स्वाद अधिक लेता है। मान कषाय की पूति में पांचों इंद्रियों को कुछ नहीं मिलता, किन्तु मन को रस आता है। इंद्रियों का राजा मन है, मन अपने अनुसार ही इंद्रियों का संचालन करता है। किसी पंडाल में 56 प्रकार के व्यंजन रखे हों, पंडाल खुशबू से महक रहा हो, ए.सी., कूलर से वातावरण अनुकूल हो, फिल्मी संगीत की धुन बज रही हो, किन्तु कोई आपका अपमान कर दे, तो आप एक मिनट में पंडाल छोड़कर वहाँ से निकल जायेंगे। क्यों? पांचों इंद्रियों के सुख थे, फिर क्यों चले गये? मन का भोजन मान नहीं था, इसलिये चले गये। पहले राजा का मान जरूरी है। इसके लिये इंसान न जाने कहाँ-कहाँ भटकता है।

मन के पास कोई अंग नहीं पर अंग-अंग को हिला देता है

मान कषाय यदि किसी महापुरुष में आ जाये तो इतिहास रच जाता है। रावण का अभिमान सबको याद है। एक नारी का अपहरण मात्र रावण अकेले ने नहीं किया ऐसे अनेक राजा हैं, जिन्होंने नारी का अपहरण किया। किन्तु अपहरण के पश्चात् अहंकार में अपनी बात को छोटी न होने देने के लिये रामायण जैसा युद्ध कर लिया पर सीता को वापस देने के लिये तैयार नहीं हुआ।

रावण स्वयं को सर्वशक्तिमान, विद्याबल, सिद्धिबल, धनबल, जनबल में सबसे श्रेष्ठ मानता था और उसके पास था भी, पर 'विनाशकाले विपरीत बुद्धि'। जब विनाश का समय आता है, तब धन संपत्ति, पुत्र, सिद्धि, विद्या कुछ काम नहीं आती। अहंकार की अधिकता के कारण भाई को भी धक्का मार दिया।

मृदु, कोमल-स्वभावी, राम के पास वनवास में कुछ नहीं था, फिर भी युद्ध में विजय पाई और रावण के पास सब कुछ था, वह फिर भी हार गया। मार्दव धर्म है, अहंकार अधर्म है। मार्दव धर्म की जीत हुई, और अहंकार अधर्म की हार हुई। मान कषाय बाहर की वस्तुओं को पाकर बड़े बनने का भ्रम पैदा कर देता है। बाहर की वस्तुएँ अस्थायी, क्षण भंगुर और कर्माधीन हैं। इसलिये अहंकार में भी टिकाव नहीं हो सकता है।

रावण अपने पास केवल उन्हीं को रखता था, जो उसकी हाँ में हाँ मिलाते थे, जो उसका गुणगान करते थे और जो उसे उसकी सच्चाई बता दे, वह उसे अपने दरबार से निकाल देता था, चाहे भाई ही क्यों न हो। अहंकार किसी की सुनता नहीं है, अहंकार केवल सुनाना जानता है। जब सुनाने वाला कोई मिल जाये तो

'करेला और नीम चढ़ा' वाली कहावत चरितार्थ होने लगती है। अभिमानी अपने आपको सबसे बड़ा मानता है। कोई एक बात उससे दोबारा पूछ ले, तो उसे क्रोध आ जाता है। अपना अपमान समझता है।

जैसे—एक संत को किसी व्यक्ति ने निमंत्रण दिया। उसने मान लिया और समय पर पहुँच गया। भक्त ने बड़ी आवभगत की। बढ़िया भोजन कराया। भोजन के पश्चात वापस स्थान पर छोड़ने चल पड़े। रास्ते में भक्त ने महाराज से पूछा महाराज आपका नाम क्या है? संत ने बड़ी शान्ति से जवाब दिया, जी शान्ति प्रसाद। थोड़ी दूर जाकर भक्त ने फिर कहा महाराज मैं भूल गया, आपका नाम क्या है? तनिक जोर से संत बोले शान्ति प्रसाद। थोड़ी दूर जाकर भक्त ने फिर पूछा तो, संत ने कहा दो बार बता दिया मेरा नाम शान्तिप्रसाद है। भक्त तो परीक्षा कर रहा था। थोड़ी दूर जाकर फिर पूछ लिया महाराज आपका नाम क्या है? अब तो संत को क्रोध आ गया और वे भक्त पर चिल्ला पड़े। मूर्ख हो, बुद्धू हो, पागल हो, कितने बार पूछ लिया याद नहीं रहता कि मेरा नाम शांति प्रसाद है। तब भक्त ने कहा महाराज यही तो पूछ रहा था कि आपका नाम शान्ति प्रसाद है या ज्वाला प्रसाद है। पता चल गया मुझे अब नहीं पूछूंगा।

बागों में सुमन का
करने में नमन का
सोचने के लिए मन का
बड़ा ही महत्व है

हिन्दी में अल्पविराम का
थकान में आराम का
कोमल स्वभावी राम का
बड़ा ही महत्व है

हीरे के कण का
समय में क्षण का
प्रोग्राम में आमंत्रण का
बड़ा ही महत्व है

लेने में नियम का
होने में नम का
इंद्रियों पर संयम का
बड़ा ही महत्व है

प्रभु को निहारने का
गुरु वचनों में तारने का
मन को सुधारने का
बड़ा ही महत्व है

क्रोध के लिये क्रोध नहीं करते

आज उत्तम क्षमा का दिन है। क्षमा के साथ उत्तम शब्द लगा है। उत्तम मध्यम जघन्य में से उत्तम क्षमा की चर्चा है। पर क्षमा को समझने के पूर्व यदि क्रोध को समझा जाये तो उचित होगा। दोषों के भी दोष जानने आवश्यक हैं अर्थात् पंडित दौलतराम जी ने छहढाला में बड़ी सुंदर बात कहीं है।

बिन जानै तैं दोष गुनन को, कैसे तजिये गहिये।

अर्थात् दोष और गुण जाने बिना छोड़ना और ग्रहण करना उचित नहीं है। जानने के बाद छोड़ना पड़ता है छूटता नहीं है। अभी तक क्रोध को किया है, क्रोध को जाना नहीं है। अर्थात् जब क्रोध आता है, तब आप वहाँ नहीं होते। जब आप होते हैं, तब क्रोध नहीं होता। लोग कहते हैं 'बुखार चढ़ गया' कहाँ चढ़ गया? शरीर पर चढ़ गया। जब बुखार आया तब भाव भी बुखार मय हो जाते हैं, उसी रूप सोचना, उसी के अनुसार चलना, लेटना, सोना, बोलना होता है। क्रिया बुखार के अनुसार होती है। उस समय जाप में मन नहीं लगता, भक्ति पूजा स्वाध्याय की याद नहीं आती। बस बुखार ही नजर आता है। कोई और चर्चा करे, तो उसे सुहाती नहीं है। गुस्सा करने लगता है। अर्थात् शरीर में आया बुखार भावों में आत्मा में भी चढ़ गया। समस्त वातावरण बुखारमय हो गया।

ठीक इसी तरह जब क्रोध आता है, तब भी यही स्थिति बनती है। बुखार तन पर आकर मन पर डेरा डालता है। क्रोध मन में आता है और तन को, वचन को भी अपने अनुसार कर लेता है। अर्थात् क्रोध का बुखार मन पर चढ़ता है, तब आँखें लाल हो जाती हैं, हाथ-पांव पटकने लगता है, जोर-जोर से चिल्लाने लगता है, किसी की बात नहीं सुनता। कोई समझाने का प्रयास करे, तो नहीं समझता, उल्टा क्रोध दुगुना करने लगता है। अर्थात् क्रोध जब आता है, तब समस्त वातावरण क्रोधमय हो जाता है। क्रोध किया, पर जाना नहीं। अर्थात् हमारी जानने की जो शक्ति है, वह क्रोध जानने में नहीं लगी वरन् क्रोध करने में लग गई। ज्ञान जानने का काम

कराना था। हमें करने का काम करा दिया। इसलिये क्रोध करते हुये भी आज तक क्रोध का परिचय नहीं कर पाये।

सामने वाले का क्रोध

स्वयं के क्रोध के समय तो आदमी बेहोश हो ही जाता है, पर जब सामने वाला उस पर क्रोध करे, तब भी वह सामने वाले के क्रोध को जानने की बजाय उसके क्रोध का जवाब क्रोध से देना प्रारंभ कर देता है और स्वयं क्रोध से भर जाता है। क्रोध संक्रमण गुण वाला है, यदि आपके अंदर क्रोध के परमाणु सुप्त अवस्था में पड़े हैं, तो सामने वाले के क्रोध से संक्रमित होकर वे तुरंत जाग्रत होकर, अपना असर दिखाने लगते हैं। जैसे मोड़ पर सावधान रहना आवश्यक है, वरना एक्सीडेंट हो जाता है। वैसे ही शांति से क्रोध की तरफ जब मन मोड़ लेता है, तब भी सावधान होना आवश्यक है, वरना एक्सीडेंट की पूर्ण संभावना है। हमारे अंदर क्रोध के परमाणु न हों, तो सामने वाला हमें क्रोध दिला ही नहीं सकता है। अतः सामने वाला निमित्त है। हमने अपनी समता और धैर्य का उपयोग नहीं किया इसलिये ये घटना घटी है। यदि हम चाहें तो सामने वाले का क्रोध हमें हजार शिक्षायें दे सकता है।

अग्नि के समान क्रोध का उपयोग करें

क्रोध एक अग्नि है ऐसा आपने कई बार सुना होगा। बाहर की अग्नि का उपयोग करते हैं। यदि हम अग्नि का उपयोग तरीके से करें तो भोजन बनता है, ट्रेन चलती है, बिजली बनती है, फैक्ट्री चलती है। दीपक बन प्रकाश करता है, आरती का दीपक बन प्रभु की भक्ति करते हैं, हवन की अग्नि मंत्रों के साथ वातावरण शुद्धि एवं धर्म रूप हो जाती है। नियंत्रित रूप से प्रयोग अग्नि सुख का कारण है, अर्थात् जब हमें जरूरत है अग्नि तब जलायी जाती है, उपलब्ध तो पहले से थी पर आवश्यकतानुसार प्रज्ज्वलित की गई है।

पर यही अग्नि जब अपने आप प्रज्ज्वलित होती है, तब विनाश का कारण बन जाती है। बड़े-बड़े प्रोग्राम के पंडाल जलकर राख हो जाते हैं। बड़ी-बड़ी फैक्ट्रिया और महल, मकान जलकर राख हो जाते हैं। अनेक लोगों की मृत्यु हो जाती है। अग्नि जलने का निमित्त तो मिला और वह भड़क गई। भड़की हुई अग्नि को संभालना बड़ा मुश्किल होता है, जब भड़कती है, तब नुकसान बहुत करती है। अनेक लोगों की मृत्यु हो जाती है। यह कभी लाइट के माध्यम से लगती है, कभी दीपक के पास कपड़ा आदि पहुँच जाये, तो लग जाती है और भी अन्य कारण हो सकते हैं।

अग्नि के समान क्रोध एक ऊर्जा है

जैसे अग्नि एक शक्ति है, वैसे ही क्रोध भी एक शक्ति है। किसी कमजोर को भी क्रोध आ जाये, तो उस समय वो भी पहलवान जैसे भारी से भारी वजन उठा सकता है। हंसते हुये आदमी के हाथ से छोटी चीज भी छूट जाती है। तो इस ऊर्जा का उपयोग बड़े तरीके से बड़ी समझदारी से करना होगा। क्रोध करने में भी बड़े विवेक की आवश्यकता है। जब बिना विवेक के क्रोध आता है, तो भगवान और गुरुओं का अपमान भी कर देता है। घर के बड़े बुजुर्गों से भी बुरे-बुरे वचन बोलता है। प्यारी पत्नी और प्यारे बच्चों को भी पीट डालता है। मित्रों की पुरानी मित्रता के बाग को भी जला डालता है और साथ में स्वयं की जिंदगी को भी तहसनहस कर डालता है। अतः क्रोध की अग्नि लेकर हर आदमी घूम रहा है, उसकी अग्नि से तुम्हें बचना है, तो अपनी अग्नि को भी शांति रखो। वरना इस क्रोध की आग के खेल में मानव शरीर जलकर राख हो जायेगा और आत्मा नरक में चली जायेगी।

जब तुम चाहो तब क्रोध आना चाहिये, तुम नहीं चाहो, तो नहीं आना चाहिये। क्रोध चाहने पर आये, मतलब समझदारी के साथ किया जा रहा है। अर्थात् जब आवश्यकता है, तब अग्नि जलाई है। अब बनाओ भोजन, जो भी बनाना है, अब सेंको रोटियाँ। ऐसा क्रोध अनुशासन के लिये होता है और क्रोध करते हुये जानता भी है कि मैं क्रोध कर रहा हूँ। इसकी मात्रा उतनी ही होगी, जिनती जरूरत है। बच्चों ने गलती की है, तो कभी-कभी क्रोध न चाहते हुये भी करना पड़ता है, इस क्रोध को भी बुलाकर किया जाता है।

लोग कहते हैं, क्रोध आ गया

आपके घर में कोई मेहमान बिना बुलाये आये, तो आपको अच्छा नहीं लगता। आप कोई न कोई जुगाड़ करते हो कि अब कोई न आये। ऐसे ही क्रोध यदि बिना बुलाये आया है, तो उसका स्वागत न करो, अर्थात् उससे कहो कि अभी मैंने नहीं बुलाया, जब मुझे जरूरत होगी तब बुला लूँगा। लेकिन सारा संसार क्रोध के आने पर ये भूल ही जाता है कि बिना बुलाये आया है और वह पूर्ण क्रोध रूप होकर, क्रोध करना प्रारंभ कर देता है। लोग कहते हैं कि क्रोध आ गया। घर आपका है, बिना बुलाये आया है, आपने क्यों घुसने दिया। लेकिन जब क्रोध आता है, तब सोचने समझने की शक्ति को नष्ट कर देता है और फिर अपना राज्य जमा लेता है।

क्रोध की जड़ बहुत गहरी है

सारा संसार न चाहते हुये भी क्रोध करता है, ऐसा क्या कारण है कि बिना गेयर चेंज किये ऑटोमेटिक चेंज हो जाते हैं, कौन सी शक्ति है, जो खुदी चेंज कर देती है। ऐसे कैसे संस्कार हैं, जो आदत बनकर हमारी आत्मा से स्वयं ही क्रोधादि करवा लेते हैं? इस प्रश्न को और प्रश्न के उत्तर को जानना जरूरी है। जब तक अपना इतिहास नहीं जानेंगे; तब तक वर्तमान भी अच्छी तरह से समझ में नहीं आयेगा। वर्तमान की गुत्थी को सुलझाने के लिये, भूत में गुत्थी कहाँ से उलझी है, उस छोर तक पहुँचना आवश्यक है। अर्थात् हम चारों गति में चलकर देखते हैं कि हमने अनंत काल से कहाँ कितना क्रोध किया।

नरक गति में क्रोध

ना रता इति नारका। अर्थात् जहाँ एक क्षण रहने का मन न हो, उसका नाम है नरक। नरक में प्रतिक्षण हर समय क्रोध और हिंसा का वातावरण है। अत्यधिक क्रोध के साथ, एक दूसरे को मारते-काटते रहते हैं। विचार करो कि घर में एक दिन झगड़ा हो जाये तो कितनी टेंशन होती है। जहाँ पूरे जीवन भर क्लेश हो, तो वहाँ कैसा लगता होगा और ऐसे नरक की यात्रा हमने कई बार की है। क्रोध संस्कार नरक से सबसे ज्यादा लिये हैं। उन्हें छुड़ाने के लिये ही यह मनुष्य जीवन है।

तिर्यंच गति का क्रोध

एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय संज्ञी तिर्यंच तक क्रोध करते हैं। पेड़-पौधे कीड़े-मकोड़े, मच्छर, मक्खी, भौंरा आदि का क्रोध योग्यता कम होने की वजह से अव्यक्त होता है, पर होता अवश्य है और संज्ञी तिर्यंच का क्रोध व्यक्त रूप से देखने में नजर आता है। बंदरों का झगड़ा प्रसिद्ध है। इनके पास जमीन-जायदाद नहीं है, तो ये आपके द्वारा बनाये मकान की छतों का बंटवारा कर लेते हैं। आपस में संगठन बना लेते हैं। कोई दूसरे संगठन का उनकी छत पर आ जाये, तो इतना लड़ते हैं कि एक दूसरे का खून खराबा कर देते हैं। जंगल में रहने वाले बंदर पेड़ों को बांट लेते हैं। पेड़ पर रहने वाले, डालों का बंटवारा कर लेते हैं और इसी को लड़ने का निमित्त बनाकर खूब क्रोध करते हैं।

मोहल्ला बांटने वाले कुत्ते भी जग प्रसिद्ध हैं। कोई दूसरा आ जाये तो सामूहिक होकर कुत्ते अत्यधिक क्रोध और क्रूरता करते हैं। वह वफादारी के लिये प्रसिद्ध हैं पर, क्रोध भी कम नहीं है। चिड़िया, कबूतर, बिल्ली, बाज आदि पक्षी के पास कोई

हथियार नहीं है, तो वे चोंच को मार-मार कर घायल कर देते हैं। क्रोध करके आपस में खूब लड़ते हैं। दो हाथी को जब क्रोध आता है, तो वे सारे जंगल को तहस-नहस कर देते हैं। उनके पास सूंड है, वे क्रोध में अपनी सूंड से प्रहार करते हैं। गाय, भैंस, बैल, सांड, बकरी आदि जानवर भी क्रोध करते हैं और जब ये लड़ते हैं, तो सींगों के माध्यम से एक-दूसरे को घायल कर देते हैं। कभी-कभी झगड़ा इतना बढ़ जाता है कि ट्रैफिक तक जाम हो जाता है। अर्थात् तिर्यंच गति में भी खूब क्रोध किया जाता है। यहाँ नरक के जैसे पूर्ण जीवन नहीं होता पर होता अवश्य है। क्रोध को छोड़ने का उपाय न नरक में है, न तिर्यंच में। हाँ विशेष पुष्ट योग से उपदेश सुनने मिल जाये और समझ में आ जाये, तो अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यान क्रोध छूट सकता है। पर ऐसा करोड़ों में से किसी एक को ही होता होगा। बाकी तो सब कर्मों का फल भुगतते हैं और कर्म बंध करके दुर्गतियों में भ्रमण करते हैं।

मनुष्य गति में क्रोध

नरक गति और तिर्यंच गति के क्रोध करने के संस्कार, आदत मनुष्य गति में, आत्मा के साथ आ गई है। जैसे बहुत से लोगों को गाली देने की आदत पड़ जाती है। वे बात करते-करते बीच में कब गाली दे देते हैं, उन्हें ही पता नहीं चलता। अर्थात् आदत वो चीज है, जो अंजाने में ही हमसे काम करा देती है। बाद में जब पता चलता है तब लगता है गलत है। ठीक ऐसे ही क्रोध की आदत, कई जन्मों की है। इसलिये आदत वश क्रोध कब आ जाता है, पता नहीं चलता। एक जन्म के गाली के संस्कार, झूठ बोलने, शराब पीने के संस्कार, गुटखा खाने के संस्कार छुड़ाना मुश्किल लगता है, तो फिर क्रोध करने के संस्कार कई जन्मों के हैं, इसे छुड़ाना भी अत्यंत दुष्कर कार्य है। पुराने नरक और तिर्यंच के संस्कारों के वशीभूत होकर हम जीवन जियें तो हम इस जनम को भी नरक और पशु की भांति बना लेंगे।

इसलिये मनुष्य जन्म में प्राप्त योग्यता और अवसर का लाभ उठाते हुये हमें क्रोध को छोड़ने का पुरुषार्थ करना चाहिये। एक मनुष्य जन्म ही है जिसमें सफलता मिल सकती है, अन्य योनियों में पुरुषार्थ संभव नहीं हो पाता है। जैन कुल, जिन वाणी, दि. गुरु, उपदेश, इंद्रियों की पूर्णता, स्वास्थ्य सब कुछ मिल गया है। प्रथम तो ये सारी चीजें नहीं मिल पाती हैं। बड़े पुण्य योग से मिली हैं, तो इसका सदुपयोग किया जाये। छोटी-छोटी बातों पर अपनी ऊर्जा खर्च न की जाये, उसे बचाकर रखा जाये।

मनुष्य मेहनत करता है, धन कमाता है, भोजन का सामान लाता है। घर में पत्नी बड़े प्रयास से भोजन बनाती है। फिर भोजन करके पेट तक पहुँचाते हैं। पेट

की मशीन मेहनत करके उसे पचाती है। रस, रुधिर, माँस, मज्जा आदि रूप परिवर्तित करके शक्ति पैदा करती है और मेहनत से एकत्रित की हुई शक्ति को हम क्रोध में खर्च करके व्यर्थ गंवा देते हैं। जैसे आप मेहनत से कमाया पैसा व्यर्थ खर्च नहीं करते, वैसे ही मेहनत से कमाई शारीरिक शक्ति को क्रोध में खर्च नहीं करना चाहिये। हर इंसान लाभ हानि देखता है, तब पैसा खर्च करता है, वैसे ही क्रोध करने में भी लाभ हानि देखना आवश्यक है। तभी आप आत्मा के प्रति ईमानदारी का व्यवहार कर पायेंगे।

क्रोध शक्ति है, उपयोग कोई और करता है

जैसे अग्नि एक शक्ति है, पर उपयोग अन्य वस्तु के लिये किया जाता है। अग्नि का उपयोग अग्नि के लिये नहीं होता। ऐसे ही क्रोध स्वयं के लिये नहीं करता, वह किसी और के लिये काम करता है। क्रोध को क्रोध करके कुछ नहीं मिलता, जो कुछ मिलता है, वह मोह को मिलता है, जो मिलता है, अभिमान को मिलता है, जो कुछ मिलता है, वह लोभ को मिलता है। बेचारा क्रोध तो व्यर्थ में बदनाम हो रहा है। व्यर्थ में ही क्रोध की बुराईयाँ की जा रही हैं। व्यर्थ में ही क्रोध को गालियाँ दी जा रही हैं।

क्रोध बंदूक की भांति है

जैसे कोई बंदूक से किसी को मारे, तो सजा मारने वाले को होती है, बंदूक को नहीं होती। बुराई बंदूक चलाने वाले की होती है, इसका उपयोग करने वाला तो अन्य कषाय है। यदि अन्य कषायों को कम किया जाये, तो क्रोध अपने आप कम हो जायेगा।

जैसे भोजन आपकी पसंद का नहीं बना, तो क्रोध आ गया। क्रोध का आना और क्रोध का व्यक्त करना, परिस्थिति पर निर्भर करता है। यदि पत्नी या माँ ने भोजन बनाया है तब क्रोध का रूप कुछ और होगा। यदि भोजन पड़ोसन ने बनाया है तो रूप कुछ और होगा। और किसी बॉस की पत्नी ने बनाया है, तो रूप कुछ और होगा। प्रथम बात भोजन स्वादिष्ट चाहिये जिह्वा को। जिह्वा सुख में बाधा आई, तो क्रोध आ गया। इसीलिये मनपसंद कपड़े न हों, तो क्रोध आ गया। अर्थात् चक्षु इंद्रिय के सुख की पूर्ति नहीं हुई। गर्मी में लाइट चली जाये और कूलर ए.सी. न मिले, तो स्पर्शन इंद्रिय के सुख में बाधा आई, तो क्रोध आ गया। कहीं से बदबू आ रही है, तो घ्राणेन्द्रिय के कारण क्रोध आया।

किसी ने व्यंग्य कर दिया, अपमान के वचन बोले, तो आपके सम्मान को ठेस लगी और क्रोध आ गया। कोई आपसे आगे बढ़ गया, तो स्वयं को छोटा महसूस किया, तो मान कषाय के कारण क्रोध आ गया। किसी ने आपको डांट दिया, तो क्रोध आ गया। व्यक्त करें न करें पर क्रोध आकर तैयार खड़ा हो जाता है काम करने के लिये। ऐसे 100-50 कारण होंगे जिनकी वजह से क्रोध आया पर क्रोध की वजह से क्रोध आया ऐसा एक भी कारण नहीं होगा। आप कहेंगे सामने वाले के क्रोध के कारण क्रोध आता है, पर लगता है कि क्रोध के कारण क्रोध आया है। सच्चाई ये है कि उसके क्रोध ने आपका अपमान किया है और मान के सम्मान की रक्षा के लिये क्रोध आया है। क्रोध के लिये क्रोध नहीं आया है।

जैसी जड़ होगी वैसा पौधा उसकी डाल, उसकी पत्तियाँ, उसके फूल और उसके फल होंगे। इसी तरह मोह की जड़ जितनी मजबूत होगी, इस मोह के वृक्ष की क्रोध मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय जुगुप्सा (ग्लानि) स्त्रीवेद, पुरुष वेद, नपुंसक वेद कषाय एवं इसका मिथ्यात्व का तना उतना ही मजबूत होगा। हम क्रोध को भगवाना चाहते हैं, पर क्रोध तब तक नहीं भागेगा; जब तक मोह की जड़ को न हटाया जाये। मोह की जड़ पर जब राग द्वेष का पानी डालते रहेंगे, तब तक क्रोध, मान, माया, लोभ में से किसी का कुछ भी बिगड़ने वाला नहीं है। अतः क्रोध को कम करना है, तो मोह को कम करो। मान, माया, लोभ को कम करना है, तो मोह को कम करो, फिर देखिये कैसा चमत्कार होता है।

क्रोध से पूर्वभव और अगलेभव की पहचान

घर में चार बच्चे होते हैं, उनमें से एक को इतना क्रोध आता है कि सारे घर को हिला देता है और एक इतना शांत रहता है कि पता नहीं चलता कि वो घर में भी है। परिवार में कोई-कोई बहुत अधिक क्रोध करके मरने-मारने तक पर उतारू हो जाता है। और यही क्रोध अनेक जीवों की हिंसा करा देता है। अनेक बार जेल चला जाये पर क्रोध करने से बाज नहीं आता है। सब पर क्रोध करके उसे संतुष्टि मिलती है। ऐसा जीव निश्चित ही नरक से आया है, इसलिये क्रोध करने के संस्कार गहरे हैं और भी नरक जैसा वातावरण बना कर रख देता है।

संभल जाये इस क्रोध पर यहीं विराम लगाये, यदि ये क्रोध बुढ़ापे तक साथ चला गया, तो बुढ़ापा खराब कर देगा और मरण के समय भी क्रोध ही रहा, तो यह नरक गति में भेज देगा। अर्थात् क्रोध करने वाला नरक से आया है, यदि नहीं

छोड़ा तो नरक ही जाना पड़ेगा।

देवगति से आया जीव शांत परिणामी होता है, संतुष्ट होता है, जरा-जरा में क्रोध नहीं करता और इसी तरह शांत भाव से जीवन जिये, तो वापिस देव गति में जाने की संभावना हो सकती है। इसलिये भूत वर्तमान, भविष्य को सुधारने के लिये क्रोध को छोड़ना अति आवश्यक है।

देवगति का क्रोध

भगवान महावीर ने देवों के चार भेद बताये। वैमानिक, भवनवासी, व्यंतर और ज्योतिष इन भेदों के अनुसार देवों के ऐश्वर्य में उत्कृष्टता एवं निकृष्टता का पता चलता है। इनमें से वैमानिक देव उत्कृष्ट माने जाते हैं तथा भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिष देवों को देव दुर्गति कहा है। इसी के अनुसार इनके भावों को भी बताया है। वैमानिक देव अधिक क्रोध करने वाले नहीं होते तथा व्यंतरों में क्रोध भी अत्यधिक होता है। वे जल्दी नाराज हो जाते हैं, जल्दी दूसरों का बुरा करने लगते हैं। चंचल, उत्पाती स्वभाव होने से उन्हें इस कार्य में आनंद आता है, पर नरक की अपेक्षा क्रोध कम होता है।

श्रावक की क्षमा

गृहस्थ में रहकर भी श्रावक को क्षमा धर्म का पालन करना चाहिये। श्रावक जब परिवार समाज देश के बीच रहता है, तो उसे कई बार परिस्थिति को संभालने के लिये क्रोध करना पड़ता है, क्योंकि श्रावक अभी विरोधी हिंसा का त्यागी नहीं है। अतः देशरक्षा के लिये, धर्म की रक्षा के लिये, परिवार की रक्षा के लिये उसे क्रोध करना पड़ता है। श्रावक की अवस्था में उसके लिये इतनी छूट भी दी गई है।

श्रावक परिवार में अपने अहंकार के लिये क्रोध न करें, समाज में अपने आपको बड़ा बनाने के लिये क्रोध न करें। यदि वह आपस में साधर्मी बंधुओं से लड़ता है, तो वह गलत है। अपने भाई, पिता, पत्नी से लड़ता है, क्रोध करता है, तो वह गलत है। आपस में कौन सी जाति के जीव लड़ते हैं, आप जानते हैं। अतः श्रावक को लड़ने की भी छूट दी है पर केवल रक्षा के लिये और सामने वाला यदि अपनी गलती मानकर छोड़ देता है, तो वह भी क्षमा करने योग्य है। जब दुश्मन की गलती क्षमा करने योग्य है। पति-पत्नी आपस में गलती हो जाने पर बदले की भावना न रखें। आपस में एक-दूसरे को क्षमा करें। क्रोध आने पर क्षमा भाव रखना प्रभु का संदेश है। क्रोध चार तरह का होता है—

अनंतानुबंधी—पत्थर में खींची रेखा के समान कभी न मिटने वाला। जो भव-भव में भटकाता है। अर्थात् छह महीने के ऊपर आपस में अनबन नहीं करना चाहिये वरना अनंतानुबंधी कषाय हो जाती है।

अप्रत्याख्यानावरण— 3 महीने से ऊपर छह महीने के भीतर यदि कषाय होती है तो वह अप्रत्याख्यानावरण कहलाती है। इसलिये इसे भी छोड़ देना चाहिये। मिट्टी पर खींची गई रेखा के समान।

प्रत्याख्यानावरण—अन्तर्मुर्हुत से ऊपर और 15 दिन के भीतर जो कषाय समाप्त हो जाये वह प्रत्याख्यानावरण है। यह रेत में खींची गई रेखा के समान होती है।

संज्वलन—क्रोध आया और चला गया, यह पानी में खींची गई रेखा के समान है। (इसका काल अन्तर्मुर्हुत है।) ये क्रोध की डिग्री है।

इनमें से श्रावक को प्रारंभ की दो कषाय का त्याग करना चाहिये, तभी उसका क्षमा धर्म पालन करना सार्थक होगा।

उत्तम क्षमा

उत्तम क्षमा को उत्तम महामुनिराज पालन करते हैं। मुनिराज चारों प्रकार के हिंसा के त्यागी हैं। उन पर यदि कोई वार करे, उपसर्ग करे, तो वे बदले में प्रतिकार नहीं करते। अपनी रक्षा का कोई उपाय नहीं करते और जिसने उन पर उपसर्ग किया है, उनके प्रति मन में द्वेष भाव भी नहीं रखते हैं। उसे वे पूर्ण रूप से उत्तम क्षमा प्रदान करते हैं। यह है उत्तम क्षमाँ शास्त्रों में एक नहीं अनेक उदाहरण हैं, पांचों पांडव, पारसनाथ, गजकुमार, भगवान महावीर, कुलभूषण-देशभूषण आदि। श्रावक अवस्था से क्षमा करना प्रारंभ करें, तो उत्तम क्षमा तक एक दिन पहुँच जायेंगे।

क्षमा मात्र मनुष्य तक सीमित नहीं है। क्षमा चारों गति के जीवों से माँगना चाहिये। क्षमा 84 लाख योनियों के जीवों से माँगना चाहिये। क्षमा एकेन्द्रिय, दो, तीन, चार, पंचेन्द्रिय, संज्ञी, असंज्ञी समस्त जीवों से माँगना चाहिये और समस्त जीवों को करना चाहिये तभी उत्तम क्षमा की पूर्णता होगी। क्षमा जाने-अनजाने की गलतियों की भी माँगना चाहिये। क्षमा माँगने का स्थान बहुत लंबा चौड़ा है। हमारे सामने जो है, उससे तो माँगना ही है, पर जो हमारे सामने नहीं है, उससे भी माँगना है।

उपकारी पर क्रोध नहीं आता

जिसने हमारे ऊपर उपकार किया हो, उस पर क्रोध नहीं आता। इसलिये संसार की हर वस्तु के लिये सोचो, ये सब मेरे लिये उपकार है। बारिश हो रही है मेरे लिये उपहार है, धूप, सर्दी, गर्मी, सब मेरे उपकार के लिये है। क्रोध नहीं आयेगा, परिवार वालों के उपकार याद कर लो, क्रोध गायब हो जायेगा।

भगवान की 'डिजीटल' ओंकार ध्वनि

पहले के समय में लोग जेब भरकर पैसा बाजार ले जाते थे और थैला भर कर सामान लाते थे। अब थैला भर कर पैसा बाजार ले जाते हैं और जेब भर के सामान लाते हैं। आज हर वस्तु का सूक्ष्मीकरण हो गया है। इसका रूप अतितीव्र गति से सूक्ष्म हो रहा है। वैज्ञानिकों ने पुद्गल पर अनुसंधान करके खोज करने में महारथ हासिल कर दिया है और उसका लाभ आज सारी दुनिया ले रही है।

एक छोटे से डिब्बे में सारी दुनिया को इकट्ठा कर दिया है। एक मोबाइल नाम की डिब्बी में सारे व्यापार का हिसाब, सारे स्टाफ का हिसाब, बिजली का, पानी का बिल, सारे बाजार की खरीददारी। उसी मोबाइल में सारे रिश्तेदार, सारे मित्र, सारा परिवार, मनोरंजन के साधन, धर्म का साधन, प्रचार विज्ञापन, कुछ भी नहीं बचा मोबाइल से। अर्थात् एक डिब्बी में सारी दुनिया को कैद कर दिया।

वैसे देखा जाये तो सारी चीजें हैं तो आकाश में और मशीन के माध्यम से मोबाइल पर दिखती है। खाली आकाश में सूक्ष्म किरणें और तरंगों के माध्यम से रखा जाता है। जितना-जितना भौतिक ज्ञान का विकास हुआ, उतनी-उतनी दुनिया सूक्ष्म होती चली गई। संसार में मनुष्यों की भीड़ में वस्तुओं को सूक्ष्म करते चले जा रहे हैं। यही प्रकृति का नियम भी है। खोज करने वाला चाहिये। वैज्ञानिकों ने इसे साफ्टवेयर नाम दिया है। कम्प्यूटर जब से आया है, तब से लाखों मनुष्यों को नौकरी से निकाल दिया। क्योंकि एक कम्प्यूटर जब दस का काम कर रहा है, तो व्यर्थ तनखा क्यों दें।

इसी सिद्धांत को जब धर्म में लगाया जाये तो आश्चर्य नहीं लगता। जब भगवान तप करते हैं, कर्मों की निर्जरा करते हैं, तब उससे अनेक समृद्धियाँ प्राप्त होती हैं। जिसमें एक अंतर्ध्यान ऋद्धि भी है। अर्थात् इस स्थूल शरीर में रहकर भी अदृश्य हो जाते हैं। शरीर को हल्का भारी कर सकते हैं। आकाश में चलने

की शक्ति आ जाती है। जैसे-जैसे कर्म झरते हैं; वैसे-वैसे आत्मा के साथ शरीर हल्का होता जाता है।

चार घातियाँ कर्म को नाशकर जब केवल ज्ञान की प्राप्ति होती है, तब भगवान मुख से तो मौन रहते हैं, पर शरीर के रोम-रोम से दिव्य ध्वनि निकलती है। जिसमें हर प्रश्न के उत्तर होते हैं। एक ध्वनि में से उत्तर निकालना हर व्यक्ति के लिये संभव नहीं है। जैसे सिंहनी का दूध स्वर्ण पात्र में ही ठहरता है, वैसे ही भगवान की वाणी को गणधर ही समझ पाते हैं, जो विशेष ज्ञानी होते हैं। देवता अपनी शक्ति से 18 महाभाषा और 700 लघुभाषा के रूप में परिवर्तित करके सभी जीवों के समझने योग्य बना देते हैं।

जैसे आकाश की तरंगों में हर वैज्ञानिक ने संपूर्ण चित्र आवाज अक्षर को स्थिर कर दिया। वैसे मात्र ओंकार ध्वनि में से सारा आगम सिद्धांत व्यवहार और अध्यात्म का ज्ञान निकाला जा सकता है। अर्थात् भगवान की दिव्य ध्वनि डिजीटल है। वाणी सूक्ष्म हो गई, शरीर परम औदारिक हो गया। अर्थात् स्फटिक के समान जिसकी परछाई भी नहीं पड़ती और आत्मा तो इतनी सूक्ष्म है कि वैज्ञानिक आज तक नहीं पकड़ पाये। आज वे ऐसी मशीन नहीं बना पाये कि जिससे आत्मा को देखा जा सके। वे केवल पुद्गल को ही पकड़ पाये हैं। कर्मो रहित सूक्ष्म आत्मा मोक्ष में जाकर निवास करती है।

जेब में मनी का
हीरे की कनी का
भगवान की दिव्य ध्वनि का
बड़ा ही महत्व है

घर में समृद्धि का
मंत्र की सिद्धि का
तपस्या में ऋद्धि का
बड़ा ही महत्व है

जीवन में जरा का
सतियों में अनंगशरा का
कर्मों की निर्जरा का
बड़ा ही महत्व है

आत्मा के लिये गात्र का
स्कूल में छात्र का
सिंहनी के दूध के लिये स्वर्णपात्र का
बड़ा ही महत्व है

जीवतत्व जीवद्रव्य में अंतर

तत्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनं

त. सू. 1 अध्याय

जैन धर्म का चहुँमुखी ज्ञान देने वाला तत्वार्थसूत्र ग्रंथ के प्रथम अध्याय के प्रथम सूत्र में आचार्य उमास्वामी जी ने सम्यग्दर्शन को परिभाषित करते हुये कहा है। तत्त्वों पर श्रद्धान करने से सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है। फिर सात तत्त्व का सूत्र है—1. जीव, 2. अजीव, 3. आस्रव 4. बंध, 5. संवर, 6. निर्जरा, 7. मोक्ष। सबसे पहला है जीव। जीव, तत्त्व में तो है ही, पर जीव द्रव्य में भी है, जीव पदार्थ में भी है, जीव वस्तु में भी है अर्थात् जीव तत्त्व के श्रद्धान से सम्यग्दर्शन होगा। जीव द्रव्य से नहीं। अंदर में जिज्ञासा होती है।

आखिर क्यों?

इसके एक नहीं अनेक कारण हैं। जीवनतत्त्व पर श्रद्धानं ही सम्यग्दर्शन को क्यों जन्म देता है।

तत्त्वों की व्याख्या मात्र स्वयं के लिये

जैसा कि आचार्यों ने बताया कि जहाँ केवल स्वयं को जानने की जिज्ञासा हो वहाँ जीव तत्त्व ही उपयोग में आता है। यदि स्वयं की आत्मा को नहीं जाना और सारे संसार को जान लिया तो सम्यग्दर्शन नहीं होगा। केवल स्वयं की आत्मा को जान लिया सारे संसार को नहीं जाना तो सम्यग्दर्शन हो जायेगा। जब जीव तत्त्व को समझने बैठेंगे तो अपने जीवतत्त्व से संबंधित और क्या-क्या है उसे जानना भी जरूरी है। इस कारण से 6 अन्य तत्त्व को जानना जरूरी है।

अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा मोक्ष। एक जीव के साथ संसार में ये बाकी के तत्त्व साथ हैं। इन्हें जानना आवश्यक था। स्वयं का कर्म, स्वयं का शरीर जो

कि पुद्‌गल है पर हमारे जानने के लिये अजीव तत्त्व है। स्वयं के कर्मों का आना आस्रव है, स्वयं के कर्मों का आत्मा के साथ संबंध बंध है, कर्मों का रुकना संवर, कर्मों का झड़ना निर्जरा और समस्त कर्म का छूट जाना मोक्ष है।

जीव तत्त्व की यानी स्वयं की संसार यात्रा करते हुये मोक्ष तत्त्व तक पहुँचना। जीव तत्त्व को मोक्ष तत्त्व की प्राप्ति करनी है। यह हमारा लक्ष्य है। जो लक्ष्य है वह हमारा निजी कार्य है। तत्त्व का विषय स्वयं तक सीमित है। तत्त्व में पर की व्याख्या नहीं है, अनंत संसार में मात्र स्वयं को जानना उपादेय है। अनंत संसार को जानने से मोक्ष नहीं होगा, स्वयं को जानने से मोक्ष होगा। संसार का हर जीव वह स्वयं के लिये जीवतत्त्व है।

6 द्रव्य की व्याख्या में सारा संसार है

तत्त्व यदि मात्र स्वयं के विषय में बताता है, तो द्रव्य समस्त संसार के विषय में बताता है। यदि जीव द्रव्य का वर्णन होगा, तो उसमें तीनों लोक के जीव समाहित हो जायेंगे। तीन लोक में और कितनी वस्तुएं हैं, द्रव्य है, पर दूसरे के लिये जीव द्रव्य है। स्वयं के लिये हमारा शरीर अजीव तत्त्व है, पर दूसरे के लिये पुद्‌गल द्रव्य है। द्रव्य का विषय असीमित है। द्रव्य को नहीं जाना, तो मोक्ष मिल सकता है, पर तत्त्व को नहीं जाना, तो मोक्ष नहीं मिल सकता। जाति की अपेक्षा द्रव्य 6 हैं।

जीव, पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल। किन्तु संख्या की अपेक्षा द्रव्य अनंत है। अतः प्रभु ने सात तत्त्व के श्रद्धान से सम्यग्दर्शन होता है, ऐसा है। मोक्ष स्वयं को जानने से होता है। पर को कितना भी जानने से वो पूरा नहीं हो सकता। स्वयं को जानने से पर अपने आप जाना जाता है।

नींबू के सत्व का
वस्तु के महत्व का
धर्म में सात तत्व का
बड़ा ही महत्व है

जीवों में भव्य का
शिष्यों में एकलव्य का
धर्म में छह द्रव्य का
बड़ा ही महत्व है

पक्षियों के विचरने का
पशुओं में चरने का
तत्व द्रव्य को समझने का
बड़ा ही महत्व है

स्व अर्थ, अर्थात् स्वार्थ में कुछ करना है

वर्तमान में एक शब्द ने इंसान को परेशान कर रखा है। उस शब्द का संसार की ओर से अर्थ निकालें तो कुछ और होता है। उसी शब्द का धर्म की ओर से अर्थ निकालें, तो कुछ और होता है। संसार में उसका अर्थ नकारात्मक है और धर्म में उसका अर्थ सकारात्मक है। शब्द किसी को अच्छा लगता है, किसी को बुरा। तो चलिये इस शब्द की गहराई में उतरने का प्रयास करें।

स्वार्थी न बनें

अक्सर लोगों से कहते सुना है कि वो बड़ा स्वार्थी है, अपना काम निकल गया, तो भाग गया। कहने वाले की बात भी सही है क्योंकि संसार के कार्य एक दूसरे से मिलकर होते हैं। सहयोग, सद्भावना से संसार में सुख बढ़ता है। बिना जान पहचान के किसी की भी सहायता कर देना परोपकार है। फिर तो जिसने आपके लिये बहुत कुछ किया है, उसके लिये, समय पर मुख मोड़ लेना स्वार्थ की ही श्रेणी में आयेगा। जो कि धर्म नहीं अधर्म है।

जब देने के भावों में कमी आने लगे तो प्रकृति की ओर देखना चाहिये। अर्थात् सूर्य दिन भर बिना स्वार्थ के प्रकाश देता है। नदियाँ नीर देती हैं और मेध तो तुम्हारे घर और खेत में जाकर बरसते हैं। वृक्ष फल और अन्न देते हैं, लेकिन बदले में कभी कुछ नहीं माँगते हैं। यह विचार करते ही हमारे अंदर उपकार भावना प्रबल हो जायेगी। स्वार्थी पन कम हो जायेगा। भगवान हमें उपदेश देते हैं। बिना स्वार्थ के गुरु हमें सत् राह दिखाते हैं, बिना स्वार्थ के तो हमें भी दिन में एक दो काम करना चाहिये। अर्थात् संसार की दृष्टि में स्वार्थी नहीं बनना चाहिये। जिनके हाथ केवल अपने खाने के लिये होते हैं, बेकार है। जिसने अपने साथ दूसरों को खिलाया है। इन हाथों को परोपकार में लगाया है, उसका जीवन सार्थक है।

स्वार्थी बनिये

धर्म स्वार्थी बनने को कहता है, पर कैसा स्वार्थी बनना चाहिये, यह समझना आवश्यक

है। वरना अनजाने में खाने की दवाई लगाओगे, और लगाने की दवाई खा लोगे, तो गड़बड़ हो जायेगी। इसलिये शब्दों की गहराई में जाना आवश्यक हे।

स्व—आत्मा

अर्थी—हित करने वाला

शास्त्रों में हर जगह स्व आत्मा लिया है। स्वभाव (आत्मा का भाव) स्वदेश (मोक्ष) स्वामी (स्वयं की शुद्ध आत्मा को प्राप्त करने वाले भगवान)। इन सभी शब्दों में स्व का अर्थ आत्मा ही है। इसी तरह स्व अर्थी यानी (अपनी आत्मा का हित करने वाला) इतना सुन्दर अर्थ देता है, यह स्वार्थी शब्द। इस अर्थ को समझने के बाद लगता है कि सारे संसार को स्वार्थी बनना आवश्यक है। बिना स्वार्थी बने सच्चा सुख प्राप्त नहीं हो सकता।

भगवान कुंथुनाथ ने इस शब्द को सार्थक कर दिया है। अर्थात् उन्होंने अपनी आत्मा के हित के लिये कार्य किया और सिद्ध पद को प्राप्त किया।

निकम्मा

ऐसे ही एक शब्द निकम्मा सुनने में बड़ा गलत लगता है। यदि किसी को बोल दें, तो वह बुरा मान जाता है। पर इस शब्द से सिद्ध को संबोधित किया है, आचार्य नेमिचंद्र स्वामी ने। द्रव्य संग्रह की गाथा में लिखा है—

णिक्कम्मा अट्ठगुणा, किंचूणा चरम देहदो सिद्धा।
लोयग्गठिदा णिच्चा, उप्पादवएहिं संजुत्ता।

अर्थ—निकम्मा है आठ गुणों सहित, है चरम देह से किंचित् न्यून है, सिद्ध है, उत्पाद, व्यय, धौब्य से युक्त है।

प्रथम शब्द निकम्मा यानी जिनके कर्म निकल गये हों निष्कर्म हो गया हो। कर्म रहित जीव को निकम्मा कहते हैं। इतना सुंदर अर्थ शब्द का है। ऐसे पढ़कर ऐसा लगता है कि निकम्मा हम कब बनेंगे। संसार में यदि सभी जीव दुःखी हैं, तो कर्मों के कारण। यदि कर्म हटें तो दुःख अपने आप हट जायेगा।

भगवान कुंथुनाथ ने सांसारिक बाहर के छोटे-छोटे दुःख दूर नहीं किये, बल्कि उन्होंने दुःख की जड़ कर्मों को ही समाप्त कर दिया। और अनंत सुख में लीन हो गये। उसी सुख की कामना भक्तों को है। इसलिये यह कुंथुनाथ विधान भक्तिवश लिखा गया। शिखर जी में कुंथुनाथ भगवान की टोंक के दर्शन सर्वप्रथम होते हैं। नाम लेते ही मन शिखर जी पहुँच जाता है। ऐसे कुंथुनाथ भगवान का विधान करके अपना जीवन कृतार्थ करें।

परम विदुषी लेखिका आर्यिका रत्न श्री 105 स्वस्ति भूषण माता जी द्वारा रचित कृतियां

श्री जिनपद पूजांजलि (विशेष कृति)

विधान संग्रह

1. श्री कल्पद्रुम विधान 2. श्री इन्द्रध्वज विधान 3. श्री सिद्धचक्र विधान 4. श्री सम्यक् विधान संग्रह 5. श्री मनुष्य लोक विधान 6. श्री श्रुत स्कन्ध विधान 7. श्री चौबीसी विधान 8. श्री नवग्रह शांति विधान 9. श्री कल्याण मंदिर विधान 10. श्री दश लक्षण विधान 11. श्री पंचमेरू विधान 12. श्री ऋषि मंडल विधान 13. श्री कर्म दहन विधान 14. श्री समवशरण विधान 15. श्री चौंसठ ऋद्धि विधान 16. श्री यॉग मंडल विधान 17. श्री पंच परमेष्ठी विधान 18. श्री पंच कल्याणक विधान 19. श्री वास्तु शुद्धि विधान 20. तीर्थकर विधान संग्रह 21. श्री पंच बालयति विधान 22. श्री सम्मेद शिखर विधान 23. श्री सोनागिर विधान 24. श्री सिद्धक्षेत्र गिरनार विधान 25. श्री आदिनाथ विधान 26. श्री पद्मप्रभु विधान 27. श्री चन्द्रप्रभ विधान 28. श्री वासुपूज्य विधान 29. श्री विमलनाथ विधान 30. श्री शान्तिनाथ विधान 31. श्री मुनिसुव्रतनाथ विधान 32. श्री नेमिनाथ विधान 33. श्री पार्श्वनाथ विधान 34. श्री महावीर विधान 35. श्री जम्बू स्वामी विधान 36. श्री भक्तामर स्तोत्र विधान, 37. श्री नन्दीशवरद्वीप लघु विधान, 38. श्री रत्नत्रय विधान, 39. श्री तीर्थंकर विधान संग्रह भाग -1, 40. श्री तीर्थंकर विधान संग्रह भाग-2, 41. श्री चरित्र शुद्धि विधान 42. श्री संभवनाथ विधान, 43. श्री सोलहकारण विधान, 44. श्री सुमतिनाथ विधान, 45. श्री अभिनंदन नाथ विधान, 46. श्री कुन्थुनाथ विधान, 47. श्री अजितनाथ विधान

काव्य संग्रह

1. मेरी कलम से 2. भजन संग्रह 3. भजन सरिता 4. अमृत की बूंदे 5. श्री सम्मेद शिखर चालीसा 6. बड़ा ही महत्व है 7. आरती ही सारथी 8. जिन ज्ञान किरण 9. भक्ति संग्रह 10. काव्य वाटिका (भाग-1, 2) 11. श्री भक्तामर जी पाठ (हिन्दी) 12. प्रभु भक्ति की पोटली (चालीसा संग्रह) 13. भक्ति पुंज 14. आत्मा की आवाज 15. विनयांजलि 16. श्री सहस नाथ स्तोत्र (हिन्दी रुपान्तरण) 17. पुण्य वर्धिनी 18. आचार्यो की प्रभु भक्ति (हिन्दी पद्यानुवाद) 19. भक्ति की संम्पदा (स्तोत्र संग्रह)

पूजन संग्रह

1. श्री सम्मेद शिखर टोंक पूजन 2. दीपावली पूजन 3. श्री आदिनाथ पूजन एवं चालीसा (रानीला) 4. श्री आदिनाथ पूजन अतिशय क्षेत्र (चाँदखेड़ी) 5. पद्म प्रभु पूजन (शाहपुर) 6. श्री चन्द्रप्रभ जिन पूजन संग्रह (सोनागिर जी) 7. श्री चन्द्र प्रभु पूजा (अतिशय क्षेत्र, तिजारा जी) 8. श्री चंद्रप्रभ चौबीसी जिनालय पूजन (कैराना) 9. श्री वासुपूज्य जिन पूजन संग्रह (सिद्धक्षेत्र चंपापुरजी) 10. शांतिनाथ पूजन (सूर्य नगर) 11. श्री नेमीनाथ पूजन संग्रह (सिद्धक्षेत्र गिरनार जी) 12. श्री पार्श्वनाथ पूजन एवं चालीसा 13. पार्श्वनाथ पूजन (जलालाबाद) 14. श्री पार्श्वनाथ, हांसी अतिशय क्षेत्र 15. अतिशय क्षेत्र बड़ागांव पूजा 16. श्री महावीर जिन पूजन संग्रह 17. स्वस्ति जिन अर्चना (सिद्ध क्षेत्र पावापुरजी) 18. श्री गोम्टेश्वर बाहुबली स्वामी विनयांजलि 19. कुंदकुंद स्वामी पूजा संग्रह, बारा (राजस्थान) 20. गुरू अर्चना (आ. 108 सन्मतिसागर जी) 21. श्री शांतिनाथ पूजा संग्रह (झालरापाटन) 22. श्री मुनि सुव्रतनाथ पूजन, भजन, चालीसा (जहाजपुर) 23. श्री मुनि सुव्रतनाथ पूजन एवं चालीसा (किरठल)

गद्य संग्रह

1. दीक्षा कठिन परीक्षा 2. जैन त्यौहार कैसे मनायें ? 3. प्रतिक्रमण (किये अपराध जो हमने) 4. स्वस्ति आत्म बोध 5. राग से वैराग्य की ओर 6. मुक्ति सोपान (धार्मिक सांप सीढ़ी) 7. श्री ऋषभदेव अनुशीलन 8. नानी की कहानी (भाग-1,2,3) 9. प्रभावना प्रवाह (भाग-1, 2) 10. आओ दीपावली पूजन करें 11. दीपावली कैसे मनायें। 12. टर्निंग पॉइण्ट (प्रवचन संग्रह) 13. वीतरागी का आकर्षण 14. ऊँ नमः सबको क्षमा 15. आहार को समझे औषधि 16. स्मार्ट कौन? 17. आप V.I.P. है